Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका

सितंबर १९७५

18/9/75
गुरुकुल कांगड़ी

राजेंद्रसिंह बेदी
हरिशंकर परसाई
गयास अहमद गद्दी
दीप्ति खंडेलवाल
श्रीनिवास उद्गाता
महेंद्रनाथ
फ़िक्र तौंसवी
श्रवणकुमार वर्मा
चंद्रा औलक
सुकीर्ति गुप्ता
मेहरुन्निसा परवेज़

टाइम्स ऑफ इंडिया प्रकाशन १ रुपया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

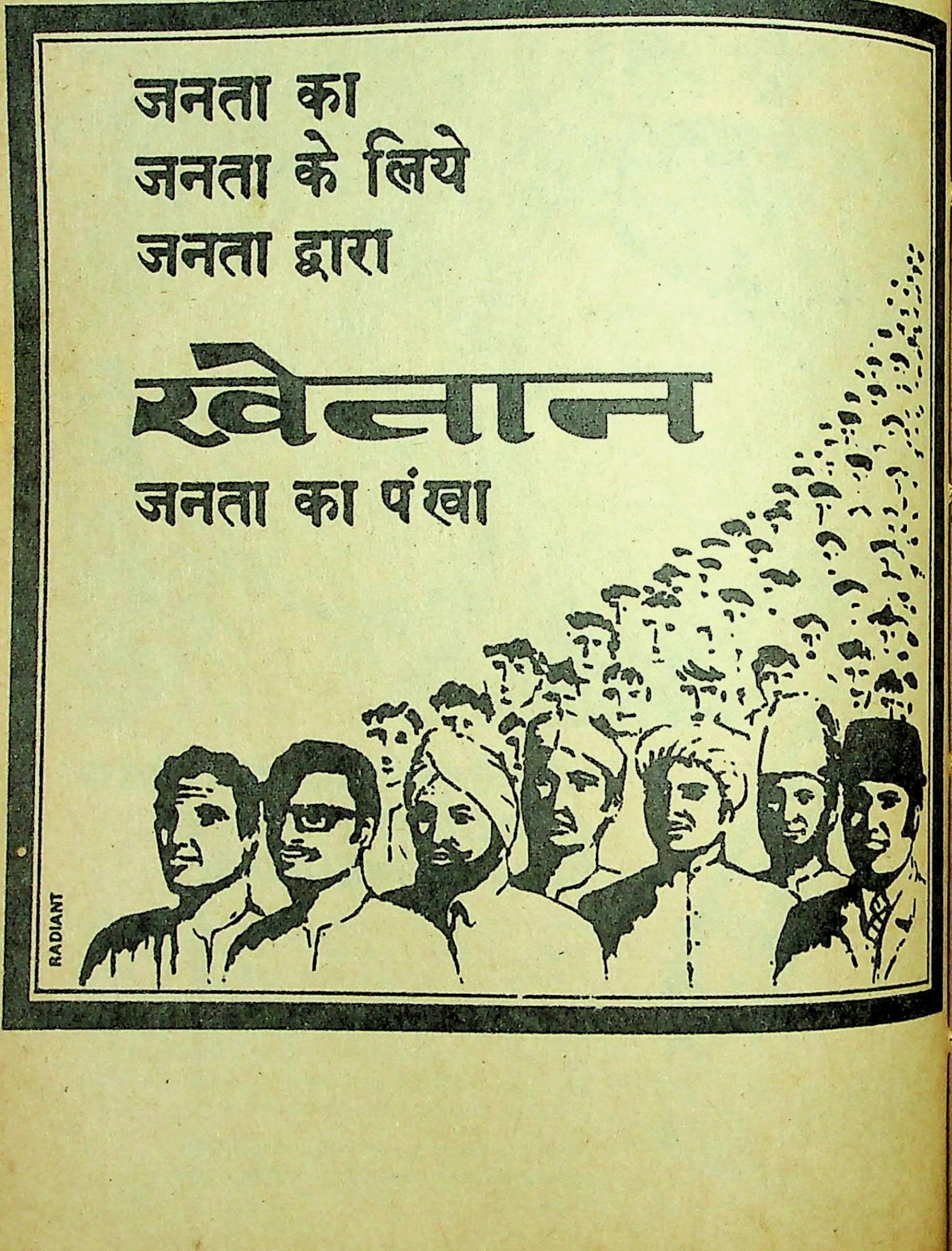

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम आपके सहयोग से परिपक्वता-दावों का भुगतान अधिक गति से कर सकेंगे

६४,८८९ आवश्यकताओं की पूर्ति के अभाव में ११९१ लाख रुपयों के दावों का भुगतान रुका हुआ है।

३,२४,००० आवश्यकताओं की पूर्ति होने के कारण ८१२४ लाख रुपयों के दावों का भुगतान हो चुका है।

पालिसी की अवधि पूर्ण होने पर दावों के भुगतान में देरी होने का एक कारण यह है-बीमेदारों द्वारा आवश्यकताओं की पूर्ति समय पर न होना।

जीवन बीमा निगम सामान्यतः डिस्चार्ज वाऊचर बीमेदार के पास परिपक्वता-तिथि के एक महिने पहले भेज देता है। अगर वाउचर ठीक तरह से न भरा हो और पालिसी के साथ निगम के पास न भेजा हो तो दावे के भुगतान में देरी हो जाती है।

यदि आपकी पालिसी की मियाद पूरी हो चुकी हो और यदि आपको डिसचार्ज वाउचर न मिला हो (१ प्रतिशत मामलों में मशीन या कर्मचारी की त्रुटी से ऐसा हो जाता है) तो तुरन्त निगम के उस कार्यालय से सम्पर्क स्थापित कीजिए जहाँ से आपको सेवा मिलती थी।

निगम द्वारा भेजे गये डिस्चार्ज वाउचर बीमेदारों को नही मिलते, इसकी वजह यह है कि बीमेदार या तो अपनी पुरानी जगह छोड़कर नई जगह पर चले जाते हैं या पते के हेरबदल की ईत्तला निगम को देना भूल जाते हैं। ऐसे मामलों में निगम कर ही क्या सकता है।

१९७३-७४ में ४०३४ बीमेदारों का पता निगम को मालूम न होने के कारण दावों का भुगतान बीमेदारों को न हो सका।

१९७३-७४ में डिस्चार्ज वाउचर या पालिसी-दस्तावेज न मिलने के कारण ५१,५५२ पालिसियों का याने ३९ प्रतिशत परिपक्वता दावों का भुगतान न हो सका।

आवश्यकताओं की पूर्ति का मतलब है दावों का शीघ्र भुगतान।

सामान्यतः डिस्चार्ज वाउचर ठीक तरह से भरने और पालिसी के साथ भेजने पर भुगतान जल्द होता है।

१९७३-७४ में ८१२४ लाख रुपयों के ३२४,००० परिपक्वता-दावों का भुगतान हुआ।

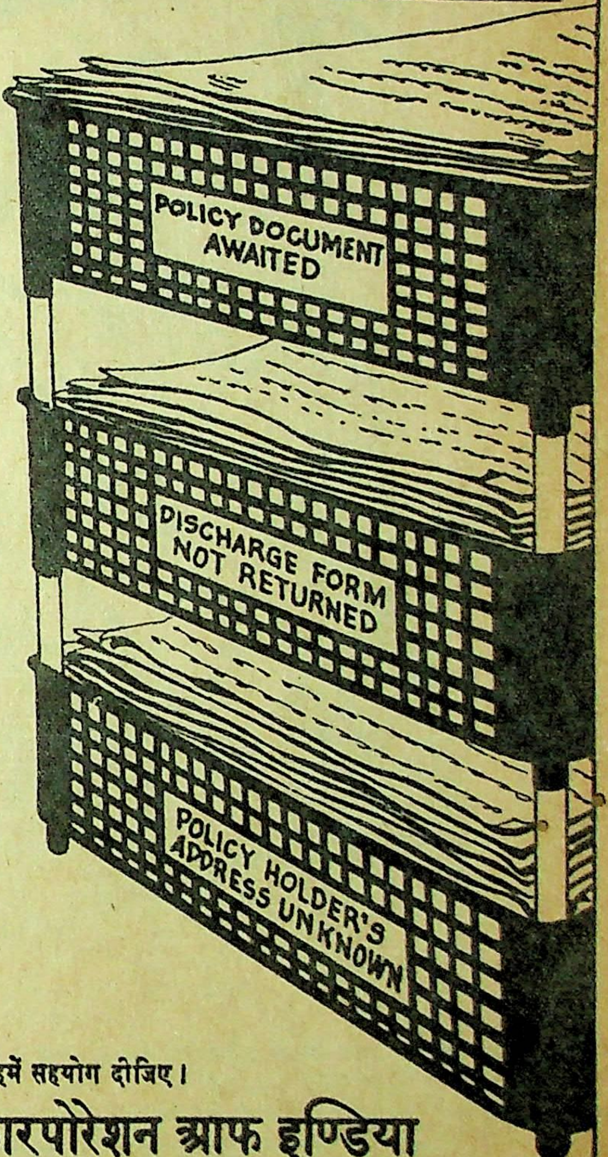

आपको अच्छी सेवा करने के लिए आप हमें सहयोग दीजिए।

लाइफ इन्श्योरेन्स कारपोरेशन आफ इण्डिया

RADEUS/LIC/AS-9

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऑप्टिकल व्हाइटनर युक्त नया स्वस्तिक डिटर्जेण्ट धुलाई का पाउडर आपके कपड़ों को जगमग साफ़-सफ़ेद धोता है. महँगे उत्तम डिटर्जेण्ट धुलाई के पाउडरों की तरह 'स्प्रे-ड्राइड' होने के कारण यह पानी में बहुत जल्दी घुल जाता है. और धुलाई के बाद कपड़े जगमगाने, चमचमाने लगते हैं. इससे हर प्रकार के वस्त्र धोये जा सकते हैं. और फिर भी हर १ कि.ग्रा. पैक पर ६ रु. की बचत! यह १ कि.ग्रा. और ½ कि.ग्रा. के पॉलिपैक में मिलता है.

कम से कम दाम...ज़्यादा से ज़्यादा काम

Shilpi-DM 9A/75 hin

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका

कहानियों और कथा-जगत की संपूर्ण पत्रिका

सितंबर; १९७५
वर्ष : १५; पूर्णांक : १७३

उर्दू कहानियां

राजेंद्रसिंह बेदी : चश्मे बददूर १२
फ़िराक़ तौंसवी : मीर बीमार हुए २०
गयास अहमद गद्दी : परिंदा पकड़ने वाली गाड़ी २४
श्रवणकुमार वर्मा : कांच का आदमी ३२
महेंद्रनाथ : बड़ा आदमी ३६

विशिष्ट लेख

आज का उर्दू कथा-साहित्य : काजी अब्दुल सत्तार १०

हिंदी कहानियां

हेमांगिनी रानडे : उसकी हत्या ४४
मेहरुन्निसा परवेज : गिरवी रखी धूप ४८
चंद्रा औलक : बोझ ६४
दीप्ति खंडेलवाल : निर्बंध ७२
सुकीर्ति गुप्ता : समानांतर ८४

लघु कथाएं

अश्रु और हास्य : १९
दृष्टिभेद : १९
नमकहराम : ४७
दुकानदारी : ६०
अनुरक्ति : ६०
पारसमणि : ६०
सवालहीन जवाब : फिलासफी : ६१
स्वर्गीय कुत्ते : ६१
परदे के पीछे : ६१
जरूरत : ६१
अन्नपूर्णा : ७७
वो विद्वान : ८३

लोक कथाएं

चीते से ब्याह २३
वरदान ५१

गोष्ठी रिपोर्ट

चौथा समांतर लेखक सम्मेलन : ८९

●

आद्य कथाकार (उड़िया) : श्रीनिवास उद्गाता ५२

स्थायी स्तंभ

पाठकीय : ८
कबिरा खड़ा बजार में : हरिशंकर परसाई ६२
कृतियां : राही मासूम रजा, रामदेव आचार्य ७८
गुस्ताखियां : प्रकाश पंडित ८०
व्यंग्य विचार : कैलाश सेंगर ९१

● आमुख : नंदन

संपादक : कमलेश्वर

● मुख्य उप संपादक : आनंद प्रकाश सिंह

● उप संपादक : अवधनारायण मुद्गल, सुदीप

● कार्यालय सहयोगी : श्रीनाथ पांडेय, देवचंद्र झा, भिकाजी शिर्के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकीय

(संयोजन : न. मा.)

● श्री सुप्रेम सिंह गुरुंग, किमिन (आसाम) से लिखते हैं:

समांतर कहानियां उन कड़वे-मीठे पर स्वादिष्ट देशी व्यंजनों जैसी हैं जिनका स्वाद—अनुभव हम लोगों को है. यह मात्र लेखकों का न हो कर पाठकों का भी है. कहानियों में आज के वास्तविक जीवन के वास्तविक चित्र हैं. . . मेरे पिताजी ने भी **'सारिका'** पढ़ना प्रारंभ कर दिया है. वे आसाम राइफल्स के भूतपूर्व आनरेरी कैप्टन हैं. आपको आश्चर्य होगा, वे लघु कथाओं को छोड़ कर कहानियां नहीं के बराबर पढ़ते हैं, उन्हें काल्पनिक व कोरी समझते हैं. फिर भी एक कालम है जिसको वे सत्य मानते हैं और चाव से पढ़ते हैं. वह है **'कबिरा खड़ा बजार में.'** यह उनका भ्रम है या परसाईजी की कलम का जादू है, आप ही बताइए! . . .समांतर कहानी विशेषांक का प्रकाशन आपका एडवेंचर है जिसके लिए मैं आपको और आपके सहायकों को बधाई देता हूं. □

● श्री चंद्रमोहन दीक्षित, राजकीय पॉलीटेकनिक, कानपुर से लिखते हैं:

'सारिका' का नवलेखन अंक खंड १ पढ़ा. नये लेखकों को आशातीत सफलता मिली है. सभी कहानियां सामयिक होने के साथ-साथ आम आदमी के दर्द, विसंगत परिस्थितियों में जीने की दुरूहता, व्याप्त कुंठा एवं संत्रास का गहराई से अहसास कराती हैं. आज के सामान्य जन का सामाजिक परिवेश चारों तरफ से इतना दबा हुआ है कि वह कोई भी सही कदम उठाने में असमर्थ है. सामाजिक परिस्थितियां उसकी व्यक्तिगत मजबूरियां बन गयी हैं. **'परिक्रमा'** (गौरीशंकर कपूर), **'अंधे कुंए का रास्ता'** (अरुण मिश्र) और **'वापसी'** (मंदा पांडे) में पात्र व्यवस्था के विरुद्ध लड़ने के बाद हार कर पुनः यथास्थिति को स्वीकारते हैं. **'कुछ कदमों का फासला'** (प्रभुनाथ सिंह आजमी), **'विक्षिप्त'** (अजय अग्रवाल), **'मशीन'** (शैलाभ) में आम आदमी का उत्पीड़न है. **'जंगल में'** (ज्ञान चतुर्वेदी), **'अगिहानें'** (सुरेंद्र सुकुमार), **'गिद्ध'** (नर्मदेश्वर) और **'तह के नीचे'** (कृष्णकांत प्रवासी) भी सशक्त एवं अच्छी कहानियां हैं. □

● श्री रामसकल सिंह 'प्रकाश', चोरमा (बिहार) से लिखते हैं :

समांतर कहानी विशेषांक-९ की बड़ी प्रतीक्षा थी. मिलते ही खो गया उसमें. सचमुच ही आप आम आदमी के आसपास की कहानियों का चयन करते हैं. मेरी बधाई स्वीकारें. इस अंक की **'विक्षिप्त'**, **'सलाखों के आरपार'** (उषा व्यास 'छवि'), **'जंगल में'** एवं **'फफोले'** (सच्चिदानंद धूमकेतु) शीर्षक कहानियां बहुत ही पसंद आयीं. **'फफोले'** में लेखक ने पूंजीवादी मनोवृत्ति का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए आम आदमी को उससे खबरदार रहने की चेतावनी ही नहीं दी है, बल्कि उस सड़ी हुई मनोवृत्ति के सही इलाज का दिशानिर्देशन भी किया है. . .सही माने में **'फफोले'** अपने समय के संपूर्ण क्षणों का सही दस्तावेज है. **'मेरा पन्ना'** स्तंभ के अंतगत आप सामंती मनोवृत्ति के विरुद्ध जिस तल्खी के साथ अपने विचारों को प्रकट करते आ रहे हैं, वह प्रशंसनीय है. □

● श्री अनिल कुमार सिंह, खजुरार (बिहार) से लिखते हैं :

बहुत लंबी प्रतीक्षा के बाद **'सारिका'** का समांतर कहानी विशेषांक—९ मिला. यह अंक कुल मिला कर अपने नाम को सार्थक करने वाला रहा. वस्तुतः **'सारिका'** भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में एक महत्वपूर्ण क्रांति की सूचक है. **'सलाखों के आरपार'** कहानी सचमुच हमारे अंतरमन को छू लेती है. **'मशीन'** तथा **'जंगल में'** कहानियां भी अति सराहनीय हैं. □

● श्री सुरेंद्रनाथ मिश्र 'अगम' हनुमना, रीवा (म. प्र.) से लिखते हैं:

'सारिका' का समांतर कहानी विशेषांक—९ सचमुच विविध स्वरों की सच्ची अनुगूंज है. समाज के दुखों के जितने विभाजित प्रकार हैं, **'सारिका'** उनका प्रतिबंबन करने के कारण कथाजगत की संपूर्ण पत्रिका होने का सही मानदंड प्रस्तुत कर रही है. प्रादेशिक और क्षेत्रीय सीमा में देश के हर भाग से यथार्थपरक राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व्यवहारगत हलचलों-घटनाओं का चित्र जो जून अंक की इन सोलह कहानियों एवं लघुकथाओं न प्रस्तुत किया है, उसके प्रति निर्णय-संदर्भ में तो यही उक्ति ठीक है कि 'को बड़ छोट कहत अपराध. . .' फिर भी न जाने मन को क्यों कुछ विशेष जंची कहानियां हैं **'सलाखों के**

सभी वर्गों की पत्रिका

● श्री कुमार, संपादक 'तीर', गोड्डा, संताल परगना (बिहार) से लिखते हैं :

. . .पिछले एक वर्ष से **'सारिका'** में काफी बदलाव दीख रहा है. इस बदलाव को मद्देनजर रखते हुए आज यह कहा जाने लगा है कि **'सारिका'** अब संपूर्ण हिंदी वर्ग, देश और काल की पत्रिका हो चुकी है. अब यह पत्रिका सिर्फ बुद्धिजीवियों के लिए ही नहीं, बल्कि मेहनतकश मजदूरों, श्रमिकों एवं सर्वहारा वर्ग के लिए भी बहुत उपयोगी है. **'सारिका'** अब महलों, क्लबों और पुस्तकालयों में ही नहीं बल्कि झोपड़ियों, कल-कारखानों, रिक्शाचालकों एवं धोती-कुरताधारी किसानों के हाथों में भी दीखने लगी है. मैं **'सारिका'** के इस साहसिक परिवर्तन का हृदय से स्वागत करता हूं. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरपार', 'यही—सच—जगह' (रामलगान यादव) और 'अगिहाने'. रहा 'मेरा पन्ना', उसने तो अपने जीवंत उदाहरण के परिप्रेक्ष्य में सूक्ष्म-गहन और समयोचित दो टूक विचार की बेबाक शैली के कारण मन में आस्था और सही दिशा का संचार ही कर दिया है, करता रहा है... □

● **श्री सुशीलकुमार, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, रायगढ़ (म. प्र.) से लिखते हैं :**

समांतर कहानियां वर्तमान शोषित समाज की मजबूरियों और एक वर्गविशेष द्वारा इन मजबूरों पर किये जा रहे सामाजिक और आर्थिक वज्रपात को उजागर करने का माध्यम हैं. प्रेमचंद ने जिस महाजनी सभ्यता और राहुल सांकृत्यायन ने दिमागी गुलामी को समाप्त करने का बीड़ा उठाया, 'सारिका' की समांतर कथाएं उसे एक निश्चित दिशा दे रही हैं. धूमिल की कविता का तीसरा आदमी, जो रोटी से खेलता है, बेईमानी, अन्याय एवं अवैध साधनों से धन और सामाजिक प्रतिष्ठा क्रय करने वाला शोषक है, जिसे बेनकाब करना प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है एवं 'सारिका' ने उसे बेनकाब करने में भारी सफलता पायी है. परिसंवाद में श्री गोविंद मिश्र की भाषा भटकावपूर्ण लगती है, किंतु श्री यात्री ने समांतर कहानियों की महत्ता को स्पष्टरूपेण निर्धारित कर दिया है. 'सारिका' के संपादकीय एवं कथाओं, व्यंग्य, परिचर्चा की एकरूपता से उम्मीद है कि मेरे देश का शोषित वर्ग अपनी लड़ाई में विजयी होगा यदि इन शोषकों को बेनकाब करता चले. □

● **श्री सुधाकर, दिल्ली से लिखते हैं :**

'सारिका' के समांतर कहानी विशेषांक—१० (जुलाई ७५) में डा. विनय ने समांतर साहित्य का अर्थ, क्षेत्र उसका कर्त्तव्य व उसकी भूमिका का अत्यंत सूक्ष्मता से विश्लेषण किया है. इतने अच्छे लेख के लिए डा. विनय वास्तव में बधाई के पात्र हैं. मेरे विचार में भी समांतर साहित्य की पहली मांग यही है कि लेखक भी आम आदमी होना चाहिए जिसके संघर्ष की अभिव्यक्ति वह करता है... **'क्या 'समांतर' महज आंदोलन है?'** परिसंवाद छापने के लिए 'सारिका' को बधाई! इस अंक की लघुकथाएं व कहानियां हर बार की तरह हमारी अपेक्षाओं को पूरा करती हैं. □

मुझे मेरा साहित्य मिल गया है

● **श्री रमेशचंद्र धवन, ४ भिस्ती मोहल्ला, इन्दौर से लिखते हैं :**

जब से मुझे 'साहित्य' से लगाव हुआ, तब से मैं 'साहित्य' को ढूंढ़ता फिरा. कई पुस्तकें, पत्रिकाएं देखीं और पढ़ीं, लेकिन मुझे 'साहित्य' के दर्शन नहीं हुए और न ही आत्मा को संतुष्टि मिली... लेकिन जब से मैंने मेरे एक मित्र द्वारा दी हुई अक्टूबर की **'सारिका'** पढ़ी, तब से तो मैं इसका आशिक हो गया हूं. पढ़ने के साथ-साथ प्रत्येक अंक को संभाल कर भी दस्तावेज के रूप में रख रहा हूं. साहित्य क्या है? मानव ही साहित्य है, क्योंकि मानव ही साहित्य लिखता है, मानव ही साहित्य पढ़ता है और मानव ही साहित्य के बारे में सोचता है. यही उत्तर मुझे **'सारिका'** को पढ़ने से मिला है... □

● **श्री मनोहरलाल डेंबला, लोहा मंडी, आगरा से लिखते हैं :**

मैंने जुलाई १९७५ की **'सारिका'** में **'अवरोध'** शीर्षक कहानी (अमय) पढ़ी. इस कहानी में जिन कैप्सूल 'रेस्टिकलिन' का जिक्र किया गया है, वह हिंदुस्तान की एक बड़ी कंपनी का उत्पादन है, जिसका नाम है साराभाई केमिकल्स लि., जो 'स्क्यिब' के उत्पादनों को बनाते हैं. क्या कहानी में असाधारण उत्पादन का नाम ज्यों-का-त्यों रखना उचित है? दूसरी बात—किसी भी डाक्टर या फिजिशियन को दवा की क्वालिटी या नकलीपन के बारे में राय देने का कोई अधिकार नहीं होता. दवाओं का विश्लेषण करते हैं फार्मासिस्ट या एनालिसिस केमिस्ट. डाक्टर का तो विश्लेषण से दूर का भी रिश्ता नहीं है. वह दवा के असलीपन या नकलीपन के बारे में कैसे राय दे सकता है? □

● **श्री दिवाकर, सैदपुर (पटना) से लिखते हैं :**

नवलेखन अंक में कहानियों की अधिकता होते हुए भी यह अंक लचर नहीं हो पाया. कहानियां 'नवलेखन अंक' की मर्यादा बनाये रहीं. नये-नये कहानीकारों की रचनाओं से अंक विशेष प्रतीकात्मक रहा. □

१६वीं अखिल भारतीय मुद्रक कान्फ्रेंस में मदुरई कार्पोरेशन के कमिश्नर श्री ए. शंकर सुब्रियन से मुद्रण की उत्तमता का पुरस्कार ग्रहण करते हुए बेनेट कोलमैन ऐंड कं. के कमर्शियल मैनेजर श्री जाल एस. कार्डमास्टर. इस कान्फ्रेंस में टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस को आठ पुरस्कार प्राप्त हुए.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज का उर्दू कथा-साहित्य

• काज़ी अब्दुल सत्तार

हर साहित्यिक युग में लेखकों की तीन पीढ़ियां होती हैं. पहली पीढ़ी उन लेखकों की होती है, जो अपने कृतित्व के कारण स्थापित हो चुके होते हैं; दूसरी पीढ़ी के लेखक भी जाने-माने होते हैं, लेकिन उनके बारे में यह कहा जाता है कि उन्हें अपना श्रेष्ठतम साहित्य अभी लिखना है; लेकिन उम्मीद की जाती है कि उनकी प्रतिभा निकट भविष्य में ही अपने वायदों को पूरा करेगी. तीसरी पीढ़ी अपनी पहचान और ख्याति के लिए संघर्षरत लेखकों की होती है.

★ ★

उर्दू कथा-साहित्य की त्रासदी यह है कि उसकी भाषा मूल रूप से कविता की भाषा रही है और उर्दू कविता उस संस्कृति को अभिव्यक्ति देती रही है, जिसे काफी हद तक 'उर्दू संस्कृति' कहा जा सकता है; यह संस्कृति नफासत से भरपूर रही है, लेकिन इसका सीधा संबंध मुशायरों से भी रहा है— यानी आपको ख्याति प्राप्त करनी है, तो मुशायरों में हिस्सा लीजिए.

उर्दू की मूल प्रकृति काव्यात्मक है; इसलिए कोई ताज्जुब नहीं कि कम पढ़ा-लिखा आदमी भी कविता की थोड़ी-सी समझ होने पर उर्दू कविता लिख लेता है. अंग्रेज लोग दिल्ली और लखनऊ तक काफी देर से पहुंचे. प्रेस का प्रभाव भी इसीलिए इन इलाकों में देर से पहुंचा. अतः इन इलाकों के लोग मुशायरों का ही आनंद उठाते रहे. गद्य-लेखक को मुशायरे का मंच उपलब्ध नहीं होता. इसलिए उर्दू कविता की लोकप्रियता के चलते उर्दू कथा-साहित्य को काफी नुकसान उठाना पड़ा है.

साथ ही उर्दू शायरी की रचना-प्रक्रिया ने उर्दू भाषा और साहित्य की मानसिकता को भी बिगाड़ दिया है. उर्दू शायरी का आधार है गजल और गजल का आधार हैं शे'र. और शे'र की दो पंक्तियों में एक विचार बंधा रहता है. इस बंधन का प्रभाव उर्दू गद्य पर भी पड़ा. अचेतन रूप से ही हमारा चिंतन भी सीमित हो गया. शायद यही वजह है कि उर्दू में विश्व-स्तर की कहानियां तो लिखी गयीं, लेकिन उपन्यास नहीं लिखे जा सके.

काव्य की विशिष्ट भाषा के अध्ययन का सबसे बड़ा नुकसान यह हुआ कि यह भाषा जन-भाषा को अपने साथ नहीं चला पायी. यह देख कर ताज्जुब होता है कि १९४७ से पहले भी, जबकि उर्दू श्रीनगर से ले कर हैदराबाद तक और कराची से ले कर ढाका तक समझी और सराही जाती थी, दिल्ली और लखनऊ जैसे उर्दू के गढ़ माने जाने वाले इलाकों में जन सामान्य की भाषा उर्दू नहीं थी. उर्दू का काव्य और उसकी नफासत जन सामान्य की स्वाभाविक अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं बन सके.

★ ★

उर्दू के पहले श्रेष्ठ कथाकार थे प्रेमचंद. उनके बाद प्रगतिशील आंदोलन के लेखकों के माध्यम से उर्दू कहानी अपने स्वर्ण युग में प्रविष्ट हुई. इस आंदोलन के स्थापित लेखकों में से कृष्णचंदर, इस्मत चुगताई तथा राजेंद्रसिंह बेदी जैसे लेखक आज भी लिख रहे हैं और अपने अननुकरणीय तरीके से खांटी सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्ति दे रहे हैं. उनकी कहानियों के पात्र टाइप्ड हैं, फिर भी इन कहानियों में श्रेष्ठतम कहानी-कला के दर्शन होते हैं. ये कहानियां अपने युग के सुख-दुखों, विचारों और भावनाओं का दर्पण हैं.

देश का बंटवारा अपने साथ अनेक त्रासदियां ले कर आया और उर्दू को इससे सबसे बड़ा झटका लगा. उर्दू पाठकों की संख्या नगण्य रह गयी. उर्दू में लिखने के लिए किसी तरह का प्रोत्साहन नहीं रह गया. प्रगतिशील आंदोलन, जो देश की आजादी के लिए प्रतिबद्ध था, और जिसने इस दिशा में अथक प्रयास भी किये, अब पूरी तरह बिखर चुका था. आंदोलन के भीतर चलने वाले आपसी विवाद भी अब सतह पर आ गये. जमींदारी उन्मूलन ने गांवों में रहने वाली ८५% जनता के सामाजिक और आर्थिक ढांचे को बदल कर रख दिया. लेकिन अपने बिखराव के कारण प्रगतिशील आंदोलन ने इन आमूल परिवर्तनों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया. भारत पर चीनी आक्रमण ने सिद्धांतवादी समाजवाद में जनता के विश्वास को डगमगा दिया. अडिग और अजेय मानी जाने वाली सोवियत शक्ति को क्यूबा-संकट ने गहरा धक्का पहुंचाया. इससे अनेक समाजवादी अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हुए.

इन्हीं सब घटनाओं और स्थितियों की छाया में उर्दू की दूसरी पीढ़ी ने लिखना शुरू किया— ये लेखक थे : कुर्रतुल-एन हैदर, बलवंत सिंह, जोगेंद्र पाल, टी. एस. चटर्जी, जीलानी बानो, वाजिदा तबस्सुम, शेख़ अत्तार, गयास अहमद गद्दी, इकबाल मतीन, रामलाल, रतन सिंह, इकबाल हजीद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलराज मेनरा, अनवर अजीम, और सुरेंद्रप्रकाश. यहां यह कहना असंगत नहीं होगा कि ये सभी लेखक कहीं-न-कहीं प्रगतिशील आंदोलन से प्रभावित थे. इस पीढ़ी की श्रेष्ठ रचनाओं और प्रगतिशील आंदोलन के श्रेष्ठ लेखकों की रचनाओं के बीच का अंतर कहानी की कलात्मकता, वैयक्तिक समस्याओं की व्याख्याओं और सामाजिक परप्रेक्ष्य में उनके चित्रण तथा सामाजिक यथार्थ के प्रति उनके नजरिये में देखा जा सकता है. यही अंतर प्रगतिशील तथा नव-प्रगतिशील लेखन के बीच की विभाजन-रेखा है नव-प्रगतिशील रचनाओं को कभी-कभी 'आधुनिक' भी कहा जाता है, जोकि व्यक्तिगत विश्वास और आस्था का ही मामला है. 'आधुनिक' शब्द कोई नया नहीं है; लेकिन कुछ लोग यह सोचते हैं कि इस शब्द के रूप में उन्हें जैसे अलादीन का जादुई चिराग ही मिल गया है.

★ ★

मैं आधुनिकता और आधुनिकतावाद के विवाद में नहीं पड़ना चाहता; लेकिन मैं यह बड़ी शिद्दत से महसूस करता हूं कि अगर उर्दू साहित्य को ले कर हमारा नजरिया 'ईमानदार और रचनात्मक' रहा होता तो प्रगतिशील आंदोलन के बिखराव से पैदा हुए शून्य को बखूबी भरा जा सकता था. कुछ युवा लेखकों ने खुद ही 'आधुनिक' होने का खिताब अपने आपको दे डाला है.

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि 'आधुनिकता' अपने आपमें कोई बहुत बड़ी चीज नहीं है. और साहित्य में आधुनिकता को वैज्ञानिक आधुनिकता की तरह देखा-परखा नहीं जा सकता. साहित्यिक आधुनिकता आयातित विचारों पर जिंदा नहीं रह सकती, क्योंकि ये विचार अपनी खास जमीन की उपज होते हैं. देश की तेजी से बदलती हुई सामाजिक तथा आर्थिक स्थितियों से उत्पन्न समस्याओं को अच्छी तरह समझ लेने के बाद ही आधुनिक उर्दू लेखक उनके बारे में अपना फैसला दे सकता है. विदेशी बाजारों से चुराये गये पुराने विचार भोले-भाले पाठकों को आकर्षित तो कर सकते हैं, लेकिन यह आकर्षण ज्यादा देर नहीं बना रह सकता. आधुनिकता तकनीक में नहीं होती. आधुनिकता का अर्थ है गहन पर्यवेक्षण, जागरूकता और सुलझा हुआ नजरिया. नयी पीढ़ी के लेखक इस शब्द— 'आधुनिक'— से बुरी तरह ग्रस्त हैं, क्योंकि 'आधुनिक' कहानियां लिख कर, उन्हें किसी साहित्यिक पत्रिका में छपवा कर शोहरत हासिल करना आसान बात है. इन तथाकथित आधुनिक कहानियों में न तो कथानक की जरूरत होती है, न चरित्रों की, न अभिव्यक्ति की गहनता, आयाम या नवीनता की; और न ही नये अर्थों की. मेरा विश्वास है कि जो आदमी क्लासिक किस्म की कहानी नहीं लिख सकता, वह आधुनिक कहानी भी नहीं लिख सकता, क्योंकि सूक्ष्म, प्रतीकवादी कहानी लिखने के लिए बेहतर कलात्मकता, और नये रंग, गहराई और आयाम की रचना के लिए बेहतर जागरूकता की जरूरत होती है.

विनोद

सच बात तो यह है कि अतीत की तरह आज उर्दू में कोई 'नयी पीढ़ी' है ही नहीं. हमारी युवा प्रतिभाएं अब उर्दू की बजाय अन्य भाषाओं में अपने आपको अभिव्यक्त कर रही हैं. . . इसलिए समकालीन उर्दू कथा-साहित्य का एक महत्वपूर्ण आयाम नदारद है. फिर भी कुछ नाम ऐसे हैं जो संभावनाएं जगाते हैं— जैसे मोहम्मद उमर मैमन, फरखंदा लोधी, जमीर हसन, फैयाज रिफअत आदि.

★ ★

एक जमाना था जब उर्दू कहानी पूरे उपमहाद्वीप की कहानी को प्रभावित करती थी. वह जमाना था जब लोगों ने मंटो, बेदी, कृष्ण तथा इस्मत की कहानियां पढ़ने के लिए उर्दू जबान पढ़ना शुरू किया था. आज का पाठक उर्दू साहित्य को संरक्षण देने के खयाल से उर्दू पत्रिकाएं तो खरीदता है, लेकिन उनमें छपी कहानियों को न तो वह समझ पाता है, न उन्हें सराह पाता है— इसलिए वह दुबारा पत्रिका खरीदने की गलती न करने की कसम खा लेता है. ऐसा लगता है जैसे लेखक पाठकों के लिए नहीं, अपने लिए लिख रहे हों. वे भूल जाते हैं कि अच्छे साहित्य में अर्थों के विभिन्न स्तर होते हैं. साफ है, आज का उर्दू कथा-साहित्य उर्दू जबान की मौत के लिए जिम्मेदार कारणों में से एक बन गया है. □□□

(मराठवाड़ा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद में 'भारतीय भाषाओं में समकालीन लेखन' पर हुए सम्मेलन में पढ़े गये लेख पर आधारित.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• संजय बादशाह

चश्म-ए-बद्दूर

• राजेंद्रसिंह बेदी

यह वाकया भी सनीचर के रोज हुआ.

तुम कहोगे कि तुम्हारे साथ सब वाकयात सनीचर ही को क्यों होते हैं? तो बोलो, मैं क्या जवाब दूं! यही कह सकता हूं न, कि हफ्ते के बाकी दिनों में तो मैं वाकयात को होता हूं. . .

बात सीधी है, बाकर भाई, सनीचर के दिन में सबसे बड़ी खूबी यह है कि इसके एक दिन पहले कोई छुट्टी नहीं होती. (हां, साल में एक दिन होती है, अलबत्ता, गुड फ्राइडे वाले दिन. लेकिन चंद लोगों की बदकिस्मती से बाजवक्त गुड फ्राइडे भी इतवार को आ पड़ता है और उनकी छुट्टी मारी जाती है!) लेकिन सनीचर के रोज कोई ऐसी मुसीबत नहीं होती. ऐसी सिक्केबंद छुट्टी आती है कि आदमी सब की छुट्टी बुला के रख देता है. वह यह भी भूल जाता है कि सनीचर से एक दिन पहले उसे जुम्मा की नमाज पढ़नी पड़ी थी. नमाज तो खैर फर्ज है. इतवार को भी. लेकिन तुम सच बताओ बाकर भाई, अपनी सलमा की कसम खाओ, क्या इतवार को तुम्हारी नमाज या नमाजों पर कजा नहीं छाई होती?

सनीचर की सुबह को अलबत्ता कायनात के नंबर दो (पैसे नहीं) सितारे, जिसे तुम जुहल और हम हिंदू लोग सनीचर कहते हैं, को थोड़ा रिश्वत देनी पड़ती है—और बस. सनीचर के दिन रिश्वत सिर्फ इतनी ही है कि बस मंदिर जाओ, जिसके बगल में एक दूकान होगी, हमेशा होगी, जहां से तेल, नारियल, हार वगैरा मिल जायेंगे. वहां से सरसों के तेल की एक पली खरीदो—सरसों का न मिले तो खोपरे का ही चलेगा—जो पच्चीस पैसे में मिल जायेगा. तेल डालने के लिए लोहे की कटोरी तेल वाला खुद ही देगा. और उसके लिए कोई अलग दाम नहीं लेगा, क्योंकि मूर्ति पर चढ़ावा हो जाने के बाद वह कटोरी अपने आप तेल वाले के पास चली आयेगी—मय तेल के. तो लोहे की कटोरी में तेल, तेल में चंद दाने उड़द के और एक पैसा तांबे का—पहले तो यही होता था, लेकिन आजकल तो तांबा रहा है न पैसा. पैसे की जगह पांच-दस पैसे ने ले ली है और तांबे की जगह निकल ने, जो किसी-न-किसी तरह से तुम्हारी जेब से निकल ही आयेगा. यह सब लेकर चलो, क्योंकि देवता लोग भी अवसरवादी हो गये हैं और हालात के साथ एडजस्ट करना सीख गये हैं.

बात यह है बाकर, सनीचर का ताल्लुक हर काली चीज से होता है, जिसका दान वाजिब है, मसलन लोहा, उड़द, काला कपड़ा, छतरी, नंबर दो का पैसा, फिल्म, तुम्हारा दिल—लेकिन दान के सिलसिले में तुम लोहे की कटोरी में तेल तक ही रहो, बहुत वह न उड़ो. हां, जो काम पच्चीस पैसे में हो जाये, उसके लिए लाखों का क्या सोचना! तेल की पली में अपना मुंह देखते हुए मंदिर को धाओ और जाते में सिर्फ तेल ही में देखो. तुम्हें उसमें अपना चेहरा अपने बाप का दिखाई देगा, जिसमें कोई शर्म की बात नहीं. ठाकुरद्वार पहुंचो तो जूता उतार दो—उतार लो मैंने कब कहा है! आखिर नास्तिक हो न! जूता मंदिर के बाहर बैठी हुई औरत की निगरानी में दे दो. यह बहुत जरूरी है. तुम औरत को जानते ही हो न. अगर तुम जूता उसके हाथ में नहीं दोगे तो वह खुद ले लेगी. जूते के बाद मंदिर में जाओ और बाहर का सब भूल जाओ. मूर्ति के सामने सिर नवाओ तो किसी औरत का खयाल दिल में न लाओ, चाहे वह अपनी मां ही क्यों न हो. फिर कोई जाप, किसी इस्मे-आजम का जाप करो. अगर याद नहीं तो न सही; कोई ऐसी बात दिल में दोहराओ, जिसमें कम-से-कम वजन या तरन्नुम तो हो. एक बात तुम्हें बता दूं कि सब देवी-देवता, पीर-पैगंबर गद्य यानी नस्र के बहुत खिलाफ हैं. इसलिए, कुछ भी याद न आये, तो यही कहते जाओ, लालामूसा छह-छह पैसे. . . लालामूसा छह-छह पैसे . . . यह तुम्हें रेलगाड़ी की आवाज मालूम होती है न? रेलगाड़ी हमेशा वही कहती है जो तुम कहते हो. ऐसे ही भगवान भी वही कहता है जो तुम कहते हो.

मंदिर से बाहर आओगे तो पहला वरदान सनीचर का तुम्हें यह मिलेगा कि ऊपर तुम्हारे ऐंगल से तुम्हें जूता रखने वाली के दूध दिखाई देंगे, जिनमें कोई दू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होगा. दूसरा यह कि चाहे तुम्हारी जेब में पैसा (दस पैसे) भी न हो, फिर भी बेशुमार बच्चे तुम्हें घेर लेंगे, और पुकारेंगे—सेठ, ओ सेठ! . . .बस, दुनिया में जिसको औरत और पैसा मिल गये, उसे और क्या चाहिए?

माफ करना, बाकर भैया, मैं बात जरा लंबी और घुमा-फिरा कर करता हूं. प्रोमोशन रुक जाने से मेरा दिमाग घूम गया न! तुम्हारा जब और जहां जी चाहे, रोक देना.

बात मैं सनीचर की कर रहा था. लेकिन आज के जमाने में एक बात और दूसरी बात में रब्त रख पाना बड़ा कठिन हो गया है. हमारे सब शायर और अदीब इसके गवाह हैं. पर वे भी क्या करें? महंगाई भी तो कितनी बढ़ गयी है! कद्रों में उथल-पुथल हो गयी! रब्त तो गया ही था, साथ जब्त भी गया. मालूम होता है समय ने रिजरपिन का टीका लगा दिया और दिमाग का वह हिस्सा ही सुन्न हो गया, जो बताता है कि पहले आप यह बात कर रहे थे और अब यह कर रहे हैं.

हां, मैं सनीचर की बात से जरा परे हट गया. लेकिन आ रहा हूं उसकी तरफ. यह चश्मा मेरा देख रहे हो न? इसमें डबल कॉन्वेक्स के शीशे लगे हैं. आम आदमी इनमें से देखे तो चींटी भी उसे हाथी लगेगी; शायद इसीलिए मैं रूसी कांसुलेट में काम करता हूं क्योंकि रूसियों को हर चीज अपने असल से सौ गुना बड़ी मालूम होती है. अवाम, दुनिया भर के अवाम, के लिए उन्होंने बहुत कुछ किया है. लेकिन अवाम की इतनी गरदान की है कि वे खास हो गये हैं. तुम देखना अगले पचास बरस के अंदर जो इनकलाब आयेगा, वह खास ही का होगा, जिसकी नींव सब इनकलाबों की मां फ्रांस में सार्त्र और सॉर्बोन के छात्रों ने रख भी दी है.

मेरी यह बात कांसुलेट में न कहना और न यह बताना कि मैं सनीचर, राहु और केतु की बातें करता हूं. नहीं तो मेरी छुट्टी हो जायेगी धरम से. रूसियों का यह है न कि वे कहते नहीं, करते हैं.

रूसी मेहनती बहुत हैं. उनके दफ्तर में जो काम करता है, उसे निचोड़ लेते हैं. शायद उनको पता चल गया है कि हर हिंदुस्तानी फितरतन कामचोर होता है. उसका बस चले, बिना काम किये पगार मिले, तो कभी काम न करे. पश्चिम में हर आदमी की तमन्ना रहती है कि वह जिंदगी की आखिरी सांस तक व्यस्त रहे, लेकिन हिंदुस्तानी यही सोचता रहता है कि कब वह रिटायर होगा और काम के झंझट से छूटेगा. बात वह पांच साल बाद की कर रहा है, लेकिन टांगें वह अभी से पसारना शुरू कर देता है. मुझसे पूछो तो मैं बताऊं; हिंदुस्तानी दरअसल काम मिलने से पहले ही रिटायर हो चुका होता है. इसकी वजह यहां की आबोहवा नहीं; बल्कि उसके कर्म व अमल की फिलॉसफी है, जिस पर जरूरत से ज्यादा जोर देने से वह बे-अमल हो गया है.

* *

एक बात है, बाकर भाई, इनसान आखिर इनसान है. रूस और अमरीका तो क्या, वह चाहे हिंदुस्तान ही का क्यों न हो. 'स्टेक' और 'शाश्लेक' की जगह इडली-डोसा, मूंग की दाल, मुर्ग-मुसल्लम या कड़ाह परशाद ही क्यों न खाता हो, मगर जिंदगी की हर अच्छी चीज उसे भी अच्छी लगती है. सनीचर को मंदिर से लौटने के बाद मैंने 'इंडियन एक्सप्रेस' में पढ़ा कि 'लिटल हट' रेस्तरां में मरियाना नाच रही है. मरियाना नाचते वक्त अपने बदन पर कहीं सिर्फ अंजीर का पत्ता पहनती है. हां भई, लोग इसे भी पहनना ही कहते हैं. फिर सामने अपने दूध पर मैस्मरिज्म के दो नुक्ते-से पेंट कर लेती है. हालांकि हमारी औरतें तो कपास का खेत का खेत अपने बदन पर उगा लेती हैं!

मेरे एक दोस्त, अरे तुम्हीं तो थे बाकर, जिसने बताया था कि मरियाना का रंग गोरा है न काला,

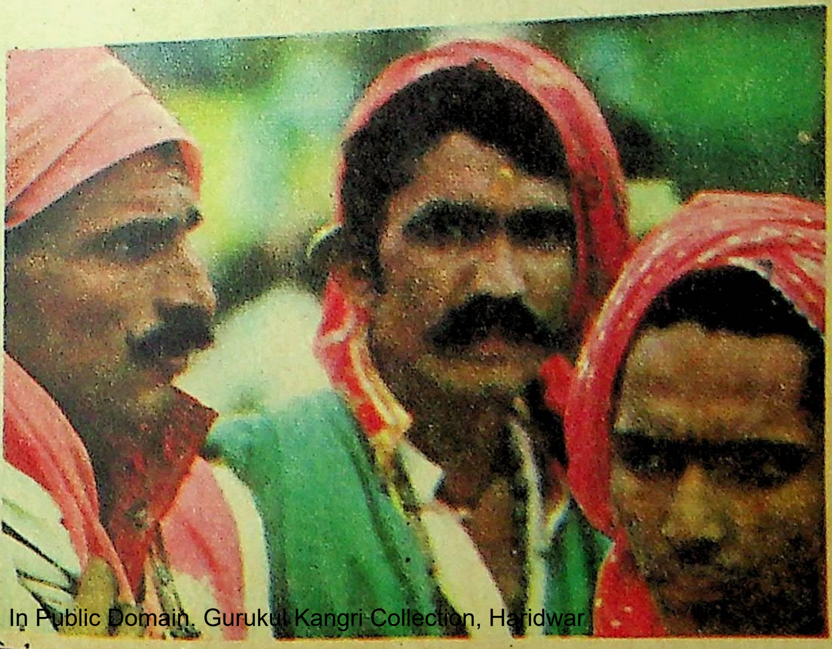

• सुरेश शेठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बस इश्क वाली है. उसका बाप लेबनानी है और मां ईराकी. और यह सब मिल कर लोगों को मिराकी बना देता है. वह जैतून के तेल की मालिश से अपने बदन को इतना लचकदार बना लेती है कि मालूम होता है कि ऊपर के हिस्से का नीचे से कोई ताल्लुक ही नहीं. जैसे हमारी ट्रॉली बस होती है न, जिसमें ट्रॉली पर ड्राइवर होता है और पीछे सवारियां, और इन दोनों का आपस में कोई ताल्लुक नहीं होता. यही वजह है कि वे अकसर उलट जाती हैं. मरियाना को देखने वाले भी तो ऐसे ही उलटते, जख्मी होते, मर जाते हैं. . .मैंने तुम्हें कहा था न कि औरत के बारे में हर मर्द का एक फेटिश (यानी खब्त) होता है, चुनांचे मेरा खब्त उसकी कमर है और तुम जानो बाकर भाई, दुनिया के सब फसाद औरत की कमर से शुरू होते हैं!

★ ★

तो सनीचर की एक शाम को मैंने ब्लादीमीर, अपने ऊपर के अफसर से, दो घंटे की छुट्टी मांगी, लेकिन उसने इतना रौब से 'नीयत' कहा कि मुझे उसकी नीयत पर शक पैदा हो गया. ऐसी निश्चितता सिर्फ रूसी ही के लहजे में हो सकती है. उसके साथ वाली मेज पर ब्लादीमीर खायाखोफ के ऊपर का अफसर निकोलाई क्रोपोत्किन बैठा था. अब रूसी दफ्तरों में ऐसा होता है कि आप अपने ऊपर के अफसर के ऊपर के अफसर से बात नहीं कर सकते. इसलिए मैंने दरख्वास्त को ब्लादीमीर खायाखोफ के ही सामने दोहराया, बीवी की बीमारी का बहाना बनाया, लेकिन वह जवाब में बोला—— नहीं, घंटा भी नहीं. मुझे ज्यादा बुरा इसलिए नहीं लगा कि मैं जानता था, उसकी हिंदी मेरी रूसी से भी ज्यादा कमजोर है, इसलिए घूंट का खून पी कर रह गया यानी चुप हो गया.

चुप तो हम पहले ही रहते थे, मगर अब और भी चुप हो गये. यह और भी चुप क्या होता है, यह तुम न जान सकोगे, मेरी जान; क्योंकि तुम दफ्तर के बयाबान में कभी खोये ही नहीं. . .आमतौर पर हमें दफ्तर से छह बज छुट्टी हो जाती है. अभी पूरे दस मिनट बाकी थे कि मैंने एन्वॉयसें समेटना शुरू कर दिया और ब्लादीमीर की तरफ सिर्फ इसलिए नहीं देखा कि वह जरूर मेरी तरफ देख रहा होगा. मेरे दिमाग में मरियाना के बारे में अपने आप एक नज्म पल रही थी. . .मरियाना, ओ मरियाना, तेरे लिए आज मर जाना. . .कैसी है?

कुछ देर में, मैं बस पकड़ कर 'लिटल हट' पहुंच गया.

'लिटल हट' दरअसल एक बड़े होटल का हिस्सा है. उसका नाम ही लिटल हट है, वरना अच्छी-खासी जगह है उसमें. चीजों के फैलाव को आखिर पैमाने ही से तो नहीं नापा जाता. हमारे सामने और भी बहुत कुछ है. देखो न, इतनी बड़ी कायनात और फिर उसमें मां की गोद. माइक्रोकॉस्म में माइक्रोकॉस्म. बंबई शहर की रौनक बड़ी है या सलमा की बांहों का सुकून? नसीबन का बुर्का बड़ा है या मरियाना का अंजीर का पता? अगर मालिकों ने दीवारों को खास रंग का असर दे रखा था या उन पर ऐसे ही सूक्ष्म चेहरे टांक रखे थे, तो महज लोगों को भरमाने के लिए. बाजवक्त बदसूरती इरादे से भी पैदा करनी चाहिए ताकि दूसरों को अपना आप खूबसूरत लगे.

'लिटल हट' हर उम्र, हर किस्म के लोगों से पटा पड़ा था. इसकी वजह सिर्फ मरियाना का नाच, उसके बदन की लोच और खूबसूरती ही नहीं थी, बल्कि वह शून्य भी, जिसे पाटने की इच्छा शादी के तीसरे-चौथे साल ही मर्द और औरत में पैदा हो जाती है. या फिर जिंदगी की सादा-सी हकीकत कि कुछ घोड़े दौड़ते ही उस वक्त हैं, जब साथ वाले दौड़ें.

कोने में मुझे एक सीट नजर आयी, जिसके एक तरफ कोई दुबला-पतला अष्टावक्र-सा आदमी बैठा था. वह शक्ल से लायब्रेरियन मालूम होता था. . .कमाल की बात है न, बाकर भाई, परिचय पर वह सचमुच ही यूनाइटेड स्टेट्स इनफरमेशन सर्विस का असिस्टेंट लायब्रेरियन निकल आया. तुम कहोगे कि लायब्रेरियन की कोई खास शक्ल होती है? तो मैं कहूंगा, हां. उसके चेहरे ही पर कार्ड-इंडेक्स होता है. जैसे हर शायर की नाक में थोड़ा पानी और मुंह में ज्यादा लार होती है. फिर लायब्रेरियन की आंखें यों घूमती हैं जैसे सफे उलट रही हों. मरियाना की बात तो छोड़ो, उसकी कमर तो सफे उलटती है.

इस असिस्टेंट लायब्रेरियन ने अपनी अंग्रेजी में बहुत अमरीकी गुनगुना पैदा करने की कोशिश की, लेकिन हिंदी कहीं-न-कहीं से अपना मुंह बाहर निकाल ही लेती है, बल्कि इस अमल में एक अजीब दोगली-सी चीज पैदा हो गयी——हिंदुस्तानी गुनगुना!

उसने जो बुश्शर्ट पहन रखी थी, उस पर नेक्सस-प्लेक्सस के अश्लील वाक्य छपे हुए थे—धुंधली-सी पोर्नो तस्वीरों के ऊपर. और उन सब को एक बिजली रंग की लंबी-चौड़ी नेकटाई ने एक हद तक छिपा रखा था. नीचे बेल-बॉटम के उसने जैसे इरादे से फूंसड़े निकाल रखे थे. चेहरे पर दोनों तरफ पुश्किन की तरह के बड़े-बड़े कलमों के गुच्छे. . .गोया वह आदमी और हिप्पी के बीच पैबंद मालूम होता था. वह कोई आदमी होने की बजाय उसका मुखपृष्ठ था.

यह तुम थे? नहीं-नहीं, तुम्हारी ही तरह का कोई और था जिससे शादी करने के लिए अमरीका से एक लड़की, हैपी फेरागोलो (जि के बाप-दादा इटली से जा कर अमरीका में आबाद हो गये थे) आयी थी. खैर फैरा को करो फायर और गोलो को मारो गोली, लेकिन एक बात उसने आज के हिंदुस्तानी नौजवानों के बारे में बड़े पते की कही थी. . .यह कि . . .ये अमरीकियों से भी कुछ ज्यादा ही अमरीकी हैं! क्या मजे की औरत थी, बाकर, अकेली ऐसी औरत जो मर्द से मिले बिना ही उससे कई बार मिल चुकने का आलम पैदा कर लेती थी. आज की दुनिया में सब सच है, मेरे भाई. कल पढ़ा नहीं कि मुर्गे को तकलीफ दिये बगैर ही लोग मुर्गी से अंडे पैदा करने लगे हैं. . .मैं फिर बहक गया और तुम कमीने भी मुझे नहीं टोकते. . .तुम भी जेहनी तौर पर वो हो. . .वो. . .अब हंसते क्यों हो?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पकड़े गये न! . . .तुम भी उस लड़की की तरह से हो जिसके गुसलखाने का दरवाजा गलती से खुला रह जाता है!

अरे हां, मैं भूल ही गया. यह औरतों का साल है—संयुक्त राष्ट्र के मुताबिक. औरतों को तुम जानते ही हो, कैसे वे अपनी कमजोरी का अफसाना मशहूर कर देती हैं. और कमरजोरी को भूल ही जाती हैं. साल खत्म होने दो, अगर औरत साली ने इसे सदी पर न फैला लिया तो मुझे बाप का न कहना.

मैं मर्द-शॉवनिस्ट नहीं. अगर सदियों से मर्द ने उसे रौंदा है तो अब वह उसे रौंदे. मगर मैंने देखा है कि वह तो चुपके से सामने पड़ी रहती है, जैसे रौंदे जाने की मुंतज़िर. और अगर इसमें मर्द जरा भी सुस्ती दिखाये तो उसे कैसे ताने देती है, जलील करती है. . .खैर, वह इसे रौंदे या यह उसे रौंदे, बात एक ही है. अवाम और खास के संघर्ष की तरह. मगर गजब खुदा का, औरत जो हुक्का भी नहीं पीती, हकूक मांगती है!

जरूरी बात तो बीच ही में रह गयी. पहले सनीचर कंधे पर चढ़ बैठा था, अब, हैफ, कि औरत सर पर सवार हो गयी है. . . जरूरी बात यह कि वह अपना लायब्रेरियन दोस्त भी चश्मा लगाता था. मुझमें और उसमें फर्क यह था कि उसके चश्मे में डबल कॉनकेव के शीशे लगे थे जैसे मेरे में डबल कॉनवेक्स के. आम सेहतमंद नजर वाला अगर डबल कॉनकेव में से देखे न, बाकर भाई, तो उसे हाथी भी चींटी दिखायी देगा. जैसे मेरे में से चींटी पर हाथी. यही वजह है कि अमरीकियों को दुनिया के सब लोग कीड़े-मकौड़े नजर आते हैं. मैं विएतनाम और माइ लाइ की बात नहीं करता, क्योंकि आधुनिकतावादी मुझपर छिपे तौर पर तरक्कीपसंद होने का इल्जाम लगा देंगे. लेकिन बाकी दुनिया ही को देखो, मिस्र और इजराइल में उन्होंने क्या गदर मचाया है. मुल्कों को कैसे-कैसे हथियार दे कर लड़वाया और खुद नफा कमाया है. शायद इसलिए कि उन मुल्कों के अपने हथियार कुंद या बेकार हो चुके हैं. कोरिया में जो पचास फी सदी ल्यूकोरिया है, उसका जिम्मेदार कौन है? फिर आयेंदे या चिली का हश्र देखा ही है न तुमने! अरे, वह शेख चिल्ली दूसरा था. . .

जैसे मैं अपने डबल कॉनवेक्स की वजह से रूसी कांसुलेट में हूं, वह डबल कॉनकेव की वजह से अमरीकी इनफरमेशन सर्विस में था. लेकिन कुदरत भी हम हिंदुस्तानियों से अजीब-अजीब तरह से बदले लेती है. उसने अच्छी-भली स्कॉच छोड़ कर कनाडा की सीग्राम का ऑर्डर दिया. सिर्फ इसलिए कि वह अमरीका का पड़ोसी है. मैं रूसी डरने वाला थोड़े ही था! मैंने भी वोद्का की हुक्मी तरीके से फरमाइश की, जैसे रूसी करते हैं, यह जानते हुए भी कि वह वोद्का रूस की नहीं, यहीं आसपास, कहीं केरल में कशीद की गयी है, जिसकी वजह से हम-दोनों में कशीदगी पैदा होने लगी.

अभी हमारे एहसासों ने कोई ठोस शक्ल अख्तियार नहीं की थी, कि बीच मैदान में कूद कर आ गयी—मरियाना!

गोआनी ऑर्केस्ट्रा में से झांझे वाले ने जोर-जोर से झांझे बजाये. परदे के पीछे से बड़े खर्ज वाली पॉल रॉबसीनी आवाज आयी—मे. . .रि. . .या. . .ने! . . .

मुझे नहीं मालूम था कि मरियाना को मेरियाने भी कह सकते हैं या कहते हैं. मेरे अंदर जो नज्म पैदा हो रही थी, एकाएक ही बंदनज्मी का शिकार हो गयी; सब काफिये गलत हो गये मेरे—होश उड़ गये!

फिर गोआनी ऑर्केस्ट्रा. . .और मरियाना का नाच
छक-छक, छका-छक. . .
धक्-धक्, धका-धक्. . .हे ए SSSSSS!
. . .और कमर!

यह सब नीग्रो स्प्रिचुअल था और न हिप्पी हैरिसनी म्यूजिक. कोई दोगली चीज थी जो अब हिंदुस्तानी की बजाय अफ्रीकी तनतना हो गयी थी. असली छुट्टी तो हुई जब मरियाना ने कमरनाफ से आवाज निकाल कर गाना शुरू किया—

'तुम मेरे लिए क्या लाये हो?
आर्गल की जुराबें लाये हो?
—अच्छा किया, अच्छा किया.
तुम मेरे लिए क्या लाये हो?
मोजंबीकी मोतियों की माला लाये हो?
—अच्छा किया, अच्छा किया.
मोंमार्त का इत्र लाये हो?
—अच्छा किया, अच्छा किया.
मैं तो तुम्हारे लिए कुछ नहीं लायी, जान!
. . .मेरे पास तो एक दिल है जो सिर्फ तुम्हारे लिए ही धड़कता है. . .'
और फिर—
'अच्छा किया, अच्छा किया. . .'

अरे बाकर मियां, मद बड़ा उल्लू का पट्ठा है. . .वह जानता भी है कि हॉल में उस जैसे सैकड़ों दूसरे—तियें भी हैं, लेकिन इसके बावजूद वह यही समझता है और समझना चाहता है कि वह जो भी कह रही है, मुझी से कह रही है. 'लिटल हट' में लड़कियां भी थीं लेकिन उनकी मत पूछो. वे या तो मरियाना की नजरों से मर्दों को देख रही होंगी और या फिर सीधे उसके 'लिबास' को. हकीकत, बाकर भाई, जलेबी की तरह से सीधी है. मर्द सब से ज्यादा क्या पसंद करता है? —औरत! औरत सबसे ज्यादा क्या पसंद करती है? —शॉपिंग!

इस सिलसिले में तुम तैयार रहो, बाकर, क्योंकि यह औरतों का साल है. हमारा-तुम्हारा सब कुछ बिक जाने वाला है. डिमांड इतनी बढ़ जायेगी कि सप्लाई बंद हो जायेगी!

एक बात और भी है. आजाद हो कर शायद ये औरतें हमारी इज्जत करने लगें. हम औरतों की जितनी इज्जत करते हैं, ये खुद औरतें भी नहीं जानतीं. . . तुम ही बताओ, हमने कभी किसी को बाप-भाई की गाली दी है?

क्या बताऊं दोस्त! मरियाना के नाच-गाने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'लिटल हट' के रजनीगंधा और डाहलिया तो एक तरफ, कैक्टस भी महकने लगे थे. . .देखो, अब तुम शरारत मत करो. खुदा गवाह है कि कैक्टस के सिलसिले में मेरा इशारा कतई 'उन' लोगों की तरफ नहीं है. ऐसा करोगे तो मुझे पिटवा दोगे, मरवा दोगे. . .अगर मैं उनकी बात करता तो कहता कैक्टस भी लहकने लगे थे. चहकने लगे थे. बहुत करता तो कहता—बहकने लगे थे. महकने का सवाल ही कहां पैदा होता है?

★ ★

कुछ देर बाद मरियाना अपना लिबास—अंजीर का पत्ता—बदलने के लिए अंदर चली गयी थी और मैं होश में आने की बजाय जोश में आ चुका था. काफिये मेरे सामने यों खुल गये जैसे मेरा जेहन शब्दकोश हो. लेकिन बदकिस्मती से मेरा उस असिस्टेंट बल्कि स्टंट लायब्रेरियन से झगड़ा हो गया. बात यों हुई कि मैं पहाड़ी की धुन पर धीरे-धीरे गाने लगा. फिर दिमाग ही तो है न. मेरा खयाल संगीत-सम्राट सहगल की तरफ चला गया और मैंने उस कार्ड-इंडेक्स से पूछा—आपको याद है, सहगल कब मरा था? जानते हो क्या जवाब दिया उसने? —अभी-अभी मेरे सामने ही तो मरा है. . . .

ये अमरीगी साले—वॉटरगेट वाले —अपने हथियार दूसरे मुल्कों में भेज कर उन्हें लड़वाते हैं. खुद मुनाफा खाते हैं. हम रूसी भी भेजते हैं, लेकिन उनके हथियारों को बेकार करने, दुनिया में अमन लाने के लिए. मैंने सोचा, क्यों न मैं उनके हथियार उन्हीं पर इस्तेमाल करूं. मुझे अमरीकी मार्क ट्वेन याद आ गया. मैंने खालिस रूसी दबदबे से अपने हास्य के माद्दे को थोड़ा डल करके उससे पूछा—आप जानते हैं एक लायब्रेरियन और गधे में क्या फर्क है? हो सकता है इस आनन फानन के सवाल से सीधे ही लड़ाई शुरू हो जाती. लेकिन वह मेरे तन व तोश, तखल्लुस होश और रूसी जोश को देख कर थोड़ा डर गया और ह-हकलाहट से बोला— मुझे नहीं मालूम!

मैंने कहा— मुझे भी नहीं मालूम. . .

और अपने इस लतीफे पर मैं खुद ही इतना हंसा कि आसपास के लोग भी हंसने लगे. वह कथन ठीक ही तो है कि हंसो तो दुनिया तुम्हारे साथ हंसेगी, रोओ तो—फिर भी वह हंसेगी!

चूंकि उस खंजीर को पता चल चुका था कि मैं रूसी कांसुलेट में काम करता हूं, इसलिए उसने सीधे ही रूसियों की बुराई शुरू कर दी. मुझे बड़ा ताव आया, बाकर भाई. . .कोई तुम्हारी ताई को भी गाली दे, यह जानते हुए कि तुम मेरे जिगरी दोस्त हो, तो बताओ, गाली तुम्हें लगेगी या मुझे?

मैंने चश्मा उतार कर मेज पर पटक दिया और सी. आई. ए. को गाली दी. वह के. जी. बी. को बीच में ले आया और चश्मे का जवाब चश्मे से दिया.

मैंने खालिस प्रोल्तारी अंदाज में जूता उतार कर मेज पर मारा जैसे ख्रुश्चोफ ने संयुक्त राष्ट्रसंघ के जलसे में मारा था. इससे दोनों चश्मे मेज पर यों उछले जैसे वे मुर्ग हों और आपस में लड़ रहे हों. .

मैंने रोजनबर्ग के मार दिये जाने की बात की. मेरा बस चलता तो फैज की गजल की गजल उसके मुंह पर दे मारता. . .वह साला सखारोफ और सोल्जेनित्सिन पर चला आया और उसकी 'गुलाग आर्कीपिलागो' से हवाले देने लगा. . .उस मोटे-ताजे कुत्ते की बात करने लगा जो फ्रांस में इसलिए चला आया था कि उसके अपने मुल्क में—'रूस में—खाने को तो बहुत देते हैं, मगर भौंकने नहीं देते. . .'

अब हमारी आवाजें ऊंची हो कर इर्द-गिर्द की सब आवाजों को बौना किये दे रही थीं. अरे-अरे. . . ए यू लिसन! सब बेकार हो गया, यह क्या मछली-मंडी है? . . .ऐसे में यह सवाल ही नहीं पैदा होता था कि बराबर की मेज पर बैठी हुई लड़की अपने प्यार के वाक्यों को होंठों तक लाये और अपने प्यारे से पूछ सके—कब मिलोगे, जान? कहां मिलोगे?

मालूम हो रहा था कि हमारी वजह से वे कभी कहीं भी नहीं मिल सकते.

—तुम बात करते हो यैंकी! मैंने चिल्ला कर कहा, जिसकी तहजीब ही जुम्मा-जम्मा चार सौ साल पुरानी है! जो कभी महेश योगी का सहारा लेता है और कभी प्रभुपाद की दुम सूंघता है! . . .हरेराम हरेकृष्ण के बच्चे!

—क्यूमस के नुत्फे!

और हम दोनों एक साथ उठ खड़े हुए और गरज-गरज कर बातें करने लगे. —तुम हिंदुस्तानी जाहिल होते हो! बदतमीज होते हो! उसने कहा. दरवाजा खटखटाये बगैर तो कमरे में चले आते हो!

मैंने उसी पाटदार आवाज में कहा—हिंदुस्तानी होगा तू, तेरा बाप! तू जब इस दुनिया में आया, कोई दरवाजा खटखटाया?

अब तक हम दोनों पूरी तरह रूसी और अमरीकी हो चुके थे. मालूम होता था कहीं हॉट लाइन पर से आवाज आ रही है—रोको! रोको! लेकिन हम दोनों इस बात के लिए तैयार थे कि बटन दबायें और दोनों मुल्कों के आई. सी. बी. एम. छोड़ कर न्ययॉर्क और मॉस्को तो तबाह कर दें, रावलपिंडी और दिल्ली का फिर देखा जायेगा. . .

पहले मेज उलटी. फिर कुर्सियां गिरीं. उनके बीच में से होता हुआ 'लिटल हट' का मैनेजर हम तक पहुंचने की कोशिश कर रहा था. औरतों के साल वाली एक औरत बेहोश हो गयी साली. कुछ लोग मौके का फायदा उठा कर बाहर भाग गये और बिल अदा करने के झंझट से छूटे. यही नहीं, कुछ लोग दहशत के आलम में अंदर घुस आये. मरियाना विग में आधी अंदर और आधी बाहर दिखाई दे रही थी. चश्मों की गैर-मौजूदगी में सिर्फ इतना ही दिखाई दे रहा था कि वह काला गाउन पहने हुए थी. उस साले स्टंट ने मुझे टाई से पकड़ रखा था, मगर उसके हाथ साफ कांपते हुए दिखाई दे रहे थे. मैंने उसकी बुश्शर्ट के कॉलर को इतने जोर से मरोड़ा कि उसका गला घुट गया. उसकी आंखें बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चली आयी थीं. बाहर वो जबान भी चली आयी थी. मगर थोड़ी-सी. . .

अब जिस जबान में वह गाली दे रहा था, वह किसी मुल्क की नहीं थी. यह वही आवाज थी जो भाषा की ईजाद से सदियों पहले इनसान गुफाओं में बोला करता था. या हो सकता है वह कोई फ्री-मेसनरी हो, कोई एस्परैंटो . . .नहीं, अब मुझे याद आता है वह कू कू कू कू क्लां थी! एक बात तय है कि उसका गुनगुना अब हिंदुस्तानी भी नहीं रहा था.

फिर हिंदुस्तानी फिल्म की तरह से जाने कहां से गुलदान उसके हाथ में आ गया और उसने मेरे सिर पर दे मारा. अगर हमारे फिल्मकार अमरीकी फिल्मों की नकल न करते तो वह कभी ऐसा न करता. मैं चकरा गया. तभी एक चीख-सी आयी—गेट आउट! विल यू ऊऽऽऽऽ! और हॉल के एक तरफ की बत्तियां बुझ गयीं. स्पॉटलाइट हम पर थी जैसे कि थियेटर में केंद्रीय पात्रों पर होती है.

—देखा नहीं! उसने पास आते, पूरा बाजू बाहर के दरवाजे की तरफ फैलाते हुए कहा, राइट्स ऑव एडमीशन रिजर्व्ड!

पास के किसी मसखरे ने उस इबारत की तरफ देखा जो दरवाजे के बाहर लिखी हुई थी और इस तरफ से उलटी पढ़ी जा रही थी. उसे पहले अक्षर 'डी' दिखाई दिया 'रिजर्व्ड' का, और वह बोला—'डी' फार डैविल! 'ई' फार ईविल!. . .लेकिन मैनेजर कड़का—आप बाहर निकलते हैं या मैं पुलिस को बुलाऊं!?

अब सच्ची बात है, बाकर भाई, रूसी होने के बावजूद मैं थोड़ा डर गया. हां, इस जानिबदारी से मुझे लेनिन प्राइज तो क्या नेहरू अवार्ड भी नहीं मिलने वाला था. पुलिस की धमकी देते ही मैनेजर बेयरों की मदद से खुद ही पुलिस हो गया. हमने मेज के नीचे हाथ मार कर चश्मे टटोले, उठाये और लड़ते-भिड़ते बाहर की तरफ लुढ़के. वह साला अमरीकी मुझसे पहले निकल गया था, वरना मैं तो उसके सातवें बेड़े का हिंद महासागर, अरब सागर तक पीछा करता हालांकि हॉल की बुझी हुई बत्तियों के कृष्ण सागर से यह कितना बड़ा फासला था!

'लिटल हट' से बाहर आया तो कोई धुंधली-सी सफेद चीज जैसे उड़ती हुई दिखाई दी. गालिबन वह उस अमरीकी पिल्ले की गाड़ी होगी. मैंने सिर्फ आवाज सुनी—जल्दी शोफर, जल्दी. . .

★ ★

अपने सिस्टम से बदला न निकाल सकने की वजह से मैं अभी तक हांफ रहा था. जी चाह रहा था कि ऐसे ही मुझसे कोई तकरार शुरू करे तो मैं उसे बताऊं. जैसे अंदर के गुस्से को खारिज करने के लिए लोग रेत की बोरियां टांक कर उन पर मुक्के मारते हैं, ख्वाब में भेड़िये के मुंह में हाथ डाल कर उसे फाड़ कर टुकड़े कर देते हैं, ऐसे ही मैं. . .लेकिन कोई माई का लाल सामने नहीं आया और मैं अंदाजे से बस-स्टैंड की तरफ मुड़ा. चश्मा लगाया तो मुझे एक चाबी लगी खिलौना गाड़ी स्टैंड की तरफ आती दिखाई दी. अरे! बाकर भाई, हमारे चश्मे बदल गये थे. इस झगड़े-रगड़े में वह मेरा चश्मा ले गया था और उसका मेरे हाथ में आ गया. फ्रेम करीब-करीब एक ही-से थे या हमें ऐसे लग रहे थे.

उस वक्त ग्यारह बजे थे रात के, जो मैंने यूनीवर्सिटी के घड़ियाल में कानों से देखे और आंखों से सुने. . .

★ ★

मेरा पहला तजुर्बा बस का था—उस चश्मे के साथ. कुछ भी न दिखाई देने से, कुछ दिखाई देना तो अच्छा ही था. चुनांचे मने वह चश्मा पहने रखा. लेकिन जब मैं बस में बैठने के लिए आगे बढ़ा तो यूं लगा जैसे इतने तंग दरवाजे से मैं अंदर कैसे जाऊंगा? लेकिन अपने बदन को सिकोड़ कर मैंने डेक पर कदम रखा ही था तो देखा कि कोई बच्चा बस में चढ़ने की कोशिश कर रहा है. चुनांचे मैंने अपना पांव पीछे हटा लिया. ऐसा ही बच्चे ने भी किया. शायद वह मेरी बुजुर्गी का एहतराम कर रहा था. मैंने फिर कदम बढ़ाया तो उस बच्चे ने भी साथ बढ़ा दिया और मैंने फिर खींच लिया. तभी बस-कंडक्टर की आवाज आयी—साहब दारू पियेला क्या?. . .और उसने मेरी बांह पकड़ कर मुझे बस के अंदर घसीट लिया और सीट पर जा बिठाया. तब मुझे पता चला कि वह पांव किसी बच्चे का नहीं, मेरा अपना ही था!

बस-कंडक्टर की आवाज आयी—देखो, कोई लफड़ा नहीं करने का, अं! वह अब तक मुझे पिये हुए समझ रहा था. मैंने कहा—मैंने पी नहीं, कंडक्टर, थोड़ी-सी पी है. मगर मेरी नजर कमजोर है.

—तो पेर चश्मा काहे को रखा? वह बोला.

अब मैं कहां इतनी लंबी रावण-कहानी दुहराता! मैंने सिर्फ इतना कहा —वर्ली नाका आ जाये तो मुझे उतार देना. . .

—हो. . .उसने कहा, पैसे लिये, टिकट दिया और दूसरी सवारियों में लग गया.

सीट पर बैठते ही मैंने अपना चश्मा उतार लिया (देखो, मैं फिर उसे अपना ही कहे जा रहा हूं! आदत नहीं छूटती न!) उसके बगैर जैसे मुझे हमेशा लगता था, आज भी वैसे ही लगा कि बस खड़ी है और सड़क की रोशनियां अपने गिर्द बेशुमार किरणें और हाले लिये आधे दायरे में घूम रही हैं. और बड़े-बड़े धब्बे नीले-पीले, ऊदे-काले जो नजर आते हैं, नयी और पुरानी बिल्डिंगें हैं.

फिर महज घबराहट की वजह से मैंने फिर चश्मा पहन लिया. मेरे साथ की सीट पर एक बड़ी प्यारी-दुलारी-सी बच्ची बैठी हुई थी. जब मुझमें प्यार उमड़ता है न, बाकर भाई, तो मैं उसकी बाढ़ को रोक ही नहीं सकता. मैं आलिंगन भी रीछ की तरह से करता हूं. . .मैं किसी रूसी से कम हूं?

मैं उस बच्ची के गालों पर चिकोटी लेने ही वाला था कि फौरन मुझे कुछ याद आ गया और मैंने अपना उमड़ा हुआ प्यार, अपना हाथ खींच लिया. ठीक ही किया मैंने. अगले स्टॉप पर जब बस रुकी और बच्ची

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उतरने के लिए उठी तो मैंने अपना चश्मा उतार कर देखा--जो खाका मेरे पास से गुजरा, वह एक जवान भरपूर औरत का था. उसका सामना! मालूम होता था जैसे अपने आपसे एक फुट आगे चल रहा है. मैं अपनी तुरतबुद्धि से बचा, बाकर भाई, वरना उस रात मैं पिट गया था!

मजे से बैठा मैं याद के मुंह में उस खूबानी को पपोल ही रहा था कि बस-कंडक्टर की आवाज आयी—अरे-अरे! मिस्टिक हो गया साला! वह कह रहा था. वर्ली नाका तो तीन स्टॉप उधर रह गया. अब हम प्रभादेवी के बीच होता.

--कंडक्टर! मैं गुस्से से इतना ही कह सका.

—उतरो, उतरो. . .लौकर. . .वह बोला. सामने स्टॉप होता उलटा बस का. चेकर आ गया तो ज्यास्ती पैसा देने को पड़ेगा. . .

जैसे कंडक्टर ने मेरा हाथ पकड़ कर बस में बिठाया था, वैसे ही पकड़ कर निकाल भी दिया. बस चल देने के बाद मुझे गाली याद आयी—ऐसा होता है न, बाकर भाई?

★ ★

मैं घर कैसे पहुंचा, यह मैं ही जानता हूं. अपने घर की बजाय दूसरे घर में गलती से घुस जाने की जो खुशी होती है, मुझे तो वह भी न हुई. घर पहुंच कर पांवों को आंखें बना कर सीढ़ियां चढ़ा. जिस दरवाजे को मैं अपना समझा था, वह अपना ही निकल आया. अंदर जाते ही मैं सीधे कुर्सी पर जा बैठा. तुम तो जानते हो अंधे को भी अपने घर के सब मोड़-तोड़ पता होते हैं. बीवी को बात बतायी तो उसने उस अमरीकी को बहुत गालियां दीं. लेकिन मुझे यों लगा जैसे तसव्वुर में उसे फूलों की छड़ी से मार रही है, क्योंकि औरत की गाली में वह बात कहां होती है जो मर्द की गाली में होती है!

उस रात और तो कुछ नहीं हुआ, बाकर भाई, मैंने आदत से मजबूर फिर चश्मा आंखों पर रख लिया. जैसे ही मुड़ कर देखा तो एक बड़ी प्यारी-दुलारी-सी गुड़िया औरत बाहर जाते, अंदर आते दिखाई दी. हे भगवान! वह मेरी ही बीवी थी!? तुम तो जानते हो न, बाकर भाई, ललिता एक आम रूसी औरत की तरह से मोटी-ताजी है. उसकी कमर कमरा है. लेकिन अब. . .ये अमरीकी क्या पलक झपकते में सत्तर मिलीमीटर से आठ मिलीमीटर का प्रिंट बना लेते हैं! मैंने बांहें पसार कर उसे अपने बाजुओं में ले लिया. जाने कब से प्यार के लिए तरसी हुई उसने जरा भी न-नुच नहीं की. वह न-नुच भी जो औरतें बहुत देर तक प्यार न किये जाने के गुस्से में करती हैं. शायद उसने सोचा, इनकार किया तो यह मौका भी हाथ से जाता रहेगा. यही नहीं; उलटे शायद औरतों का साल मनाने के सिलसिले में उसने मुझे अपनी बांहों में ले लिया और धीरे-धीरे. . .उसे मालूम होने लगा कि कोई चीज उसके प्यार के रास्ते में आ रही है. और उसे जल्दी ही पता चल गया. वह बोली—तुम चश्मा क्यों नहीं उतारते? मैंने एकदम उसके बढ़े हुए हाथ को झटक दिया—खबरदार!

इतवार के दिन सदर्न बंबई बंद होता है, मगर नॉर्थ--दादर-बांदरा का इलाका--खुला रहता है. आदमी चाहे तो अर्जेंट ऑर्डर दे कर दूसरा चश्मा बनवा सकता है, लेकिन इनसान को इतनी सादा-सी हकीकत भी कौन समझाये कि चश्मे तक पहुंचने के लिए भी तो चश्मा चाहिए या सूरदास के आश्रम का कोई कर्मचारी. और फिर कौन इतना खर्च करे? हमें डॉलरों के हिसाब से तनखाह थोड़े ही मिलती है!

मेरा इतवार जैसे गुजरा, उससे तो शुक्र-जुम्मा ही हजार दर्जे अच्छा था. वही तुम्हारी बात कि गये थे रोजे बख्शवाने, उलटा नमाज गले पड़ी. और फिर तुम-से नास्तिक सनीचर और उसके कोप को भी नहीं मानते. कोई माने भी तो उसकी कैरेक्टर शीट खराब कर देते हैं. आधा दिन तो मेरा यही बात सोचने में गुजर गया कि उस कार्ड-इंडेक्स का दिन कैसे गुजरा होगा! इंडेक्स का नॉब ढूंढ़ने के लिए भी तो चश्मे की जरूरत पड़ती है. और अगर वह नॉब उसे हडसन कार का व्हील मालूम होने लगे तो वह अपना हाथ खींच लेगा. जाने उसे क्या हुआ और क्या हो रहा होगा. हो सकता है कि उसके पास स्पेयर चश्मा हो, क्योंकि वह अमीर आदमी है. मगर अगले रोज पता चला कि उसके पास स्पेयर था लेकिन चंद ही दिन पहले उस हाथी के अंडे ने अपना ही पांव अपने स्पेयर पर रख दिया और वह क्रंच हो गया.

दूसरा वह बनवा नहीं सकता था. क्योंकि उसका ऑप्टीशियन भी साउथ बंबई ही में था. उसने यह भी बताया कि गलती का पता चलते ही वह 'लिटल हट' पर लौट कर आया कि शायद मुझे मेरी गलती का पता चल चुका हो. अगर दो गलतियां मिल कर एक-ठीक नहीं हो सकतीं तो एक गलती दूसरे के साथ तबादले में तो ठीक हो सकती है. मैंने तो खैर इसलिए भी परवाह नहीं की क्योंकि मुझे इस चश्मे में अपनी गलती बहुत छोटी मालूम हो रही थी और मैं चाहता था, उसे पता चले कि उसकी गलती कितनी बड़ी है!

मैनेजर से मिन्नत करके उसने 'लिटल हट' में झांका. वहां सब कुछ अजीमुलशान था. लेकिन मैं नहीं था. अगर मैं होता तो ऐसे इनसान के अहं की तरह से जिन्न दिखाई देता और वह बेहोश हो कर गिर जाता. 'लिटल हट' में से मरियाना की आवाज, सिर्फ आवाज आ रही थी. मालूम होता था जैसे वह गा रही है—

'तुम मेरा चश्मा ले आये हो—अच्छा किया, अच्छा किया. . .'

अंदर उस कार्ड-इंडेक्स, उस कंप्यूटर को कुछ गुलाबी, कुछ ग्रे धब्बे-से दिखाई दिये और फिर एक काला धब्बा जो लगातार हिल रहा था. उसने भी तुरतबुद्धि को इस्तेमाल करते हुए चश्मा लगाया तो एकदम उलटा भाग निकला, क्योंकि वहां 'लिटल हट' में वे कोई भस ले आये थे और वह नाच भी रही थी!

थी वह मरियाना. . .मेरे चश्मे का मेहरबाना!

अपने खौफ, अपनी झल्लाहट में वह अपने ऑप्टीशियन कापड़िया की दूकान के सामने से भी गुजर गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि शायद दूकान की दरार में से कोई रोशनी की किरण नजर आ जाये. लेकिन कापड़िया की दूकान और भी बंद दिखाई दे रही थी. एक तो इसलिए कि वह वाकई बंद थी, दूसरे इसलिए कि वह उसे दिखाई नहीं दे रही थी. और जब उसने मेरे चश्मे को पहन कर देखा. . .

इस निरंतर हमाकत से उसे यों लगा कि वह ऐसा गुलीवर है जो जिन्नों के देश में पहुंच गया है, जहां सब लोग मिल कर उसकी तरफ बढ़ रहे हैं.

डरा-सहमा हुआ वह अमरीकी-हिंदुस्तानी घर पहुंचा. शोफर और गाड़ी की वजह से घर पहुंचने में उसे कोई ज्यादा दिक्कत नहीं हुई. हुई भी तो सिर्फ इतनी कि वी. टी. का स्टेशन, कार्पोरेशन की इमारत सब पांपेआई के जलजले में उसे अपने ऊपर गिरता हुआ मालूम हो रहा था. घर के बुलंद शहरी दरवाजे के अंदर पहुंच कर जब उसने सीढ़ी पर कदम रखा तो लड़खड़ा कर गिरा, क्योंकि जिसे वह तीसरी सीढ़ी समझा था, वह अभी पहली ही थी. उसे चोट भी आयी, मगर कोई ज्यादा नहीं.

घर के अंदर पहुंचा तो उसे एक गधा छलांगें मारता हुआ दिखाई दिया. उसे बहुत ताव आया, क्योंकि वह समझ ही नहीं सका कि गधा भी पालतू जानवरों में से हो सकता है. आखिर उसकी बेटी जूली आयी और उसने बताया कि बैकयार्ड में जो धोबी रहते हैं न, पप्पा, उन्होंने मुझे खरगोश दिया है!

मैंने तो उस रात बीवी से प्यार किया था न, बाकर भाई, लेकिन उस कार्ड-इंडेक्स और कंप्यूटर की अपनी बीवी से लड़ाई हो गयी——इसलिए कि बीवी उसे अपनी तरफ आता हुआ विजयांत टैंक दिखाई देने लगी थी. और जब उससे बचने के लिए उसने दरवाजे से बाहर निकलने की कोशिश की तो उसका सिर फट गया, क्योंकि जिसे उसने दरवाजा समझा था, असल में वह खिड़की थी!

सोमवार की सुबह जब नौ-साढ़े नौ बजे मैं अपने अंदाजे के मुताबिक सही 'लिटल हट' के बाहर पहुंचा तो वह चूहा मेरा इंतजार कर रहा था——अपनी बच्चा-गाड़ी में. . .

मैं अमन के अंदाज में आगे बढ़ा. वह जंग के खौफ से पीछे हट गया. लेकिन थोड़ी देर में समझ के ऊपर आ जाने से हम दोनों ने चश्मे उतार लिये. और दो भूतों की तरह से एक-दूसरे पर बढ़े. बगैर कुछ कहे-सुने चश्मे बदले. अब हम एक-दूसरे से हाथ मिला रहे थे. माफ कीजिए, क्षमा कीजिए के-से वाक्य दोहरा रहे थे. वह कह रहा था——मेरा कसूर है. मैं कह रहा था——मेरा दोष. फर्क इतना रह गया कि हमने खुद को गालियां देना नहीं शुरू कर दिया. अगर देते तो दफ्तर को लेट हो जाते. . .

मगर एक बात तय है, बाकर भाई, इस आधी रात और सवा दिन में हम दोनों हिंदुस्तानी हो चुके थे.

□ □ □

१८, सेठिया सदन, माटुंगा, बंबई ४०००१९.

खलील जिब्रान की दो लघुकथाएं

अश्रु और हास्य

एक बार संध्या के वक्त नील नदी के तट पर एक मगर और एक लकड़बग्घे की मुलाकात हो गई. दोनों ने परस्पर अभिवादन किया और सुख-दुख की बातें करने लगे.

लकड़बग्घे ने कहा— कहो भाई मगर, अच्छे तो हो न?

मगर ने रोते हुए कहा— नहीं मेरे दोस्त! मेरे दुखों की तो कोई सीमा नहीं. जब वेदना और शोक में व्याकुल हो कर मैं आंसू बहाता हूं, तब सब लोग बोल उठते हैं, 'अरे! यह तो मगर के आंसू हैं!' तुम ही सोचो, ये शब्द सुन कर मेरा हृदय कैसा चूर-चूर हो जाता होगा!

लकड़बग्घा अपनी तान में बोला— ठीक कहते हो, बंधु! इन दुनिया वालों से तो मैं भी तुम्हारी ही तरह दुखी हूं. जब-जब मैं अनिमेष दृष्टि से सृष्टि के सौंदर्य, चमत्कार और विचित्रताओं को देख कर आनंदातिरेक से, मुक्त भाव से, हंसता हूं, तो लोग कहते हैं, 'जाने दो, यह तो लकड़बग्घे का अट्टहास है!' तब मुझ पर क्या बीतती होगी!

□

दृष्टि-भेद

एक बार एक व्यक्ति को अपने खेत में से संगमरमर की एक खूबसूरत प्रतिमा प्राप्त हुई, जो सैकड़ों वर्ष पुरानी लग रही थी. यह प्रतिमा ले कर वह एक ऐसे व्यक्ति के पास गया, जो रम्य व दुर्लभ वस्तुओं का चाहक और धनिक था.

कलाप्रिय धनिक ने बहुत भारी मूल्य चुका कर वह प्रतिमा खरीद ली. फिर दोनों अलग हो गये.

प्रतिमा बेचने वाले व्यक्ति के मन में विचारों का तूफान पैदा हो गया— इतने अधिक धन से मेरा जीवन कितना परिवर्तित हो जायेगा! किसी को पता ही नहीं कि सैकड़ों वर्ष तक भूमि में गड़े, तराशे हुए पत्थर के एवज में इतना धन भी मिल सकता है! लोग भी कैसे हैं, धन यूं ही नष्ट कर डालते हैं!

इधर कलाप्रिय धनिक विचारों में मग्न था— अहा, क्या सौंदर्य है! कैसा जीवन! आत्मा का कैसा स्वप्न! सैकड़ों वर्षों की निद्रा से जागृत और ताजा एवं मधुर! मृत एवं व्यर्थ धन के बदले में कोई ऐसी अनमोल प्रतिमा कैसे दे सकता है?

□

(प्रस्तुतकर्ता : यूसुफ गुजरीवाला)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीर बीमार हुए

• फ़िक्र तौंसवी

मैं बहुत लज्जित था कि मुझे कोई सीरियस बीमारी नहीं होती थी, होती भी तो नजला-जुकाम में बदल जाती ! रिश्तेदार मुंह छिपा कर ताना दिया करते कि इन नाम मात्र की बीमारियों पर कोई आपको क्यों हमदर्दी दिखाये. मेरी बीवी तो कनखियों से कई बार संकेत कर चुकी थी कि मैं आप के लिए मर-मिटने को तैयार हूं, लेकिन इसका कोई ठोस आधार भी तो हो!

और न जाने मेरे किस शुभचिंतक की प्रार्थना सुनी गयी कि एक दिन सुबह को शेव करके उठा, तो मेरे डगमगाते पांव ने पुकारा—लेना कि चला मैं ! मेरी बीवी, जो शायद इसी शुभ घड़ी की प्रतीक्षा में अधेड़ हो गयी थी, फौरन डाक्टर को बुला लायी.

डाक्टर ने कहा—यह डगमगाहट ही नहीं है, सीरियस बीमारी है.

बीवी की जबान से अनायास निकला—हे भगवान, यह सीरियस बीमारी इनकी बजाय मुझे लग जाये!

डाक्टर ने रूलिंग दी—यह फैसला अस्पताल में जा कर होगा कि बीमारी किस जिस्म के लिए अनुकूल है.

बहुत-से दोस्त और रिश्तेदार जमा हो गये और कहने लगे कि खुदा का शुक्र है, अब मैं सीधे रास्ते पर चल पड़ा हूं. उनकी आंखों में खुशी के आंसू आ गये. उन्होंने तालियां पीटीं. मेरी बीवी ने भावुकता में कांपते शब्दों में कहा कि मेरे तंदुरुस्त हो जाने पर वह अनाथों को खाना खिलायेगी.

अस्पताल के बड़े डाक्टर ने मुझे बताया कि यह नर्वस ब्रेक डाउन की बीमारी है. हो सकता है कि कई बरस लग जायें.

—कई बरस. . . . ! मुझे अनाथों का भविष्य बहुत खतरे में दिखाई दिया.

अस्पताल के बेड पर लेटते ही मुझे बेहद संतोष हुआ कि अब मैं कई लोगों को ओब्लाइज कर सकूंगा. मेरे दोस्त हमदर्दी दिखा सकेंगे. रिश्तेदारों को ठंडी आहें भरने का मौका मिलेगा. मेरे एक बार होंठ हिलाने पर वे गरदन कटवाने को तैयार हो जायेंगे.

और मैं शुक्र करूंगा कि जिंदगी में किसी के काम तो आया, वरना इसके पहले तो जिंदगी जैसे उजाड़ बियाबान मरुस्थल में से गुजर रही थी. न किसी के आंसू, न मुसकराहट, न भावनाओं से चूर-चूर होंठ.

मेरे एक जिगरी दोस्त ने एक दोस्त के टेलीफोन पर मेडिकल सुपरिटेंडेंट से कह दिया कि इस रोगी को तुरंत एक बेड दिया जाये. अस्पताल में बेड उपलब्ध होने का मतलब होता है जैसे किसी बेरोजगार को नियुक्तिपत्र मिल जाये.

मुझे अपने दोस्त की इस गिरावट पर तरस खाना चाहिए था, लेकिन दोस्त की खुशी मुझे बेड मिल जाने में छिपी थी, इसलिए उस गिरावट को शहद का घूंट समझ कर पी गया.

तीन-चार दिनों तक मैं देखता रहा कि दोस्त और रिश्तेदार अत्यंत सरगर्म हो गये हैं. वह क्षण-क्षण भर की अपनी दौड़-धूप की रिपोर्ट ले आते और मेरे गले में उड़ेल देते. कोई बताता कि अस्पताल का हार्ट स्पेशलिस्ट मेरे कालेज का साथी है और मुझसे मैथमेटिक्स की गाइड बुक ले जाया करता था. कोई रहस्योद्घाटन करता कि ब्लड बैंक के इंचार्ज से मैंने कह दिया है आप भाग्यशाली हैं कि आप के अस्पताल में एक महान रोगी दाखिल हुआ है. यह इंचार्ज मेरी मौसी का चौथा बेटा है. उसकी लव मैरिज के पहिले के सभी लव लेटर मैंने ही लिख कर दिये थे. एक दोस्त ने तीन अखबारों में मेरे चित्र और बीमारी की खबर बेहद जोशीले अंदाज में प्रकाशित करवा कर खुशी प्राप्त की, जैसे उसने मुझे मरने के बाद स्वर्ग की सीट दिलवा दी हो. चार-पांच दोस्तों ने कॉफी-हाउस में एक प्रस्ताव पास करवा दिया कि भगवान न करे, अगर फिक्र तौंसवी की मौत हो गयी, तो पूरे कॉफी-हाउस के सदस्य न केवल एक साथ मरघट तक जायेंगे, बल्कि उनके बचे-खुचे परिवार के लिए चंदा भी जमा करेंगे.

यूं लग रहा था, जैसे सारा भारत मेरी बीमारी के लिए जिंदा है. कई डाक्टर बारी-बारी आते और मुझे लेबोरेटरी समझ कर परीक्षण शुरू कर देते, जैसे ये डाक्टर न हों, स्कूल के छात्र हों और मैं एक कापी हूं, जिस पर वह होम वर्क कर रहे हों. मैंने एक डाक्टर से पूछा—जनाब, आप को बीमार से प्रेम है या बीमारी से?

वह बोला—बीमारी से, क्योंकि हम बीमार पर रिसर्च कर के बीमारी तक पहुंचते हैं. आप पर की गयी रिसर्च से मानव समाज को भी लाभ पहुंचेगा.

—और अगर मैं न आता तो मानव समाज क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या होता?

इसके उत्तर में डाक्टर ने अपने असिस्टेंट को आदेश दिया—इस बीमार की बी. सी. जी. करायी जाये. दिमाग में जरूरत से ज्यादा खराबी दिखायी देती है.

मैं सोच रहा था कि अस्पताल में मुझे रोमांटिक वातावरण मिलेगा. सुन रखा था कि कई लेखक अस्पताल में जा कर उपन्यास तक लिखते हैं और बीमारी को आधुनिक साहित्य में वृद्धि का साधन बनाते हैं. उनमें से कई एक नर्सों से प्रेम भी करने लगते हैं, कई नर्सें उपन्यासकार की आत्मा के नरम कोने में दुलहन बन कर घुस जाती हैं.

★ ★

दूसरे दिन जब मैं धम्म से किसी नर्स के आने की प्रतीक्षा में आंखें बंद किये पड़ा था, किसी ने मेरा कंधा झकझोरा. यह वाकई नर्स थी. मैंने आंखें खोल कर देखा. नर्स खूबसूरत नहीं थी. उसने पहले मुझे सूंघा और फिर वातावरण को सूंघा, जैसे उसे अहसास हुआ कि वातावरण अपूर्ण है, इसलिए उसने मेरे बेड के सिरहाने एक मैले-से गत्ते पर मेडिकल चार्ट लटका कर वातावरण को पूर्ण कर दिया. और मुझे ऐसा अनुभव हुआ, जैसे उसने मेरी कब्र पर दिया जला दिया हो.

मेरा खयाल था और खेदजनक सीमा तक गलत खयाल था कि डाक्टर जब बीमार की सेवा करते हैं, तो उसे मनुष्यता का उदय समझते हैं. लेकिन जब मैंने तनिक निकट हो कर देखा, तो यूं अनुभव हुआ, जैसे वे मनुष्यता से ऊब चुके हैं. वे जब बीमार का ब्लड प्रेशर देखते हैं या उसके हार्ट जिगर और फेफड़ों की रिपोर्ट का अध्ययन करते हैं, तो उन्हें यूं अनुभव होता है, जैसे आलू छील रहे हों.

एक दिन मैंने एक डाक्टर से पूछा—डाक्टर साहब, आपके भीतर की जनसेवा की भावना क्यों मर गयी?

वह जैसे दो-दूनी चार का पहाड़ा पढ़ते हुए बोला—वह तो उसी दिन मर गयी थी जब मैंने ऐसे अस्पताल में नौकरी के लिए बरसों अपने घुटनों और माथे को

[illegible] एक अत्यंत भोंडे[?], अमानवीय शक्ल के उच्चाधिकारी को समय का जहांगीर और युसूफ कहा था.

यह सुन कर मुझे संदेह हुआ कि मेरी सभी भावनाएं अछूत हैं. डाक्टर मेरी भावनाओं को हाथ नहीं लगाना चाहता. वह केवल अस्पताल के मुरदा कायदे-कानून के चौखट में घूमे जा रहा है. इस चौखटे के बाहर की दुनिया अछूतों की दुनिया है. डाक्टर के लिए सब बीमार एक समान हैं. सब बोर हैं. सब अछूत हैं.

मौंड़े अधिकारी ने डाक्टर से मानवता छीन ली. अब तो वह किसी लेडी डाक्टर से भी प्यार करने के पहले देख लेता है कि उसका वेतन कितना है.

दोस्तों और रिश्तेदारों तक बेड नंबर की सूचना पहुंचा दी गयी थी. सूचना के बावजूद यार-दोस्त एक-दूसरे से पूछते फिरते—भाई, फिक्र साहब का बेड-नंबर कौन-सा है?

मगर कई दोस्त आते और मेरा दिल बढ़ाते. मैं हड्डियों का ढांचा बनता चला जाता. मेरा दिल चाहता, मेरी हड्डियों की संख्या स्पष्ट होती चली जाये, ताकि मैं हाल पूछनेवालों की मुहब्बत के जाम उड़ेलता रहूं. लेकिन लगता था कि मेरे इस षड्यंत्र की योजना का पता दोस्तों और रिश्तेदारों को लग गया और धीरे-धीरे उनकी संख्या कम होती गयी. यहां तक कि एक दिन आंखों से बिलकुल ओझल हो गयी और मेरे बेड के पास केवल कुछ शीशियां, एक मेडिकल चार्ट और एक बीवी रह गयी. यह सोच कर कि बीमारी जुदाई की रात की तरह लंबी हो गयी है और जिंदगी सिर्फ बीमारी के गिर्द तो नहीं घूमती, कई और महत्वपूर्ण काम भी हैं, जैसे पतंग उड़ाना, चोर-बाजारी करना, लड़कियों से छेड़खानी करना. फिक्र तौंसवी की बीमारी जिंदगी का एक तुच्छ-सा हिस्सा है.

और इस तरह धीरे-धीरे मैं रुचिहीन होता गया. सहानुभूति और खलूस की बाढ़ एकदम तेजी से शाम के सूर्य की तरह डूब गयी. यहां तक कि डूबती किरणों की लाली भी नजरों से ओझल हो गयी और मैंने पहली बार अनुभव किया कि बीमारी को आदत नहीं बनाना चाहिए.

बंबई से एक कहानीकार दोस्त ने पत्र लिखा—तुम भाग्यशाली हो कि दिल्ली में बीमार पड़े हो और तुम्हारा हाल पूछनेवाले टोलियों में आते हैं. लेकिन मेरा दुर्भाग्य कि मैं बंबई में बीमार पड़ा हूं. यहां किसी को किसी की खबर नहीं. हर आदमी अपने बदन की छोटी-सी दुनिया से बाहर देख ही नहीं सकता. छह मास से अपने घर में पड़ा हूं और किसी हाल पूछनेवाले के लिए तरस गया हूं. कल किसी ने मेरे कमरे का दरवाजा खटखटाया, तो मैं बेहद भावुक हो गया. आनेवाले ने पूछा—साहब, क्या बात है, आप तो कुछ बीमार दिखाई देते हैं. किसी अच्छे डाक्टर से इलाज कराइए. मैं तो बाई दि वे आपके घर में एक जरूरी टेलीफोन करने आया था, इजाजत हो, तो कर लूं?

दूसरे दिन एक दोस्त तशरीफ लाये. बोले—फिक्र साहब, मैं पूछने आया था कि उस नाटक का क्या बनेगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

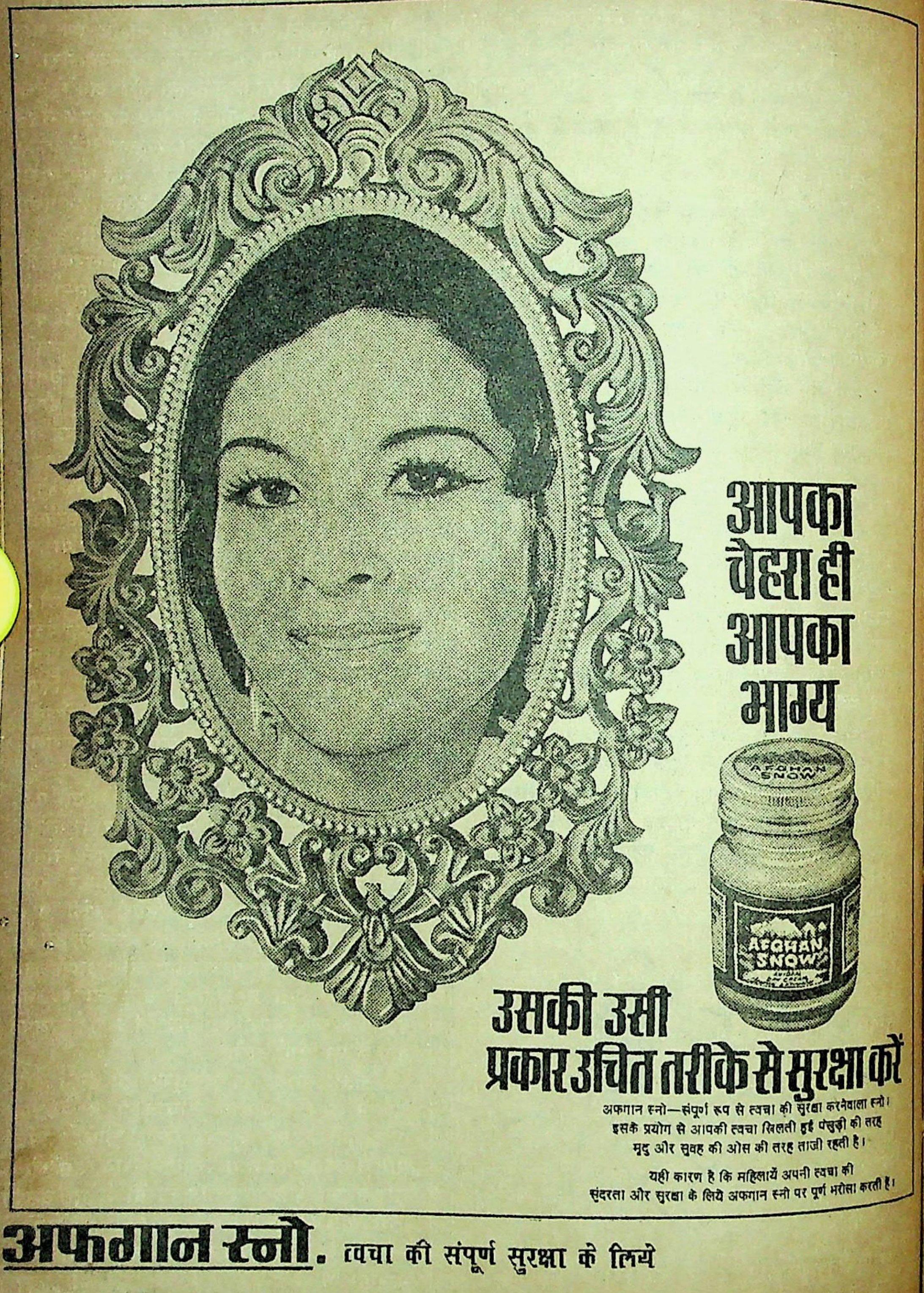

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसके अभी तीन दृश्य लिखने बाकी हैं? नाटक का पूरा होना तो बेहद जरूरी है.

—श्रीमान, नाटक से मेरी बीमारी अधिक जरूरी है. मैं तंदुरुस्त होने के बाद ही उसे लिख सकूंगा.

—आप जल्दी तंदुरुस्त हो जाइए. यह आपके लिए आलूबुखारा लाया है. खायें और बतायें कि क्या बीमारी के दौरान आप नाटक पूरा नहीं कर सकते?

एक निकटतम रिश्तेदार पलकों को थरथराते हुए मेरे बेड के पास आये. मेडिकल चार्ट उठा कर आंखों से लगाया और बोले— खुदा चाहेगा, तो आप जल्दी तंदुरुस्त हो जायेंगे.

मैंने निवेदन किया— आपको इतनी क्या जल्दी है?

वह रुआंसे हो कर बोले— आपकी भतीजी की शादी की समस्या थी. आपकी बीमारी के कारण रुकी हुई है. दिन निश्चित करना है. लड़के वाले बहुत परेशान कर रहे हैं.

—गलती मेरी थी कि कलियुग में बीमार हुआ. आप शादी कर दीजिए. मेरी बीमारी पर भरोसा मत कीजिए.

* *

कुछ दिन बाद पता चला कि उन्होंने शादी कर दी है. मेरी आंखों से एक आंसू भी न टपक सका, जिसे मैं उनके दावत के कार्ड पर गिरा सकता. हां, मैंने एक बुद्धिमानी का कदम जरूर उठाया कि अस्पताल का नियम तोड़ कर घर चला आया. हाल पूछने वालों पर भरोसा करके बीमार रहते चला जाना मुझे अनावश्यक लगा.

उसके बाद मैं हरेक दोस्त और रिश्तेदार के घर जा कर सूचना दे आया कि मैं अब भी बीमार हूं, इसलिए मौका है कि आ कर मेरा हाल पूछ जाओ.

एक दोस्त उलटा शिकायत करने लगे— वाह फिक्र साहब, आपने भी कमाल कर दिया! मैं अस्पताल आपका हाल-चाल पूछने के लिए पहुंचा, तो पता चला कि आप डिस्चार्ज हो कर घर चले गये. आखिर इतनी भी क्या जल्दी थी?

अस्पताल से बाहर आ कर मैंने महसूस किया कि दुनिया वैसी-की-वैसी ही है. किसीको किसीसे दिलचस्पी नहीं. हरेक आदमी एक-दूसरे के साथ कहकहे लगाने में व्यस्त है. उनकी महफिल में कौन आया, कौन गया, कौन मर गया, किसकी हड्डी टूट गयी, किसकी आंख फूट गयी, इन सबसे अनजान इस दुनिया का हर व्यक्ति अपनी ही कुछ सांसों में लीन है और मुझे भी अपनी इन महफिलों में उन्होंने यूं खपा लिया, जैसे मैं बीमार नहीं हूं, जैसे मैं कभी बीमार नहीं हुआ था!

□□□

द्वारा/दैनिक मिलाप, ८ ए, बहादुरशाह जफर मार्ग, नयी दिल्ली-१

नागा लोक-कथा

चीते से ब्याह

एक दिन एक स्त्री सब्जी लेने के लिए अपने खेत में गयी. उसे एक अच्छा करेला दीखा. वह उसे तोड़ने जा ही रही थी कि एक चीते ने उसे देख लिया और चिल्लाया—वह मेरा है. तुमने उसे छूने की हिम्मत कैसे की? अब मैं तुम्हें मारे बिना नहीं रहूंगा, और यह कह कर उसने उसे दबोच लिया. किंतु स्त्री, जिसका गर्भ आठवें महीने में था, बोली—कृपा करो, मुझे मत मारो. बच्चा होने पर वह मैं तुम्हारे हवाले कर दूंगी. यह सुन कर चीते ने उसे मुक्त कर दिया.

वक्त आने पर उस स्त्री ने एक लड़की को जन्म दिया. उधर जब चीते ने यह समाचार सुना तो स्त्री से उसके बारे में पूछा. हार कर उसे बताना ही पड़ा कि कुछ वर्ष पहले उसके एक लड़की पैदा हुई थी. जब-तब चीता उससे पूछा करता कि लड़की ईंधन जुटाने योग्य, पानी लाने योग्य हो गयी है अथवा नहीं? वह यह भी पूछना न भूलता कि वह ब्याह के लिए सयानी हो चुकी है अथवा नहीं? किंतु स्त्री हर बार कोई न कोई बहाना बनाया करती. लड़की सयानी हो गयी. अब स्त्री को अपने वचन का पालन करने को मजबूर होना पड़ा.

नियत दिन पर उसने लड़की की शादी चीते से कर दी. एक साल के बाद उनके एक लड़की पैदा हुई. वे उसकी अच्छी देखभाल करते, चीता जहां भी जाता, साथ में बेटी को लेता जाता. किंतु जब भी वह उसे साथ ले जाने लगता वह चीखने-चिल्लाने लगती. चीते की पत्नी ने उससे इसका कारण जानना चाहा.

चीते ने बताया कि उसकी मूंछें उसे गड़ जाया करती हैं और इसी कारण वह रोया करती है. किंतु उसकी पत्नी को इस पर यकीन न आया. एक दिन जब चीता बेटी को साथ ले कर जाने लगा तो वह भी छिप कर पीछे-पीछे चली. क्या देखती है कि स्थान पर पहुंच कर चीता ने उस का सिर एक शिला पर पटक दिया और उससे खून बहने लगा. चीता उस खून को चाट रहा था. वह इतना अधिक भयभीत हो गयी कि तुरंत अपने बाप के घर भाग चली.

चीता भी वहां पहुंच चुका था. मां और चीते में लड़की के लिए खींचातानी होने लगी यहां तक कि उसके टुकड़े-टुकड़े हो गये. उसकी सास ने लड़की का मांस पकाया. उसने उसे खाया और उसका कुछ भाग चीते को भी दिया. उसका स्वाद चीते को अच्छा लगा, तभी से हम कहते हैं कि चीता अपने भोजन के लिए इंसानों को मारने लगा.

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिंदा पकड़नेवाली गाड़ी

• गयास अहमद गद्दी

सुबह होती, दिन चढ़ता और सूरज जब ठीक शिखर पर पहुंचता, शहर में एक ऐसी गाड़ी आती, जो शहर के परिंदों को पकड़ कर ले जाती. ठीक वैसे ही, जैसे म्युनिसिपैलिटी की गाड़ी कुत्ते पकड़ने के लिए निकलती है. यह गाड़ी, जो चारों तरफ से रंगीन शीशों से बंद बेहद खूबसूरत होती कि निगाह उठ कर दाद देती, इसके चारों तरफ नन्हीं-नन्हीं घंटियां बंधी होतीं, जो चलते वक्त धीरे-धीरे बज रही होतीं. घंटियों की आवाज अजीब होती, कुछ ऐसी, जैसे कोई सहर फूंक रहा हो. एक लंबा, खमीदा-कमर, जर्दरू आदमी गाड़ी को खींच रहा होता. बिल्कुल उसी तरह दूसरा आदमी गाड़ी के पीछे चल रहा होता, जिसके हाथ में पतला-सा, बहुत लंबा बांस होता. बांस के सिरे पर ब्रश जैसा गुच्छा-सा होता, जिस पर गोंद या उसी तरह की चिपक जाने वाली लसदार रोतूबत लगी होती, जिससे वह परिंदों को पकड़ता था.

दीवार पर, छतों की मुंडेरों पर, टेलीफोन के खंभों, पेड़ों, या फर्श पर दाना-दुनका चुनते हुए परिंदे जहां नजर आते, वह आदमी बांस को आगे बढ़ा देता और जिन परिंदों के परों पर लसदार रोतूबत लगा हुआ गुच्छा छुला देता, पहले तो वे परिंदे तड़पते, छटपटाते, उड़ने की कोशिश करते, फिर थक-हार कर लसदार रोतूबत से चपड़-चपड़ करते हुए परों की कूवते परवाज के उलझ जाने के कारण एक तरफ औंधे हो कर लुढ़क जाते. तब वह आदमी जल्दी-से बढ़ता और दोनों हाथों से झपट कर परिंदों को पकड़ता, धीरे-से गाड़ी के छोटे-से दरवाजों को खोलता, उसमें परिंदे को ढकेल देता, दरवाजा बंद करता, फिर गौर से शीशे के अंदर देखता, जहां परिंदा फड़फड़ा कर थक जाता. उस वक्त उस आदमी के चेहरे पर अजीब-सी हंसी बिखर जाती और आंखें अंधेरे में बिल्ली की आंखों की तरह चमक उठतीं.

हर रोज जैसे सूरज सरों पर आता, तेज किरणें सरों पर गड़तीं, पच्छिमी दरवाजे की जानिब से छोटी-छोटी घंटियों की सदा सुनाई देती. जरा देर बाद बड़ी सुबुक खरामी से एक आदमी, जिसका चेहरा बेहद जर्द होता और जिसकी आंखें नीमदा होतीं, जिसकी कमर से पतली-सी रस्सी लिपटी होती, जो गाड़ी के सिरे से बंधी होती और वह नीम गनूदगी के आलम में चलता बढ़ा आता. फिर जहां कोई चिड़िया, कोई परिंदा नजर आता, वह आदमी आप-ही-आप रुक जाता और अपने पीछे जाने वाले आदमी को परिंदे की तरफ इशारा करता.

यह रोजमर्रा का दस्तूर होता. दुकानदार दुकानों में होते, राहगीर चलते-चलाते रहते, मोटरकारें तेजी से पूं-पां करतीं गुजरती होतीं, जूता गांठने वाला गांठता रहता, खरीदोफरोख्त रहती, शोरोगुल से कान पड़ी आवाज सुनाई न देती, लेन-देन का बाजार इतना जवां होता कि अव्वल तो गाड़ी की तरफ किसी की नजर ही न उठती, लेकिन उनमें से किसी की नजर उठ भी जाती, तो वह सहरजदा-सा इस अजीबो-गरीब गाड़ी और उसके हुस्न को देखने में खो जाता.

कभी ऐसा भी होता कि कोई आदमी चौंकता और जरा हौसले से उठता. गाड़ी वाले जब उस आदमी को करीब आते देखते, तो झट अपनी लंबी जेब में हाथ डालते और चंद सिक्के निकाल कर उसकी तरफ उछाल देते. फिर वह आदमी सिक्के चुनने में ऐसा लीन हो जाता कि उसे किसी चीज का होश ही न रहता. लोग यह मंजर देखते और आंखों और चेहरों से हैरत का इजहार करते. इस वक्त उनकी आंखें फटी-की-फटी रह जातीं. यह भी कुछ ज्यादा देर नहीं रहता, फकत चंद मिनट, दस या बीस मिनट तक. फिर हैरत का यह वक्फा कम होता गया और होते-होते महज चंद सेकंड रह गया, तो अब उसके बाद वह मंजिल आने वाली थी कि लोग-बाग अपने कामों में मसरूफ हैं और परिंदे पकड़ने वाली गाड़ी आ गयी है, और परिंदे पकड़ती चली जा रही है और आदमी है कि उसकी ओर नजर उठा कर देखता भी नहीं.

* *

ऐसी ही कैफियत वाला एक दिन था, जब मैंने एक दुकानदार को जलेबियों के थाल की तरफ इशारा करते हुए कहा कि यहां देखो, जलेबियों पर कितनी मक्खियां बैठी हुई हैं! अभी, जब शहर में बीमारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फैली हुई है, ये मक्खियां किसी खतरनाक [illegible]

—मक्खियां . . . ? हलवाई ने काहिली से हाथ उठा कर मक्खियों को उड़ाने की कोशिश की. मक्खियां जरा देर को उड़ीं, फिर जलेबियों के थाल पर टूट पड़ीं.— हां, मक्खियां तो साली उड़ती ही नहीं!

हलवाई ने मेरी जानिब गौर से देखते हुए कहा— मगर तुमको क्या साहब, तुमको तो नहीं खरीदना!

मैंने जवाब में इनकार किया, तो हलवाई ने आंख मारी और सरगोशियों से जरा करीब के लहजे में कहा— और मुझको क्या साहब, मुझको भी तो खाना नहीं!

बस, यहीं से मैं चौंक गया कि असल बात क्या है. . . परिंदे पकड़ने वाली गाड़ी आती है और शहर के परिंदों को पकड़ कर ले जाती है और कोई पूछने वाला तो क्या मिलेगा, कोई खुदा का बंदा पलट कर देखता भी नहीं है. . .मेरी समझ में बात आ गयी. मेरी पेशानी पर जो बहुत देर से, बल्कि कई दिनों से, एक त्यौरी किसी संतरी की तरह खड़ी देख रही थी, सिमट गयी. फिर मैं हंसा और मैंने भी जरा गुफ्तगू के जरा दूर के लहजे में कहा—तो भाई हलवाई, एक काम करो न, उन गाड़ी-वालों की तवज्जो मक्खियों की जानिब मबजूल करा दो . . . !

हलवाई चौंक गया और उसने मुसकरा कर मेरी जानिब देखा. लेकिन पल भर में संजीदा हो गया.— अरे हां . . . मगर क्यों साहब, मुझे इस झंझट से क्या फायदा?

—ये, जो मक्खियां जलेबी का सारा रस . . .

—हां, यह तो ठीक कहा है, सारा रस चूसे चली जाती हैं कमबख्त . . . . ! मगर साहब, मुझे इससे क्या

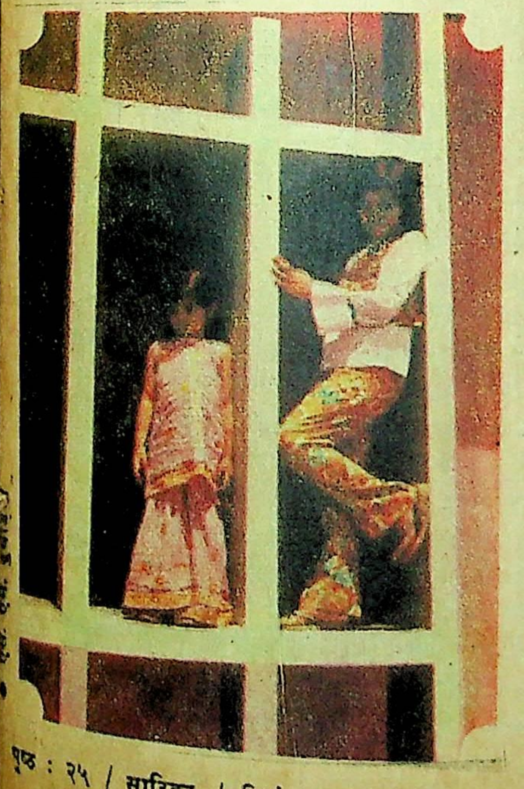

[illegible] मुझे तो फायदा है.

—वह क्या? मैंने हलवाई की आंखों में आंखें डाल कर पूछा. फायदा कैसे है? हलवाई पहले हंसा, फिर उसने अपनी वनस्पति में चुपड़ी हुई तोंद पर हाथ फेरा और बेहद संजीदा हो कर मेरी तरफ झुक गया. बाबू, तुम क्या जानो दुनियादारी! यह राज की बात है. दुनिया ऐसे नहीं चलती . . . ! फिर हलवाई खामोश हो गया और जरा गहरे हो कर फिर बोला —पर तुम मेरे हमदर्द लगते हो, इसलिए बताता हूं, किसी से कहना नहीं . . . तो बाबू, जलेबियों का यह रस, जो मक्खियां चूसती हैं, तो फिर रस और मक्खियां कहां जाती हैं, जरा इतना तो बताओ?

—कहां जाती हैं, मुझे पता नहीं. हलवाई मियां, तुम्हीं बताओ?

—कहीं नहीं जातीं. हलवाई फैसलाकुन लहजे में बोला. रस मक्खियों के पेट में और मक्खियां जलेबियों के साथ पलड़े पर. समझे बाबू? ऐसे फायदा हुआ!

लेकिन मैं बहुत देर तक समझ न सका और बहुत देर तक बेवकूफों की तरह हलवाई के चेहरे को तकता रहा. हलवाई फिर हंसा, फिर उसने मूंछों पर ताव दिया.— नहीं समझे अब भी. . . ?

अभी हमारी गुफ्तगू यहीं तक पहुंची थी कि पश्चिमी दरवाजे की जानिब से घंटियों की आवाज सुनाई पड़ी और मेरी तवज्जो उसकी तरफ मबजूल हो गयी. जरा देर बाद वह जर्दरू, खमीदा-कमर आदमी दिखाई पड़ता है, हस्ब दस्तूर उसकी कमर से पतली-सी रस्सी बंधी हुई थी, जिसके पिछले सिरे पर वह गाड़ी फंसी हुई थी. आदमी उसी काहिली से सड़क पर आहिस्ता-आहिस्ता चलते हुए आगे बढ़ा, फिर गाड़ी सामने आयी, जिसके रंगीन शीशों के अंदर दो कबूतर और एक गोरैया बंद थे. कबूतर तो सर नेहुड़ाये एक तरफ खड़े थे या फिर धीरे-धीरे काहिली से सरकदमी कर रहे थे, लेकिन गोरैया तेजी से इधर-उधर फुदकती फिर रही थी और बहुत बेचैनी के आलम में थी.

* *

अब गाड़ी बीच चौराहे पर आ गयी थी. धूप रोज के बनिस्बत खासी सख्त थी और गाड़ी घसीटने वाला हाथ को आंखों के ऊपर छज्जे की शक्ल में किये आस-पास मुतजस्सिस नजरों से झांकता फिर रहा था. फिर वह ठहर गया. सामने नाली के किनारे पर एक परिंदा प्यास से बेहाल झुक-झुक कर नाली से पानी पी रहा था और गरदन उठा कर इधर-उधर देख भी रहा था. उसे किसी बात का डर भी लगा हुआ था. तभी गाड़ी खींचने वाले आदमी ने बांस वाले साथी को इशारा किया. बांस वाले ने चुपके से लपक कर परिंदे को जा लिया. जरा देर बाद उसने रंगीन शीशों वाली गाड़ी के दरवाजे का पट खोला और धीरे से परिंदे को अंदर ढकेल दिया. परिंदा एक तरफ लुढ़क गया, तो फुदकती हुई गोरैया एक बार जोर से शीशों पर फड़फड़ाने लगी, गोया बंद शीशों को तोड़ कर निकल भागेगी. बांस वाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ादमी ने मुसकरा कर, शीशे के अंदर झांक कर देखा. सके चेहरे और आंखों में चमक आ गयी. फिर उसने शीशे पर हलकी-हलकी थपकियां दीं. गोरैया सहम कर क तरफ हो गयी.

इसके बाद वैसी ही हलकी चाल से गाड़ी आगे बढ़ी. ंटियों की आवाज खामोश फिजा में सुनाई दी—टन, न, टन ...टन...टन...टन. जरा देर बाद गाड़ी जरों से ओझल हो गयी.

★ ★

—गयी ... चली गयी.

—हां, चली गयी ...उस परिंदे को भी ले गयी. ब फिजा का सहर टूटा, तो गाड़ी उत्तरी इलाके के स्त ढलान में उतर चुकी थी. अब दिखाई भी नहीं दे ही थी. फकत उसके पहियों से उड़ती हुई धूल थी, ो धीरे-धीरे फिजा से हाथ छुड़ा कर बैठ रही थी. फिर द मिनट बाद तमाशबीनों के चेहरों पर जो हैरत के अस-ात थे, वे जायल हो गये और वे अपने-अपने कामों में सरूफ हो गये.

—अच्छा भाई जान, यह परिंदे वाली गाड़ी ...?

सवाल करने वाला रुक गया, और खासी देर तक क गया. तब मैंने पलट कर देखा. ठीक मेरी पुश्त पर क दस-ग्यारह साल का लड़का खड़ा मेरी तरफ मुज-सम सवाल बना तक रहा था.

—यह परिंदे वाली गाड़ी थी. वह लड़का इतना ह कर फिर रुक गया, जैसे उसे खुद पता नहीं कि पूछना या है.

—हां-हां ...मियां, क्या पूछना चाहते हो, परिंदे ाली गाड़ी के मुताल्लिक?

—जी भाई जान, इतना कि. .यह कैसा गाड़ी है.— रिंदे पकड़ने वाली?

—हां, मियां, हम भी यही सोच रहे हैं कि क्या ाड़ी है! हर रोज दोपहर में आती है और शहर के जितने रिंदे मिलते हैं, समेट कर चल देती है!

—अच्छा, भाई जान...! जरा देर बाद इस ड़के ने यूं चौंक कर सवाल किया, गोया अचानक कोई ात याद आ गयी हो. अच्छा, भाई जान, क्या ये लोग ाजी के लका को भी ले जायेंगे?

—हां, जरूर ले जायेंगे, देखने की देर है!

—फिर बाजी अच्छी कैसे होंगी ...? उन्हें लकवा ो गया है न! हकीमजी ने कहा था, दवाओं के साथ का कबूतरों के परों की दवा भी चाहिए! लड़के ने ड़ी हैरत से कहा, यूं कि मैं उसके अफसूर्दा चेहरे की तरफ एकटक देखने लगा.

—हां-हां, बात तो है सोचने की. लका कबूतर को नहीं जाना चाहिए.

—फिर मैं क्या करूं, आप ही बताइए, भाई जान... मैं तो बहुत छोटा हूं...मेरी तो समझ में नहीं आता!

—मेरी भी समझ में नहीं आता, मियां ...और सच पूछो तो मैं भी बहुत छोटा हूं!

—आप छोटे हैं?... वह लड़का खिलखिला कर हंस पड़ा. आप इतने बड़े हैं, वाह ...! वह लड़का फिर कहकहे लगाने लगा.

मैं खामोशी से बदस्तूर उसे देखता रहा और दिल-ही-दिल में कहा, मियां तुम हंस रहे हो?

—भाई जान, एक बात और पूछूं? उसने जरा ठहर कर दूसरा सवाल किया.

—पूछो मियां, वह भी पूछ डालो ...

—आप इतने उदास ...भाई जान, आप कभी हंसते क्यों नहीं?

मेरा जी चाहा, सच कह दूं, कैसे हंसूं मियां, इस कारजा शीशागरी में हंसना कोई खेल है? मगर मैं इस मासूम बच्चे को, जो जरा देर पहले लका कबूतर के चले जाने की फिक्र में उदास था और अब जरा देर में कहकहे लगा रहा था, कुछ नहीं बता सका.

—भाई जान, मैं आपको हंसा दूं?... वह लड़का बड़ी मुहब्बत से मेरी तरफ बढ़ा और मेरी आंखों में आंखें डाल कर बोला—आप कहिए तो मैं आपको हंसा दूं?

पहले तो मैं चौंका. दफ्तन मुझे अजीब-सा लगा, नासमझी में इस लड़के ने जरा अपने कद से बड़ी बात कह दी थी. फिर मैंने जरा मुहब्बत से ताकीद की—मियां, आहिस्ता बोलो. घर जाओगे, किसी ने सुन लिया, तो दूसरों को खबर कर देगा कि यह कैसा लड़का है कि इसकी बहन बीमार पड़ी है और इसका लका कबूतर भी चला जाने वाला है और यह है कि खुद हंसता भी है और दूसरों को हंसाने की भी सोचता है! होश के नाखून लो, मियां, मुफ्त में मारे जाओगे.

—बला से मार दिया जाऊंगा! लड़के ने हौसले में कहा. आप कहिए, तो हंसा दूं आपको?

—हंसा दो, मियां, बड़ा करम होगा...बड़ी मेहर-बानी होगी तुम्हारी!

—तो फिर दोस्ती कीजिए. उसने दोस्ती के लिए अपना हाथ आगे बढ़ा दिया.

—तुमसे दोस्ती? अरे छटंकी, तुम्हारे इत्ते-इत्ते तो मेरे बेटे हैं! मैं तुम्हारे बाप के बराबर हूं!

—तो क्या हुआ, बाप भी दोस्त होते हैं. मेरे मौलवी जी कहते हैं, अच्छे बाप अपने बच्चों के दोस्त भी हुआ करते हैं.

—यह बात है ..तो हुआ दोस्त तुम्हारा आज से! मैंने उसके नन्हे-से, खूबसूरत हाथ पर अपना हाथ दे दिया.

—फिर चलिए मेरे साथ नदी की तरफ. वहां आप और हम, दो ही होंगे. वहां मैं आपको एक चीज दिखाऊंगा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

ले चला . . . मैं पीछे-पीछे और वह आगे-आगे. राहगीर पलट-पलट कर हमारी दोस्ती को देखते रहे और हम पलट कर राहगीरों को तक रहे थे, जिनके कोई दोस्त थे भी या नहीं, जिनके कोई ऐसे प्यारे बेटे थे भी या नहीं. यूं जब हम नदी के करीब पहुंचे, तो उसने पहले तो चालाक निगाहों से दायें देखा, बायें देखा, हर तरफ से इतमीनान हो गया, तो उसने अपने नेकर की जेब से माचिस की एक डिबिया निकाली, मुसकराया, मेरी तरफ पलटा और गहरी सरगोशी में बोला—इसमें है. . .

जवाब में मैंने भी उतनी ही होशियारी से पहले बायें तरफ देखा, दायें तरफ देखा, जब हर तरफ से इतमीनान हो गया, तो उतनी ही सरगोशी में पूछा—क्या है इसमें?

—यह है. . .यह है इसमें! लड़के ने कहा और झट से माचिस के अंदरूनी हिस्से को बाहर ढकेल दिया.

माचिस की डिबिया में मेरी आंखों के सामने एक बेहद खुशरंग-सी तितली नीमजान-सी पड़ी थी, जो बाहर की हवा और धूप लगते ही फड़फड़ाने लगी. उसके नन्हे-नन्हे परों के इर्द-गिर्द जाफरानी रंग बिखरा हुआ था. पैरों के ऐन दरमियान जेरा के बराबर सुर्खी थी और सुर्खी के चारों ओर गुलाबी रंग-सा छिटका हुआ था. परों के किनारे पर अफशां चमक रही थी. डूबते सूरज की रोशनी में बेहद हसीन दीख रही थी.

मैं तितली को गौर से देखता रहा और जरा देर रंगों की दुनिया में खोया रहा. जब तक मैं रंगों में डूबता-उबरता रहा, वह लड़का इतने ही इनहेमाक से मेरे चेहरे के खतो-खाल पर कुछ ढूंढ़ता फिरा. मैंने तितली की तरफ से नजर उठायी, उस लड़के की तरफ देखा, वह कदरे अफसुर्दगी से मेरी तरफ पलटा.—आप तो अजीब हैं, भाई जान! . . . आप तो तितली देख कर भी खुश नहीं हुए!

—हां मियां! . . . मैं चौंक उठा. इस दस बरस के बच्चे ने तो मुझे बहुत दूर पहुंच कर पकड़ लिया. यह तुमने क्या कह दिया मियां कि मैं . . . .

—हां, भाई जान! . . . उसने कतए कलाम करते हुए कहा, आप तो तितली से भी खुश नहीं होते, कैसे हमारी दोस्ती निभेगी? . . . .

—नहीं निभेगी, मियां, कभी नहीं निभेगी!

मैं यह कर आगे बढ़ गया, मगर साथ-साथ तेजी से चलते हुए वह लड़का भी हमराह रहा.—लेकिन भाई जान, वह मेरा लका कबूतर. . .वह गाड़ी . . . .

* *

दूसरे दिन मैं बाजार के सारे लोगों से कहता रहा. . . जूते गांठने वाले मोची से, कपड़े बेचने वाले बजाज से, भीड़ में घिरे रहने वाले डॉक्टर से, रोटी और दाल बेचने वाले से, राहगीरों से, सफेद पतलून वाले तेज रफ्तार बाबू से, बोझ ढोने वाले कुली से, रंगीन दुपट्टे वाली खातून से, जो सड़क पर हौले-हौले यूं चलती हैं गोया सारे जमाने को रौंद कर गुजर जाने का फैसला संजीदा अंदाज की गुफ्तगू में लपके चले जा रहे थे, एक-एक आदमी के [illegible] फिरा. तेज रफ्तार गाड़ियों को रोकने की नाकामयाब कोशिश की कि उस दस साल के बच्चे की जवान बहन लकवा की मरीज है और हकीम जी ने दवाओं के साथ लका कबूतर के परों की दवा के लिए कहा है. अगर ये गाड़ी वाले बच्चे के कबूतर को भी ले गये, तो फिर क्या होगा?

मुझे किसी ने जवाब नहीं दिया. सब अपनी-अपनी दुनिया में मसरूफ रहे. इसलिए मैं दस साल के बच्चे के सवाल को पी गया और कोई जवाब नहीं दे सका. मुझे अफसोस था. उदास, सर झुकाये चला जा रहा था. मेरे पांव थक गये थे.

दोपहर से शाम होने को आ गयी थी. सुरमई अंधेरे का जन्म होने वाला था कि मेरी नजर चौक के कोठे पर गयी, जहां शहर की मशहूर रंडी मुन्नी बाई बालकनी में खड़ी बाल संवार रही थी. मुन्नी बाई के सामने अड्डे पर उसका तोता दायें-बायें गरदन घुमा-घुमा कर झूम रहा था और वह अपने बालों में कंघी करती जा रही थी और तोते को पढ़ाती भी जा रही थी.

मैं चुपके से कोठे पर चढ़ गया. उसके कमरे को ओवूर करके बालकनी में ऐन मुन्नी बाई की पुश्त पर खड़ा हो गया. मुन्नी बाई मेरी आवाज से मुतलिक बेखबर तोते को पढ़ाने में मगन थी—बोल मियां मिट्ठू, नबीजी, रोजी भेजो!

मियां मिट्ठू ने अड्डे में दायें और बायें जानिब रखी हुई दोनों प्यालियों को गरदन घुमा कर देखा, फिर एक प्याली पर झुक कर, हरी मिर्च को कतर कर, मुन्नी बाई की तरफ मुखातिब हो कर बोला—नबीजी, रोजी भेजो . . . ! नबीजी, रोजी भेजो! तोते ने अकड़ कर कहा.

—सो मैं आ गया. उसके पीछे खड़े मैंने आहिस्ता से कहा. मुन्नी बाई सुन कर चौंक उठी. उसने पलट कर मुझे घूरा, जरा देर को सहम गयी, फिर जरा डपट कर बोली—तुम कैसे चले आये जी . . . कौन हो?

—सीढ़ियों से जी . . . मुझे नहीं पहचाना, मुन्नी-बाई? मुझे नबीजी ने तुम्हारे पास भेजा है.

मुन्नी बाई यह सुन कर हंस पड़ी.—अच्छा. . .अच्छा जी चलो, इधर बैठो तख्त पर. उसने कंघी के दांतों से सुनहरे बालों का गुच्छा निकाला, गोली बना कर उस पर थूका, फिर नीचे सड़क पर फेंक दिया.

—बड़ी तोताच म हो मुन्नी बाई, जरा-से में तोते की तरह रंग बदलती हो! जवाब में मुन्नी बाई ने एक और रंग बदला और मुसकरा पड़ी.

तख्त पर बैठे हुए मैंने उसके कदमों पर चौदह रुपये के एक-एक के नोट रख दिये.—मेरे पास इतने ही हैं जी, तुम्हारे नबीजी ने बड़े गरीब आदमी को आज इधर भेजा!

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

—नहीं जी, ये भी क्या कम हैं! .... हम तो अपने आकाओं की खिदमत [illegible] जाते हैं.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन बहुत देर हो गयी और मैंने मुन्नी बाई से कोई खिदमत नहीं ली, तो वह झल्ला गयी.—यहां काहे को आये हो जी? ... और ये रुपये क्यों दिये? ....

—मुन्नी बाई, बुरा न मानो. मैं तो सिर्फ इसलिए आया हूं कि तुमसे भी पूछ देखूं, तुम क्या कहती हो?

—काहे के बारे में?

—ये जो आजकल हर रोज दोपहर में परिंदे पकड़ने वाली गाड़ी आती है, इसको देखती हो?

—हां, देखती हूं कभी-कभी.

—तो तुम्हें कैसा लगता है?

—अच्छा जी ....अच्छा लगता है ...पीले-पीले, लाल-लाल, खूबसूरत शीशों में से चहकते हुए परिंदे भले दीखते हैं.

—बहुत दूर से देखती हो न ...जितनी दूर से तुम्हें तुम्हारे चाहने वाले देखते हैं.

—हां जी, इस बालकनी से.

—मुन्नी बाई, किसी दिन नीचे जा कर करीब से देखो.

—वह क्यों? मुझे इतनी फुरसत नहीं जी! मुन्नी बाई ने नागवारी से मेरी ओर देखा, फिर गालिबन उसे मेरे चौदह रुपये के नोट याद आ गये, तो वह मुसकरा पड़ी.—तुम मुझे जरा करीब से देखो न, जी....

—सो तो देख ही रहा हूं, मुन्नी बाई, और तुम भी देख लोगी, जिस दिन गाड़ी वाले तुम्हारे तोते को पकड़ कर ले जायेंगे ....

—मेरे तोते को क्यों ले जाने लगे! मुन्नी बाई ने कड़क कर बर्जस्ता कहा. यह कोई सड़क पर फिरने वाला आवारा परिंदा है? यह तो पालतू है, मेरा हीरामन.

—हां, मुन्नी बाई, पहले तो वह सड़क पर फिरने वाले परिंदे को पकड़ेंगे, फिर कुछ दिनों बाद लाल-लाल, पीले-पीले खूबसूरत शीशों के पीछे से और परिंदों के दरमियान यह तुम्हारा हीरामन तोता देखने में कितना अच्छा लगेगा! तुम देखो न देखो, सड़क पर चलने-फिरने वाले लोग-बाग और दुकान में सौदा-सुलुफ बेचने वाले बनिये जरूर देखेंगे और सड़क पर जो परिंदे वाली गाड़ी वाले दोनों आदमी सिक्के फेंक देते हैं, उन सिक्कों को और लोगों के साथ तुम भी चुनने लगोगी और यह भूल जाओगी कि ...

—क्या भूल जाऊंगी ...? बहुत-से सिक्के मिल जायें, तो हीरामन को कौन रोता है! गाड़ी वाले अगर ढेर सारे सिक्के फेंक देंगे, तो मैं सब चुन लूंगी. बाजार से नया तोता ले आऊंगी.

—हे-हे मुन्नीबाई, होश के नाखून लो! यह दुनिया है और दुनिया साली बड़ी मतलबी होती है. मान लो, बाजार में तोता न मिला और मिला तो ऐसा पढ़ने वाला न मिला और ऐसा पढ़ने वाला भी मिल गया, तो उसकी जुबान में यह तासीर ....

मुन्नीबाई खिलखिला कर हंस पड़ी और कुछ देर तक हंसते रहने के बाद बोली—वाह, बहुत अच्छा बोलते हो जी! कहां रहते हो? क्या काम करते हो?

—कहानियां लिखता हूं, मुन्नी बाई. रहता-वहता क्या, जहां पाया, रह लिया. जहां चाहा, सो लिया.

—अरे, कहानियां लिखना भी कोई काम हुआ! लगता है, तुम तो हमसे भी गये-गुजरे हो! तुम्हारा धंधा तो हमारे धंधे से भी गया-गुजरा लगता है जी... क्यों जी?

—हां, मुन्नी बाई, तुम तो जरा में इकट्ठे चौदह रुपये रखवा लेती हो और मुझे तो चौदह रुपये हासिल करने के लिए आठ कहानियां लिखनी पड़ती हैं! दो रुपये फी कहानी के हिसाब से जरीदे वाले ने दिये हैं.

—दो रुपये फी कहानी!... ये तो बहुत कम होते हैं! मुन्नी बाई ने मायूसी से कहा. अचानक उसे कोई बात याद आ गयी.—दो रुपये फी कहानी के हिसाब से आठ कहानियों के सोलह रुपये बनते हैं ....बाकी दो रुपये भी निकालो जी .... जल्दी करो!

—हां जी, बनते तो सोलह ही रुपये हैं, मगर एक कहानी तो नाप-तौल में चली गयी.

—नाप-तौल में? अरे वाह! मुन्नी बाई फिर हंसी. नाप-तौल में कैसे चली गयी!

—वह ऐसे कि जब जरीदे वाले के पास पहुंचा, उसे आठों कहानियां पढ़ायीं, तो वह झट अंदर से तराजू ले आया.

—तराजू? कहानियां क्या तौल कर बिकती हैं?

★ ★

—खुदा का शुक्र है, मुन्नी बाई, अभी तो तौल कर बिकती हैं, कुछ दिनों बाद देखना बेतौले ही बेचनी पड़ेंगी!

—अच्छा-अच्छा, फिर वह तराजू ले आया?... मुन्नी बाई ने दिलचस्पी से कहा.

—हां, तराजू ले आया. डंडी मिलायी, तो एक तरफ पासंग था. उसने झट आधी कहानी नोच ली और दूसरी तरफ वाले पलड़े पर रख दी. जब पासंग बराबर हो गया, तो एक तरफ वजन के सात पत्थर रखे और दूसरी तरफ साढ़े सात कहानियां.

मैंने कहा—वजन सात ही पत्थर रखे गये हैं. देखो तो, कहानी वाला पलड़ा कितना झुक गया है ...आधी कहानी तो तुमने पहले ले ली!....

—पहले ले कर आधी कहानी क्या मैं खा गया? पासंग न मिला तराजू का? जरीदे वाले ने चिढ़ कर कहा.

बात सच थी. मैंने जल्दी-से कहा—अच्छा, ठीक है, तुम सच कहते हो, पर दूसरी तरफ का पलड़ा जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतना झुक आया है. मुन्नी बाई, यह सुन कर जरीदे वाला बिगड़ गया. उसकी [illegible] झुक गया, तो दम निकल गया तुम्हारा! क्या सोना तौल रहे हो? कहानियां ही तो हैं!

—सच ही जरीदे वाले ने . . . मुन्नी बाई ने हमदर्दी से मेरी तरफ देखते हुए कहा. फिर मुझे दिलवर्दाश्ता देख कर मुन्नीबाई ने दुख से कहा—वाकई हमारा धंधा तुम्हारे धंधे से बहुत अच्छा है.

—हां, मुन्नी बाई, बहुत अच्छा है, इसीलिए कमी-कमी जी चाहता है, कागज कलम फेंक तुम्हारा ही वाला धंधा शुरू कर दूं.

यह सुन कर मुन्नीबाई बेसाख्ता हंस पड़ी और उसने जल्दी से दोनों हाथों से चेहरे को ढक लिया.—अल्लाह, ऐसा न कर बैठना जी, वरना मुफ्त में हमारी रोटी मारी जायेगी! . . . बहुत देर तक हंसते रहने के बाद जब मुन्नी बाई थक गयी, तो उसे कुछ याद आया.—अच्छा जी, एक कहानी हम पर लिखो! . . .

—नहीं, मुन्नीबाई, तुम पर तो बहुतों ने कहानियां लिखी हैं. मैं तो तुम्हारे तोते पर एक अच्छी-सी कहानी लिखना चाहता हूं.

—लिखो जी, जरूर लिखो, मेरे तोते पर ही लिखो! . . . मुन्नी बाई ने मसर्रत से कहा. मगर क्या लिखोगे?

—यह लिखूंगा कि परिंदा पकड़ने वाली गाड़ी आ गयी है और अब जब बाजार के सारे परिंदे खत्म हो चुके हैं, रंगीन शीशों से घिरी हुई गाड़ी वाले, दोनों जहरीली आंखों वाले आदमी चारों ओर घूर-घूर कर ढूंढ़ते फिर रहे हैं कि कहीं से कोई परिंदा नजर आ जाये. कहीं से कोई गोरैया, उमरी, बुलबुल, कहीं से कोई कर्क, नीलकंठ, कोई मैना, कोई तोता दिखाई पड़े. इतने में उनकी चारों जहरीली निगाहें तुम्हारे तोते पर पड़ती हैं और वे दोनों खिल उठते हैं. फिर लंबे बांस वाला आगे बढ़ता है, चुपके से तोते के बायें बाजू पर लसदार रतूबत वाले गुच्छे को छुआ देता है. तोता फड़फड़ाता है, थरथराता है, उड़ने की कोशिश करता है और बरसों के अड्डे को गैर-महफूज जान कर बालकनी की रेलिंग का सहारा लेना चाहता है, मगर नहीं ले पाता और तड़पता हुआ नीचे आ रहता है, जहां वह खड़ा होता है.

वह लपक कर तोते को उठाता है. तोता चें-चें की आवाज से जोर से चीखता, फड़फड़ाता है, फिर पता नहीं, उसका साथ छोड़ती हुई उड़ान की ताकत कहां से लौट आती है. वह जरा ऊपर उड़ता है, लेकिन फिर गिर पड़ता है.

वह आदमी जिसकी कमर से गाड़ी वाली रस्सी बंधी होती है, अपने दूसरे साथी को देखता है और इतमीनान से मुसकरा देता है, जिसके जवाब में रफीक पहले अपने साथी को देखता है, फिर फर्श पर हांफते हुए तोते को देखता है. इसके बाद फिर अपने साथी को देख कर इतमीनान से मुसकरा देता है और आहिस्ता से आगे बढ़ कर तोते को उठाने के लिए झुकता है . . .

लेकिन दफ्तन तोता उसकी गिरफ्त में आने की बजाय तड़प कर उछलता है और उसकी कनपटियों पर झपटता है और गरदन का गोश्त नोच लेता है.

उस आदमी के मुंह से चीख निकलती है, जिसे सुन कर उसका दूसरा साथी लपकता है और तोते की गरदन पर हाथ डालना ही चाहता है कि तोता घूर कर दूसरे आदमी को देखता है. उसकी छोटी-छोटी आंखें फैल जाती हैं और उनमें लहू उतर आता है. वह अपनी पूरी ताकत को समेटता है और रेल कर दूसरे आदमी पर भी हमला करता है और उसके सारे चेहरे को नोच कर लहू-लुहान कर देता है. वह आदमी भी झल्ला उठता है और जल्दी से अपने दोनों हाथों की मदद से तोते को अलग करता है और उसे जोर से जमीन पर फेंक देता है.

अब दोनों तोते के एक तरफ खड़े हैरत से देख रहे होते हैं और तोता आहिस्ता-आहिस्ता टहलता हुआ कभी पहले आदमी की तरफ जाता है, फिर उसी इतमीनान-खातिर से टहलता हुआ दूसरे आदमी की तरफ लौट जाता है और दोनों को अपनी खून उतरी नजरों से घूर रहा होता है . . .

और इतने में मुन्नी बाई जल्दी से कह उठती है—मैं लपक कर जाती हूं और अपनी चादर उस पर डाल देती हूं और परिंदे को पकड़ कर गाड़ी वाले के हवाले कर देती हूं और उससे बहुत-से . . . . जब बहुत-से पैसे मिलने वाले हों, तो क्या मैं तोते को ये सब करने दूंगी . . ?

* *

मुन्नी बाई हिकारत से मेरी तरफ देखती है और थूक देती है.—ऐसी कहानी लिखी जाती है, जी . . . ?

जवाब में मैं मुन्नी बाई के चेहरे को देखता हूं, अड्डे पर इधर से उधर होते हुए तोते को देखता हूं और फिर एक बार पलट कर तोते को देखता हूं. फिर कहता हूं—फिर गाड़ी वाले मुन्नी बाई के नबी जी से "रोजी भेजो" की मेहनत करने वाले तोते को भी ले जाते हैं. फिर रफ्ता-रफ्ता शहर सूना हो जाता है. कहीं कोई परिंदा, कोई गोरैया, कोई बुलबुल, मैना, तोता, कोई मुर्ग, कोई फाख्ता नजर नहीं आती.

शाम ढले दरख्तों पर बसेरा लेने वाली चिड़ियों की चहकार सुनाई नहीं देती. लाजवर्दी आसमान पर सफेद बगुले, तवाजुन से उड़ने वाले बगुले, भी नहीं दिखाई देते. भरी दोपहर की खामोश फिजा में चीलों की दर्द-भरी चीख भी सुनाई नहीं देती. कबूतर की गुटरगूं, पपीहे की पी-कहां, पी-कहां, मैना की खांय-खांय की आवाज से हम महरूम हो जाते हैं, यहां तक कि मौलवी साहब के मुर्ग की अजान भी कहीं खो गयी है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन में कई खुशियों के पल होते हैं

सरदर्द को आपकी खुशियां बिगाड़ने न दीजिये

र ऐस्प्रो लीजिये

ASPRO

Nicholas

माइक्रोफ़ाइन्ड ऐस्प्रो दर्द को जल्दी खींच निकालता है

A.G.63.HN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन बाजार और रौनक बाजार में कोई फर्क नजर नहीं आता. खरीद-फरोख्त जारी है. शोर-शराबा, इक्के वालों की खटखट, टमटम वालों के घोड़ों की घंटियां बजती रहती हैं. लंबी और खूबसूरत कारें जूं-जूं करके गुजर जाती हैं. आमदोरफ्त जारी है. कारोबार बदस्तूर है. खरीदने वाले उसी तरह बाजार की दुकानों पर जमे रहते हैं और बेचने वाले इसी इनहेमाक से सौदा-सुलुफ बेच रहे हैं. एक हंगामा है कि जारी है. एक दौड़ है कि रुकने का नाम नहीं लेती. फिर दिन ढलता है. रात आती है और अपने तमाम छोटे-बड़े, खरे-खोटे, सच्चे झूठे बच्चों पर आराम की, सकून की चादर तान देती है. फिर रात भी चली जाती है. फिर सुबह नमूदार होती है और खिलकत बेदार होती है.

अब परिंदा पकड़ने वाली गाड़ी कम आती है—दो-चार दिनों में, आठ-दस दिनों में, पंद्रह-बीस दिनों में एक बार आती है. रंगीन शीशों में से एक-आध परिंदा हैरत से बाजार वालों को देख रहा होता है. गाड़ी वाले इधर-उधर तेज निगाहों का जाल फेंकते, फिर समेटते और चारों मुतजस्सिस नजरों से देखते, ढूंढ़ते-ढांढ़ते आहिस्ता-आहिस्ता छोटे कदम रखते चले जाते हैं. कभी कुछ मिलता है, कभी कुछ नहीं मिलता. कोई पलट कर नहीं देखता.

* *

एक ऐसा ही दिन था, धूप बहुत सख्त थी, हवा गर्म थी, फिजा में धूल उड़ रही थी, झगड़ चल रहे थे, जिस्मों से पसीना बह रहा था, धौंकनी की तरह गर्म-गर्म हवा फेंक रही थी कि गाड़ी आ गयी.

गाड़ी आ गयी, परिंदे पकड़ने वाली गाड़ी आ गयी . . .

गाड़ी ऐन चौक पर खड़ी हो गयी. रंगीन शीशों के अंदर एक ही परिंदा था, जो इधर-उधर सहमे-सहमे कदम रखते हुए टहल रहा था. उसकी दुम मोर की तरह खिली थी और आंखों में अफसर्दगी झलक रही थी. अभी गाड़ी ठहरी ही थी कि दौड़ता हुआ वह दस साल का बच्चा आ पहुंचा. उसने पहले गाड़ी वालों को देखा, फिर शीशे के अंदर झांक कर देखा. जरा देर तक देखने के बाद दफ्तन उसने लपक कर शीशे के छोटे-से दरवाजे को खोल दिया.

उतनी ही फुरती से बांस वाले आदमी ने उसके हाथ को झटका दिया, फिर दरवाजे को बंद कर दिया और जेब से बहुत सारे सिक्के निकाल कर उछाल दिये. लड़के ने सिक्कों की तरफ ध्यान नहीं दिया. बांस वाले आदमी ने उसके हाथ को पकड़ कर उसे एक तरफ धक्का दे दिया, और सिक्के उछाल दिये. लड़के ने सिक्कों की तरफ देखा भी नहीं. गाड़ी तेजी से चलने लगी. उसके पीछे-पीछे बांस वाला आदमी तेज-तेज कदमों से चलने लगा. फिर गाड़ी और तेज हो गयी. आदमी के कदम भी तेज हो गये. अब वह दौड़ने लगा.

लड़का कुछ देर खामोश उदासी से तकता रहा. फिर जाने कहां से उसके कदमों में बिजली की-सी झपट आ गयी. उसने दहल कर भागती हुई गाड़ी को देखा, फिर उसने दौड़ कर उसे जा लिया और शीशों पर जोर से घूंसा मारने वाला ही था कि बांस वाले आदमी ने उसके वार को अपने हाथ पर रोक लिया और बच्चे को जोर से, बहुत जोर से, धक्का दिया.

लड़का गेंद की तरह सड़क पर लुढ़क गया. उसके सर और घुटनों पर सख्त चोट आयी. उसकी आंखों तले अंधेरा छा गया और देर तक वह सड़क को तकता रहा. फिर जब उसकी बीनाई पर छाया हुआ अंधेरा हटा और उसने गौर से देखा, तो गाड़ी दूर ढलान पर तेजी से भागी जा रही थी और उसके पीछे सिर्फ धूल ही धूल थी.

लड़के ने उठने की कोशिश की, लेकिन उससे उठा नहीं गया. उसके घुटनों के दर्द ने उसे उठने नहीं दिया और वह फिर तिलमिला कर सड़क पर गिर गया.

गाड़ी आंखों से ओझल हो गयी. गाड़ी में लगी छोटी-छोटी घंटियों की सहरजदा आवाज कानों से ओझल हो गयी और बहुत देर हो गयी . . . बहुत. . . . बहुत देर.

जब बहुत देर हो गयी, तो वह लड़का सड़क पर से उठा. पहले उसने अपने लहू-लुहान घुटनों को देखा, फिर अपने कपड़ों की धूल झाड़ी, इसके बाद अपनी आस्तीन से आंखें पोंछते हुए थके-थके कदमों से चल कर मेरे पास आ खड़ा हुआ.

—भाई जान, लका भी चला गया! . . . उसने गोया अपने आप को इत्तला दी.

—हां, मियां, लका भी चला गया! मैंने मायूसी से जवाब दिया. जरा देर वह सड़क की ओर देखता रहा. उसकी नजरें ढलान की तरफ दौड़ गयीं, जहां कुछ भी नहीं था. उसने धीरे से अपनी नेकर की उभरी हुई जेब पर हाथ फेरा, जहां माचिस की डिबिया थी.

—भाई जान . . . .इस . . .इस तितली को भी ले जायेंगे न?

—. . .

—जब तितलियां भी चली गयीं, तो क्या बचेगा शहर में?

जवाब में मैं खामोशी से उसके चेहरे की तरफ देखता रहा, जहां आंसुओं और सड़क की धूल के मिले-जुले निशान अनगिनत मायूसियों को नुमायां किये हुए थे. वह लड़का चौंका और उसने सामने वाली बड़ी इमारत की तरफ इशारा किया.—भाई जान . . . भाई जान. . .वह देखिए! . . . .

इमारत के दरवाजे के ऊपर पत्थर का एक परिंदा सर निहोड़े बैठा हुआ था. मेरी और उस दस साल के मासूम बच्चे की निगाहें देर तक पत्थर के उस परिंदे पर टिकी रहीं. □□□

फतेहपुर लेन, झरिया (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काँच का आदमी

• श्रवणकुमार वर्मा

वह अपने कमरे में बैठा अखबार पढ़ रहा था. केवल देखे जा रहा था. कोशिश के बावजूद पढ़ नहीं पा रहा था. वह एक पंक्ति पढ़ता, दूसरी पढ़ने लगता और पहली भूल जाता. कोई कड़ी ही नहीं बन रही थी. उसकी पत्नी, जो सामने कालीन पर बैठी निटिंग कर रही थी, ऊन और सलाइयां रख कर खिड़की में जा खड़ी हुई.

—वे नये मकान वाले भी गये!

वह खामोश बैठा रहा. उसने जो सिगरेट अभी-अभी सुलगायी थी, ऐश-ट्रे में राख हो रही थी. धीरे-धीरे उसकी नजर खिड़की के टूटे शीशे पर जा कर ठहर जाती. पहले शीशे में तरेड़ आयी थी, फिर ऊपर का भाग आप-से-आप फर्श पर आ गिरा. उसकी पत्नी ने किरचें उठा कर कूड़े के पीपे में फेंक दी थीं. बाकी शीशा उसने स्वयं निकाल कर फेंक दिया था.

—सब चले गये, मोहल्ला खाली हो गया! उसकी पत्नी गली में झांकती हुई न जाने किससे कह रही थी. कितनी गहरी और भयानक . . . खामोशी है!

उसके हाथ में अखबार था और उसकी निगाहें खिड़की पर थीं. उसने अखबार रख दिया और खिड़की में जा खड़ा हुआ. उसकी पत्नी ने उसकी ओर देखा, खाली-खाली-सी निगाहों से.

—दूसरा शीशा भी टूट गया! वह बोला.

—यहां गत्ता लगा दो! वह बोली. ब्लैक-आउट में. . .

—हम अब बत्ती नहीं जलायेंगे!

वह थका-थका-सा चलता कुर्सी पर जा बैठा और अखबार देखने लगा. सिगरेट जल कर राख हो चुकी थी. उसकी पत्नी अब भी खिड़की में खड़ी थी, जैसे किसी आहट, किसी आवाज का इंतजार कर रही हो. वह खिड़की से हट कर कॉर्निस के सामने आ खड़ी हुई. उसने दायीं ओर का फूलदान बायीं ओर और बायीं ओर वाला दायीं ओर रख दिया. बीच में रखा टाइमपीस उठा लिया, चाबी देने के लिए उलटा किया, कुछ सोच कर रख दिया और पति की ओर देखा. वह चुपचाप बैठा था. उसका सर सीने पर झुक आया था. वह कालीन पर दबे पांव चलती उसके समीप आ गयी. उसे लगा कि उसके पति के सर के बालों में सफेद तारों की वृद्धि हो गयी है.

उसने सर उठाया और पत्नी की ओर देखा. वह अपने स्थान पर बैठ गयी और निटिंग में व्यस्त हो गयी. उनका लड़का बंटी पास ही कालीन पर बैठा खिलौनों से खेल रहा था. अखबार, जो कालीन पर बिखरा पड़ा था, उसने उठा लिया. उसकी पत्नी ने ऊन फिर रख दी और खाली दीवारों को देखने लगी.

—हमें इन दीवारों पर तसवीरें लटकानी चाहिए.

—उनके भी शीशे टूट जायेंगे!

—नंगी दीवारें अच्छी नहीं लगतीं. . .

* *

उसने पत्नी की ओर गहरी नजरों से देखा. पिछली रात वह उसके साथ लेटी थी. नंगी. उनकी शादी को सात साल हो चले थे. इन तमाम वर्षों में वे कभी अलग नहीं सोये थे, लेकिन कल रात वह जैसे उसके साथ लेटा भी बहुत दूर चला गया था. उसकी पत्नी ने पूछा भी था कि वह क्या सोच रहा है, परंतु वह कुछ सोच नहीं रहा था और उसने सच-सच कह भी दिया था कि वह कुछ नहीं सोच रहा था. वह मोमबत्ती की हलकी पीली रोशनी में पत्नी के सुडौल, स्वस्थ और नर्म, भरे-भरे शरीर को देखता रहा. फिर उसकी निगाहें इस शरीर का परीक्षण करके अपनी आंखों में लौट आयीं . . .उस पक्षी की तरह, जो विश्राम के लिए किसी वृक्ष के चक्कर काटता है, परंतु उस पर उतरता नहीं और अंधेरे में किसी ओर उड़ जाता है. फिर जैसे हर वस्तु बर्फ की भांति ठंडी हो गयी. कमरा, बिस्तर, पत्नी, वह खुद. उसने फूंक मार कर मोमबत्ती बुझा दी और धीरे से कहा—कपड़े पहन लो!

उसकी पत्नी ने चुपचाप कपड़े पहन लिये. वे रात भर जागते रहे. कई बार खतरे का सायरन बजा. हवाई जहाज चीखते हुए इधर-से-उधर निकल गये. फायर हुए. धमाके हुए. मकान की खिड़कियां तक हिल गयीं और शीशा छनाक् से टूट गया, परंतु वे वैसे ही पड़े रहे . . . . दो अजनबियों की तरह.

—वह कैलेंडर कहां गया? उसकी पत्नी ने पूछा. वह, जिसमें बच्चा बंदूक लिये बैठा था?

—वह . . .वह मैंने लपेट कर रख दिया है.

—दो साल पहले इस कंपनी के कैलेंडर में इसी बच्चे की तसवीर थी, लेकिन तब उसके हाथ में बांसुरी थी.

वह कुछ नहीं बोला. उसने दूसरी सिगरेट सुलगा ली. एक कश लिया और सिगरेट ऐश-ट्रे में रख दी. उसकी पत्नी दीवार पर उस स्थान को देख रही थी, जहां वह कैलेंडर लटक रहा था. अब वहां केवल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाली कील थी. वह सिगरेट के धुएं को हवा में घुलते देख रहा था ...समय बिताने का यह कैसा तरीका है! क्या सचमुच समय बीत रहा है, या उसे बिता रहा है? समय उसके अंदर ठहर तो नहीं गया? उसकी पत्नी उठ कर पिछले कमरे में चली गयी. उसके लड़के ने खिलौनों में से प्लास्टिक का हवाई जहाज निकाल लिया था और अब उसे हाथ में लिये 'शूं-शूं' आवाज निकालता दायरे में दौड़ रहा था. वह खाली-सी नजरों से उसे दौड़ते देखता रहा था. धीरे-धीरे उसका चेहरा सफेद हो गया. वह भयभीत-सा बोला—रख दो इसे!

लड़का सहम कर खड़ा हो गया. अंदर से उसकी पत्नी आ गयी. उसने लड़के के हाथ से जहाज ले कर उसे रबड़ की चिड़िया पकड़ा दी. और जहाज कैलेंडर के साथ ही अलमारी में रख दिया.

—बड़ा सन्नाटा है. वह जैसे सन्नाटे पर कान लगाये बोली. शहर ही खाली हो गया लगता है!

उसने खिड़की से बाहर खामोश, वीरान मकानों को देखा. उसे स्टेशन की ओर जाते हुए लोग ...डरे, सहमे, पीले पड़े लोग, सामान से लदे रिक्शे, तांगे, मोटरें आदि याद आये—स्टेशन पर बेतहाशा भीड़, बेतहाशा सामान.

—शायद! वह कई क्षणों बाद बोला.

—तुम अखबार ऊंची आवाज में क्यों नहीं पढ़ते?

—मैं अखबार पढ़ नहीं रहा हूं, सिर्फ देख रहा हूं!

—किसी का फोन भी नहीं आया! उसने आशापूर्ण नजरों से टेलीफोन की ओर देखा.

—सब लोग चले गये!

—टेलीफोन खराब ही न हो!

उसकी पत्नी ने जा कर रिसीवर उठाया.

—करेंट तो है.

—डायल करो.

—किसे?

—कोई-सा नंबर मिला लो!

उसकी पत्नी ने यूं ही नंबर घुमा दिये.

—बेल हो रही है, लेकिन कोई उठा नहीं रहा!

उसने जा कर रिसीवर में 'टर-टर' की आवाज सुनी, फिर रिसीवर क्रेडिल पर रख दिया और कुर्सी पर जा बैठा और सिगरेट सुलगा ली.

—तुम सिगरेट पीते नहीं, तो सुलगाते क्यों हो? उसकी पत्नी ने ऐश-ट्रे में राख होती सिगरेट की तरफ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखिल भारतीय हिन्दी कहानी, निबन्ध तथा एकांकी प्रतियोगिता

वर्ष १९७५–७६

प्रतियोगिता निःशुल्क होगी और निम्नलिखित वर्गों में होगी :—

(क) कहानी (ख) एकांकी (ग) निबन्ध (साहित्यिक एवं सांस्कृतिक)
प्रत्येक वर्ग में निम्न तीन-तीन पुरस्कार होंगे :—

प्रथम पुरस्कार	२५०–००	रुपये
द्वितीय पुरस्कार	१५०–००	रुपये
तृतीय पुरस्कार	१००–००	रुपये

१. उक्त तीनों पुरस्कारों को विभाजित भी किया जा सकता है.

२. पुरस्कृत तथा अच्छी रचनाएं विभागीय पत्रिकाओं में प्रकाशित भी की जा सकेंगी.

३. लेखक द्वारा रचना के मौलिक, अप्रकाशित, अप्रसारित तथा किसी पूर्व प्रतियोगिता में न भेजने का प्रमाण-पत्र अवश्य संलग्न होना चाहिए. अन्यथा रचना पर कोई विचार नहीं किया जायेगा.

४. लेखक का नाम (मोटे अक्षरों में), पता केवल अप्रेषण-पत्र पर होना चाहिए, रचना की किसी प्रति पर नहीं.

५. कृपया पत्र व्यवहार करते समय रचना का रजिस्टर नं. तथा तिथि अवश्य लिखें.

६. प्रतियोगिता में प्राप्त रचनाओं को लौटाया नहीं जायेगा.

७. एक वर्ग में लेखक की एक ही रचना स्वीकार्य होगी. रचना की टाइप की हुई अथवा सुवाच्य तीन प्रतियां १५ अक्तूबर १९७५ तक निम्न पत पर अधोहस्ताक्षरी को अवश्य पहुच जानी चाहिए. बाद में प्राप्त रचनाओं पर कोई विचार नहीं किया जायेगा.

निदेशक,

भाषा विभाग, हरियाणा

कोठी नं. १५८०–१८–डी, चण्डीगढ़–१६००१८

डी. पी. आर— हरियाणा (डी. १०५-७५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

देख कर कहा.

वह खामोश रहा.

—मैं पी कर देखूं?

—पियो . . . !

—खांसी तो नहीं आयेगी?

—पता नहीं.

—पी लूं . . . . ?

—लो . . . . !

उसने सिगरेट ले कर पहला ही कश लिया, तो खांसी आ गयी. लड़के ने मां की ओर देखा और खेल में व्यस्त हो गया.

—गला खुश्क हो रहा है!

—पानी पी लो.

★ ★

वह जा कर पानी पी आयी. कमरे में फिर खामोशी छा गयी. वह स्वेटर उधेड़ने लगी. वह बैठा उसे देखता रहा. उसने सोचा, बुनने से उधेड़ना कितना आसान है! वह उकताये हुए ढंग से उठी और खिड़की में जा खड़ी हुई. स्टेशन पर इंजन की तेज सीटी गूंजी.

—पहले सिर्फ रात को ही सीटी सुनाई देती थी. . .!

उसने सोचा, पत्नी की इस बात का जवाब दे कि नहीं . . . लेकिन क्या जवाब दे? . . .वह उठ कर पिछले कमरे में चला गया. अंदर जैसे हर चीज अपने स्थान से हट गयी थी. कपड़े इधर-उधर बिखरे पड़े थे. अटैची कुर्सी पर खुली रखी थी. सुबह जो प्याली चाय पीने के बाद उसने मेज पर रखी थी, वह वहीं पड़ी थी. एक मक्खी उसमें गिर कर न जाने कब मर गयी थी. रम की खाली बोतल एक कोने में रखी थी. उसने लेबल पढ़ा——फॉर डिफेंस फोर्सेज ओनली. उसकी पत्नी भी वहीं आ खड़ी हुई थी.

—वह मेजर फिर नहीं आया? . . .

—यह. . .उसने कमरे में बिखरी चीजों को ओर देखा.

—मैं कुछ ढूंढ़ रही थी . . .

—क्या?

—याद नहीं आ रहा! वह उदासी से बोली.

वह छत की कड़ियों को देखने लगा था.

—क्या देख रहे हो?

—वह जाला कब बन गया?

—खयाल नहीं किया . . .

—मेरा खयाल है, कल यह नहीं था . . . कल रात को.

उसने पति की ओर इस प्रकार देखा, जैसे उसके अंदर कुछ टूट चुका हो . . . कुछ टूट रहा हो . . . मुट्ठी में से फिसलती रेत की तरह.

वह उससे न जाने क्यों आंखें नहीं मिला सका . . . आंखें झुका लीं. वह जाने लगा, तो उसकी पत्नी ने उसका हाथ पकड़ लिया.

—सुनो . . . .

वह रुक गया. उसका रंग फीका पड़ने लगा था. वह खड़ा रहा . . . खामोश, सर लटकाये. वह भी खड़ी थी. खामोश, सर लटकाये. फिर वह बोला——यह जाला साफ कर दो . . .

—तुम कर दो . . .

—ठीक है . . .

वह बाहर निकल गया और इधर-उधर जैसे कुछ तलाश करने लगा. उसने किचन, बाथरूम, पेटी के पीछे झांक लिया, फिर पुकार कर पत्नी से पूछा——जाला साफ करने वाला ब्रश कहां है?

—वह तो पड़ोसन ले गयी थी.

—अब . . . . ! उसने जैसे विवशता से कहा. . . उन लोगों के आने पर ही होगा.

वह अंदर आ गया.

—सब कुछ बिखर गया है . . .

★ ★

वे दोनों मिल कर चीजें समेटने लगे. उन्होंने एक-एक कपड़ा तह करके रखा. वह प्याली को लाया था और अटैची उठाने के लिए झुका था कि सायरन जोर-जोर से बजने लगा. वह भयभीत-सी उससे आ लगी. वह उसे बाजुओं से थामे खड़ा था. फिर वही चीखते हुए हवाई-जहाज, वही फायर, वही धमाके. वह उससे लिपट गयी. उसने पत्नी को हौले से पलंग पर बिठा दिया. वह किसी कटे वृक्ष की तरह बिस्तर पर ढेर हो गयी. वह जाने लगा. उसने पति का हाथ मजबूती से पकड़ लिया और अपने साथ ही लिटा लिया.

—क्या हो रहा है? वह बोली.

वह छत की कड़ियां गिन रहा था, जैसे पत्नी का प्रश्न उसके लिए न हो कर बेमतलब उछाली हुई गेंद हो.

—वह तीसरी कड़ी चटख गयी है!

—नहीं तो.

—ध्यान से देखो.

—तुम्हें वहम हो गया है . . . ! वह गंभीरता से बोली. ठीक तो है.

अचानक कहीं पास ही जोर का धमाका हुआ, फिर लगातार कई धमाके हुए. उनकी निगाहों से परे जहाज कहीं कुत्तों की भांति लड़ रहे थे. गोलियां चल रही थीं. उसकी पत्नी उससे लिपटी हुई थी. फिर धमाका हुआ. वह उछल कर खड़ा हो गया.

—क्या हुआ? उसकी पत्नी ने पूछा. यह धमाका कैसा था?

—एक शीशा और टूट गया . . .

वह सर थाम कर बिस्तर पर बैठ गया.—शीशा टूट गया. . .

वह तकिये में मुंह दे कर रो दी. ☐☐☐

१८०/११, कूचा लंबान, अमृतसर (पंजाब)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ा आदमी

• महेंद्रनाथ

तुम चालीस वर्षों के बाद मिले हो. यह अजीब-सी बात है कि इतने समय तुम जीवित रहे और मैं भी, हालांकि मृत्यु का दंड हम दोनों पर तलवार की भांति लटक रहा है और हम किसी समय भी मर सकते हैं, या मारे जा सकते हैं. हालात इतनी तेजी से बदल रहे हैं कि मौत बहुत सस्ती हो गयी है और जिंदगी बड़ी महंगी. बहरहाल यह तो बताओ, तुम इतने समय क्या करते रहे? तुम्हारे मौन से मैं यह समझ गया कि तुम मुझसे यह पूछना चाहते हो कि मैं इतने समय तक क्या करता रहा?

मुझे वे दिन याद आ रहे हैं, जब हम दोनों बच्चे थे और सेब-नाशपातियों के बगीचों में एक साथ खेलते थे. उस समय तुम्हारी आंखें नीली-नीली थीं, आज कुछ पीली-पीली-सी हो गयी हैं. शायद यही हाल मेरी आंखों का होगा. शायद तुम बोलने की कोशिश कर रहे हो, मगर मैं तुम्हें बोलने की आज्ञा नहीं दूंगा. मैं तुम्हें बहुत-सी बातें बताना चाहता हूं. तुम शहरी सभ्यता और सोसाइटी से बहुत दूर रहे हो, जंगली सभ्यता में पलते रहे हो और मैंने नयी सभ्यता और सोसाइटी के केंद्रों में आंखें खोली हैं. सच तो यह है कि सभ्यता और सोसाइटी का चक्कर हमने इनसानों को मूर्ख बनाने के लिए चलाया है.

क्या पियोगे? शराब. . .जवान औरत की आंखों की भांति मदमस्त कर देने वाली शराब . . .किसी सुंदरी के लाल-लाल कपोलों की भांति लाल शराब. जहां तक देशी शराब का संबंध है. यानी ठर्रे का, तो वह तो हर जगह मिलता है. . .हर कोने में, हर घर में शराब तैयार की जाती है, शराब पीने में शरमाओ नहीं. जो बात दिल में आये, उसे बेधड़क कह दो. अपने अधिकार सब के सामने रखो, चिल्ला-चिल्ला कर और डंके की चोट पर कहो, ताकि सब को यह मालूम हो जाये कि तुम क्या चाहते हो. यह ऐसा ही जमाना है. शर्म और लज्जा का जमाना कब का समाप्त हो गया. अगर तुम चुप रहे, तो शीघ्र ही स्वर्ग सिधार जाओगे.

तुम बोलते क्यों नहीं? तुम तो मेरे बचपन के साथी हो. हां, तुम यह पूछना चाहते थे कि मैं आजकल क्या कर रहा हूं? पहले यह बताओ, तुम इतने समय तक क्या करते रहे? तुमने शादी कर ली? जरूर की होगी. इसके अतरिक्त एक इनसान और क्या कर सकता है! इनसानी नसल को बढ़ाने के लिए हर इनसान को शादी करनी चाहिए. इस नसल को फसल कहा जाये, तो ठीक बात होगी. दुनिया का कारोबार कैसे चले, अगर नसल की उत्पत्ति का कारोबार न चले! तुमने बच्चे जरूर पैदा किये होंगे. कितने बच्चे? पांच. . .सिर्फ पांच? पांच बहुत कम हैं. ज्यादा पैदा करते, तो कम-से-कम गली-मोहल्ले में तो नाम मशहूर हो जाता. क्या कर रहे हैं तुम्हारे बच्चे? स्कूल में पढ़ते होंगे. बेचारे और क्या कर सकते हैं! जी हां, पढ़ा लो कुछ स्कूल और कालेज की किताबें, फिर एक डिग्री, ताकि जरूरत के समय काम आ सके. इन आजमाये हुए नुस्खों के बिना नौकरी मिलना कठिन है. दरअसल दुनिया का 'चक्कर' चलाने के लिए यही ढंग है कि जो कुछ तुमने अपने मां-बाप से सीखा और जो कुछ तुम्हारे मां-बाप ने अपने मां-बाप से सीखा था, उन सब शिक्षाओं को मिला कर, खरल में पीस कर वह सारी शिक्षा अपने बच्चों को पिला दो, ताकि जब वे मां-बाप बन जायें, तो समस्त पीढ़ियों की भांति वे भी अपने बच्चों को वही समझ, वही चलन और वही कार्यक्रम सौंप दें, ताकि सनद रहे कि तुम बाप बन कर अपने कर्तव्य से मुक्त हो गये हो.

मैं बाप नहीं बना, बड़ा आदमी बन गया. बड़ा आदमी भी बाप होता है. बाप घर में शासन करता है, बड़ा आदमी दूसरों पर शासन करता है. बाप घर के खर्च के लिए मेहनत-मजदूरी करता है. अपने बच्चों को खिला-पिला कर और डांट-डपट कर शासन करता है, मगर बड़ा आदमी दूसरों की मेहनत पर जिंदा रहता है और बड़े ठाट से उन पर शासन करता है और उन्हें बताता है कि काम इस प्रकार करना चाहिए और स्वयं बड़े आराम से खर्राटे लेता है. दूसरों की कमाई पर जीवित रहता है और उन पर शासन करता है. कितना श्रेष्ठ काम है!

तुम मुझसे यह पूछना चाहते हो कि मैं बड़ा आदमी क्यों बना? देखो, तुम बोलो नहीं. जब से मैं बड़ा आदमी बना हूं, मैं यह पसंद नहीं करता कि मुझसे कोई प्रश्न करे. मैं तुमसे यह पूछना चाहता हूं कि तुम बाप क्यों बने? बाप बन कर तुमने कौन-सी हातिमताई की कब्र पर लात मार दी, जो मैं न मार सका? अरे भई, ये लोग भेड़-बकरियों से कम नहीं. बेचारे बोलते ही नहीं, केवल आदेश सुनना चाहते हैं और मैं हर दिन आदेश सुनाता रहता हूं. लोग बड़े ही खुश और धैर्यपूर्वक रहते हैं. मेरी चर्चा करते हैं, मेरा जुलूस निकालते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे गले में फूलों के हार पहनाते हैं, जगह-जगह मेरी मूर्तियां स्थापित करते हैं, मेरे उपदेशों को बार-बार सुनते हैं और सिर धुनते हैं, कभी-कभी चीखते और चिल्लाते हैं. गला फाड़-फाड़ कर, मेरा नाम ले कर नारे लगाते हैं.

अच्छा, तो तुम मेरी बातों से ऊब गये हो? क्या तुम यह शहर देखना चाहते हो? भई, दिखा दूंगा, इतनी जल्दी भी क्या है! मैंने इन सुंदर बिल्डिगों को देखा है, इनके बागों में घूमा हूं. तुम्हें भी घुमा दूंगा. यह वास्तव में बड़ा सुंदर बंदरगाह है. चारों ओर फैला हुआ समंदर और बीच में यह छोटा-सा टापू और इस टापू में लोगों ने रहने के लिए सुंदर-सुंदर कोठियां बनायी हुई हैं. बड़ी-बड़ी ऊंची बिल्डिगें, शानदार बंगले, जहाज, मोटरें, फैक्टरियां, रेलें, बसें, सब कुछ चलता-दौड़ता दिखाई देता है, आजकल स्काई-स्क्रैपर बहुत बन रहे हैं. जिनकी आखिरी मंजिल पर नहाने के लिए तालाब हैं, जहां जवान लड़कियां नहाती हैं. सुंदर चमकते हुए शरीर नीले पानी में तैरते हैं. जब बिजली की तेज रंग-बिरंगी रोशनियां तालाब के पानी पर पड़ती हैं और पानी में तैरते हुए जवान शरीरों को छूती हैं, तो वे बिल्लौरी शरीर इंद्रधनुष की रोशनी में जलपरियों के शरीर बन जाते हैं और इतने मन-मोहक हो जाते हैं कि उन पर से निगाहें नहीं हटतीं और जी चाहता है, किसी जलपरी को पकड़ कर. . .

मगर इनसे जरा दूर तुम्हें झोपड़ों की बस्ती नजर आयेगी. ऊंची-ऊंची बिल्डिगों के नीचे गंदगी और गरीबी दिखाई देगी. फिर तुम्हारे मन में यह बात जरूर

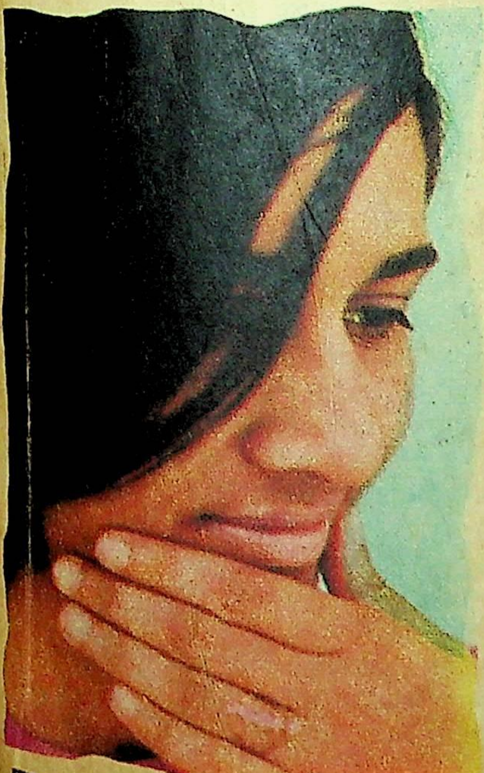

आयेगी कि इन ऊंची-ऊंची बिल्डिगों का क्या अर्थ है? जीवनों में इतना अंतर. . .इतनी अमीरी और इतनी गरीबी!

यह शहर दिखाने से पहले मैं तुम्हें यह बताना चाहता हूं कि मैं इस शहर से इतना उकताया हुआ हूं कि तुम्हें बता नहीं सकता. मैं इन आकाश को छूती हुई बिल्डिगों को देख कर भी खुश नहीं हुआ. मैंने अच्छे-अच्छे बागों में भी बैठ कर चैन प्राप्त नहीं किया, समंदर को देख कर मैंने बच्चों की भांति तालियां नहीं बजायीं. नीला आकाश, सागर का स्वच्छ सीना, यह बहकी-बहकी हवाएं, झूमते हुए नारियल के पेड़ आजकल बिल्कुल अच्छे नहीं लगते. अब मुझे सिर्फ अपनी मूर्तियां अच्छी लगती हैं, अपनी तसवीरें अच्छी लगती हैं, अपने उपदेश अच्छे लगते हैं. जब भी किसी मजमे के सामने उपदेश देता हूं, उस उपदेश में उलटी-सीधी और व्यर्थ की बातों से सिवा कुछ नहीं होता, बस शब्दों की जादूगरी जरूर होती है. मैं उपदेश देते हुए रोने लगता हूं, आवाज में दुख और दर्द होता है. जिससे लोग अत्यंत प्रभावित होते हैं. और वे भी रोने लगते हैं. उस समय मैं बहुत खुश होता हूं और यह समझता हूं, जैसे मैं स्वर्ग में हूं. लोग तालियां, पीटते हैं. उस समय वे लोग मुझे बहुत ही छोटे नजर आते हैं और मेरा अस्तित्व कितना बड़ा! मैं उन्हें कुछ भी कहूं, वे करेंगे. सारे शहर में आग लगा देंगे. बच्चों को मार डालेंगे. औरतों की आबरू लूट लेंगे, पागलों की भांति नाचेंगे.

वास्तव में मैं एक उपदेशक ही नहीं, एक इनसान भी हूं. केवल एक इनसान ही नहीं, एक पुरुष भी हूं. सिर्फ एक पुरुष ही नहीं, बहुत समय हुआ, एक बाप का बेटा भी था. जो एक जमाने में बड़ा गरीब था और जब मरा, तो लाखों की जायदाद छोड़ कर मरा.

मैं जानता हूं. तुम मुझे घूर-घूर कर क्यों देख रहे हो. तुम मुझसे यह पूछ रहे हो कि मैं उपदेशक क्यों बना? क्या पूरी जनता का दुख मुझे खाये जा रहा था. दर असल उपदेशक और गीदड़ में अधिक अंतर नहीं होता. जब तक लोग मुझे उपदेशक मानते रहेंगे, मैं उपदेशक ही रहूंगा. जिस दिन उनका भरोसा मुझ पर न रहेगा, मैं दुम दबा कर भाग जाऊंगा. मेरे बहुत से दोस्तों का यही अंत हुआ, जो पहले जाने-पहचाने उपदेशक थे.

मैं बड़ा आदमी क्यों बना, इस सवाल का उत्तर यह है कि मैं बाकी लोगों से अधिक अकलमंद था. एक रहस्य की बात बताता हूं, किसीको बताना नहीं. मेरे बड़ा आदमी और उपदेशक बनने का असली कारण यह है कि मैं और कुछ न कर सकता था. मुझे काम करने से घृणा थी, इसलिए मैं उपदेशक बन गया.

जब मेरी आयु पच्चीस वर्ष की थी, तो बी. ए. पास कर लिया. उन दिनों मेरे पिताजी का कारोबार बस ठीक चलता था, इतने अमीर न हुए थे. मैंने बाप के कहने पर क्लर्की के लिए प्रार्थना पत्र दे दिया, उन दिनों मैं भी परेशान था. और मेरे पिताजी मुझसे ज्यादा परेशान थे, क्योंकि मैं निकम्मा था. दोनों समय मजे से खाना खाता और आराम से सो जाता. मेरे पिताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हते थे कि मैं कोई नौकरी कर लूं और जो कुछ माऊं, उनके हाथ पर रख दूं. इसीलिए तो उन्होंने मे पढ़ाया-लिखाया, पाला-पोसा और बी. ए. की डिग्री लवायी. बहरहाल मैंने नौकरी के लिए प्रार्थना पत्र दे या. उन दिनों लड़ाई जोरों पर चल रही थी. क्लर्कों भरती की जा रही थी. मेरा प्रार्थना पत्र स्वीकृत गया. मुझे छह महीने की ट्रेनिंग के लिए भेज या गया. मैंने नापास होने के लिए ट्रेनिंग के बीच त कम पढ़ाई-लिखाई की. जब परीक्षा हुई, तो बड़ी ठिनाई से कुछ प्रश्नों का उत्तर दे सका. मगर उन मबख्तों ने मुझे पास कर दिया, नौकरी के लिए अपा-मेंट लेटर मेरे हाथ में थमा दिया और कहा कि काम आ जाओ. लेटर ले कर मेरा खून सूख गया.

मैं घर वापस आया और मां-बाप को बताया मुझे नौकरी मिल गयी है. सब लोग उछल पड़े. मेरी तो पेड़े बांटने पर तैयार हो गयी. मैंने अपनी झदारी के बल-बूते पर एक वार किया और वह र सफल हुआ. मैं रोने लगा और मां-बाप के सामने ा रोया कि मेरी मां रोने लगी, पिताजी रोने लगे. हल्ले के लोग रोने लगे. उस दिन मुझे पता लगा आंसुओं में कितनी शक्ति होती है. मेरे आंसुओं को कर पिता जी ने मुझसे कहा कि अच्छा, तुम नौकरी न ो, जो कुछ तुम्हारे मन में आता है, कर लो. मैं करी पर न गया. वह था मेरे जीवन का टर्निंग इंट, जो टर्निंग अधिक है, प्वाइंट कम. वास्तव में मेरे आंसुओं ने बचाया, और आजकल भी जब उपदेश करता हूं, तो उपदेश के बीच एक-दो बार र रोता हूं. मुझे रोता देख कर सभी रोने ते हैं. मेरे उपदेश को सराहते हैं, मुझे आदर देते उस दिन के बाद से मुझे काम से घृणा हो गयी. . . त घृणा ने समस्त देश के श्रद्धालुओं का बादशाह गया.

अच्छा यह बताओ, यह लड़की, जो जा रही है, क्या हें पसंद है? तुम चुप क्यों हो, बोलते क्यों नहीं? तो पसंद है, दोस्त! तुम शहर देखने आये हो, लो इसे. इसकी सुंदर बिल्डिंगें, हैंगिंग गार्डन, गेट आफ इंडिया, यह फैला हुआ समंदर, जुहू का समंदर-ट, पक्की सड़कें, नैशनल पार्क, खुले चौड़े बाजार, फुटपाथ पर भागती हुई इनसानों की भीड़, ये भगवान के गढ़े हुए अनगिनत इनसान, जो दिन-रात मेहनत करते हैं, सुबह को अपने दड़बों से निकल कर फैक्टरियों में घुस जाते हैं और शाम को थके-मांदे वापस आते हैं, एक सीमित समय तक जीवित रह कर मर जाते हैं. चुपचाप, बिना किसी विरोध और शिकायत के इस धरती को छोड़ जाते हैं.

हां, उस लड़की के विषय में कुछ कह रहा था. . . वह जो चली गयी. क्या तुमने किसीसे प्रेम किया? अच्छा, तुम मुझसे पूछना चाहते हो कि मैंने प्रेम किया किसी लड़की से? हां, किया. यह बात तुम्हें इसलिए बता रहा हूं कि तुम किसीसे कहोगे नहीं.

तो सुनो. क्या तुम मेरी बात सुनते-सुनते थक गये हो? चाय या गरम-गरम कॉफी पियोगे? आओ, कुछ खा लें. कुछ दिन तो तुम्हें यहां ठहरना ही पड़ेगा. पहले मेरी बात सुन लो, फिर शहर देख लेना. शहर तो हर इनसान देखता है, मगर मेरी-बातें हर इनसान सुन नहीं सकता. उपदेश की बात और है. वे उपदेश होते हैं. बातें नहीं होतीं. मुझे तो उस समय कुछ पता नहीं लगता कि मैं क्या बक रहा हूं. बस, जबान हिलती रहती है. शब्द बिना रोक टोक के निकलते रहते हैं. अधिकतर उन शब्दों का मस्तिष्क से कोई संबंध नहीं होता. और लोग तालियां पीटते हैं. और जब तालियों की गूंज समाप्त हो जाती है, तो मैं उपदेश समाप्त करता हूं. समझ जाता हूं कि लोग अब तालियां पीटते-पीटते-थक गये हैं. कहीं अपना सिर पीटना शुरू न कर दें. . . यानी तब वे घर जाना चाहते हैं, क्योंकि उनके घरों में उनकी पत्नियां, उनके बच्चे उनका इंतजार कर रहे होंगे. बच्चे बिलख रहे होंगे, उनको भूख लगी होगी.

आज मौसम अच्छा नहीं है, उस लड़की को, जो मेरे और तुम्हारे सामने से निकल कर गयी थी, तुम शायद भूल गये हो. मैं उसे नहीं भूला. जब निगाहें किसी सुंदर चेहरे को देखती हैं, तो कुछ क्षणों के लिए मस्तिष्क एक भट्ठी की भांति भभक उठता है. उस समय मेरे मस्तिष्क से शब्द मुझे दिखाई दे कर चले जाते हैं. केवल किसीका प्रभाव शेष रह जाता है. शायद सुंदरता का प्रभाव. एक नशा, जो क्षणिक होता है, मगर बड़ा ही प्यारा, बड़ा ही सुंदर, बड़ा ही मखमली और बहुत ही नरम-नरम, जो मेरे विचारों ओर घूमता रहता है. उसके नशे में मैं मदहोश रहता हूं. चलो, गेलार्ड चलते हैं. वहां तुम्हें मलाई से लिपटा हुआ एक भुना हुआ चिकन खिलाऊंगा.

* *

यह रहा बंबई का विख्यात और अत्यंत सुंदर होटल. दीवारों पर नंगी तसवीरें पेंट करायी गयी हैं. . . . . औरतों और मर्दों की वासनात्मक और कामुक क्रिया की तसवीरें, सुंदर छातियों की तसवीरें, छलकते होंठों और दहकते गालों की तसवीरें. नशीली और बादामी आंखें, नरगिसी आंखें. बाल, जो खुल जायें, तो घटा बन कर बरसें. भिन्न-भिन्न क्लासिकी बनावट के चेहरे, एरियन और रोमन चेहरे, कहीं हेलन ऑफ ट्रॉय, तो कहीं क्लियोपेट्रा का क्लासिकी चेहरा. दीवारों पर अफ्रोएशियाई चेहरों की प्रदर्शनी है. पुराने जमाने में मंदिर हमारी सभ्यता को प्रस्तुत करते थे. आजकल ये होटल और रेस्तरां प्राचीन सभ्यता से ले कर नयी सभ्यता, मेल-मिलाप और विरोध की झांकियां प्रस्तुत करते हैं. नंगी तसवीरों की बहुतायत है. कुछ पेंटिंग सराहना के योग्य हैं. मुझे इस नंगेपन में कोई अश्लीलता और असभ्यता नजर नहीं आती. खैर, इस समय तुम यह देखो कि जब से मैं यहां आया हूं. लोग मेरी ओर देख रहे हैं. बड़ा आदमी हूं, न! मैं यहां कभी नहीं आता, आज तुम्हारे साथ आ गया, मैं भीड़ से दूर भागता हूं. इन बेचारों को आज अवसर मिला है—मुझे देखने का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे दर्शन करने का. मैं यह चाहता हूं कि सब लोग मेरी ओर देखते रहें. लो, बैरा भी आ गया. क्या खाओगे? तंदूरी किचन, दो . . .! तुमने देखा नहीं, यह बैरा मेरी ओर देख रहा था और कितना खुश था, कितने आदर से झुका था. मेरी प्यारी भक्त मंडली मेरे सामने से आदर से सिर झुका कर निकलती है, आश्चर्य से मेरी ओर देखती है और अपनी जगह जा कर बैठ जाती है. मेरे पास आते हुए डरती है.

इसी अंतर के कारण, जो मेरे और उसके बीच में है, मेरा बड़प्पन कायम है, वरना जो कुछ मैं कहता हूं, करता कहां हूं. मेरे वचन और पालन में धरती-आकाश का अंतर है, खैर, छोड़ो इन बातों को. उस लड़की की ओर मत देखो, जो मेरी ओर देख रही है. बड़ी सुंदर लड़की है. मैं तुम्हें एक बात बताऊं मुहब्बत के बारे में, यानी लड़कियों के बारे में? लड़कियों की ओर मत देखो, उन्हें देखने दो. उनसे बिल्कुल बात मत करो, उन्हें बात करने दो. अपने दिल का हाल मत कहो, उन्हें अपने दिल का हाल कहने दो. यानी अपनी कमजोरी उनके सामने मत प्रकट करो, उनकी कमजोरी तुम्हारे सामने आ जाये, तो क्या बात है. यह गुर, जो मैं तुम्हें बता रहा हूं, लड़कियां फांसने का सब से सफल और बड़ा गुर है. अरे, तुम मेरी ओर ऐसे देख रहे हो, जैसे मैं कोई इनसान नहीं, केवल उपदेशक हूं. हुजूर, मैं उपदेशक होने के अतिरिक्त एक इनसान भी हूं. और एक इनसान के नाते मेरे कुछ कर्त्तव्य भी हैं.

मैं बचपन में दुबला-पतला था, शारीरिक सुंदरता नहीं थी मुझ में. ज्यों ही मेरी आयु तेरह वर्ष की हुई कि मैंने डंड पेलना शुरू कर दिया और तीन साल में मैं एक हृष्ट-पुष्ट शरीर का सुंदर नौजवान बन गया. लड़कियों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए शारीरिक आकर्षण बड़ा आवश्यक है. तुम भी एक मरियल औरत के साथ बात करना पसंद न करोगे. इसी प्रकार लड़कियां या औरतें भी एक पतले-दुबले लड़के से संबंध स्थापित करना पसंद नहीं करेंगी. उन दिनों मैंने महसूस किया कि शारीरिक आकर्षण से लड़कियों को अपनी ओर आकर्षित किया जा सकता है. शारीरिक आकर्षण का यह अर्थ नहीं कि आप गामा या किंगकांग पहलवान बन जायें. अगर मेरी बात ठीक न होती, तो फिर अधिकतर लड़कियां पहलवानों पर मोहित हो जातीं. मगर ऐसा नहीं हुआ. बायरन और शैली पर अधिक लड़कियां मोहित हुईं और पहलवानों पर कम.

तो हां, इस शारीरिक आकर्षण के अतिरिक्त एक बात और याद रखो, अपने दिल का रहस्य किसी पर प्रकट न करना, धीरे-धीरे लड़की को अपने पास आने दो, पहली मुलाकात में इधर-उधर की बातें, मुहब्बत का जिक्र गायब, जैसे आपको लड़की से कोई संबंध नहीं. दूसरी मुलाकात में लड़की की सुंदरता पर एक-तो वाक्य बोल दिये. लड़की सुंदर हो, या न हो, उसकी कुरूपता को सुंदरता में बदल दीजिए, आंखें चाहे भैंगी हों, मगर उन्हें आप नरगिसी आंखें कहिएगा. इसी प्रकार गालों, होंठों गरदन और शरीर के दूसरे भागों को सराहिएगा कि लड़की को इस बात का [illegible] वह वास्तव में सुंदर है और फिर इस बीच में यह भी अनुमान लगा लीजिएगा कि जो बातें आपने कही हैं उनसे लड़की पर क्या प्रभाव पड़ा है. उसके बाद अगर आप समझते हैं कि हालात आपके पक्ष में हैं, तो फिर अपनी मुहब्बत को प्रकट कीजिएगा. तब तक तो आपको मालूम हो जायेगा कि लड़की आपको चाहती है, या नहीं. तो हां, तुम मुझसे पूछ रहे हो कि मैंने किसी लड़की से मुहब्बत की या नहीं? मैंने मुहब्बत की है. एक बार नहीं, कई बार. और एक लड़की से नहीं, बल्कि कई लड़कियों से.

मैं उन दिनों की बात करता हूं. जब मैं साधारण इनसान था. उस समय जब कोई औरत मेरे पास खड़ी हो जाती, तो मैं अपनी सीट से उठ कर उसे जगह दे देता. अगर किसी औरत या लड़की का रूमाल गिर जाता, तो तत्काल रूमाल उठा कर उसे दे देता. अगर किसी अधेड़ आयु की औरत को फुटपाथ पर खड़ा देखता, तो उसका हाथ पकड़ कर सड़क पार करा देता. अगर कोई औरत बच्चों के साथ खड़ी हुई टैक्सी का इंतजार करती हुई मिलती, तो मैं टैक्सी रोकने में उसकी सहायता करता. सिनेमा हॉल में अगर किसी लड़की को टिकट की जरूरत होती तो उससे रुपये ले कर उसको टिकट खरीद देता. किसी ट्रेन में यदि लड़की को बैठने की जगह न मिलती, तो मैं अपनी सीट आफर करता. कोई नौजवान लड़का अगर किसी नौजवान लड़की से मजाक करता, तो मैं लड़के को झाड़ देता. अगर किसी वेश्या को छेड़ते हुए देखता, तो फौरन जली-कटी सुनाता. भला इस वेश्या का क्या दोष है, अगर पेट भरने के लिए बेचारी को यह धंधा अपनाना पड़ा, तो पहले इस समाज को सुधारिए, इसको बदलिए.

मुहब्बत और पवित्रता एक-दूसरे से बहुत दूर रहती हैं, यानी जहां पवित्रता होती है, वहां मुहब्बत नहीं होती और जहां मुहब्बत होती है, वहां पवित्रता नहीं होती. मुहब्बत केवल एक बार होती है. लेकिन दोस्त, अपना अनुभव तो यही कहता है कि एक औरत के साथ सारा जीवन व्यतीत करना बड़ा कठिन है और इनसान बोर हो जाता है. आखिर प्रेमिका भी एक इनसान होती है, चाहे वह कितनी ही सुंदर हो, चाहे वह अजंता और एलोरा की जीती-जागती तसवीर हो, आखिर कितने साल तुम उसके साथ रह सकते हो? अगर वह समझदार है, तो एक-न-एक दिन वह तुम्हें छोड़ देगी. और अगर तुम उससे अधिक समझदार और चालाक हो, तो इससे पहले कि वह तुमसे बोर हो जाये, तुम्हें यह चाहिए कि उससे बोर हो कर उसे छोड़ दो.

मैं जीवन में सदा इसी मार्ग पर चला. तुम सोच रहे हो कि क्या मुहब्बत भी फार्मूले के अंतर्गत की जाती है? जी जनाब, इसमें आश्चर्य की कौन-सी बात है! यार, तुम यह बताओ, आजकल कौन-सा काम है, जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी फार्मूले के अंतर्गत नहीं किया जाता? फिल्में बनती हैं, फार्मूले के अंतर्गत. किसी रोग को देखो, उसका इलाज भी एक फार्मूले के आधार पर होता है. आजकल कुटुंबनियोजन की योजनाएं, बन रही हैं, स्टील प्लांट की पांच साला योजना, किसीका तख्ता उलटने का प्लान एक फार्मूले के अंतर्गत किया जाता है, हम लोगों के जीवन भी एक प्लान के आधार पर कायम रहते हैं. मुहब्बत भी क्या है? एक प्लान, मुहब्बत के बाद शादी और शादी के बाद बच्चे, उन्हें लिखाइए, पढ़ाइए उनकी शादियां कीजिए, बहू आती है, सास से लड़ाई होती है. और इस प्रकार बाप और बेटे के बीच लड़ाई-झगड़े की शुरुआत होती है. बेटा बाप के विरुद्ध होता है और बहू सास के व्यवहार से तंग आ कर आत्महत्या कर लेती है. भाई एक-दूसरे से तंग आ जाते हैं, एक-दूसरे को इतना जान-पहचान लेते हैं कि आपस में कोई प्यार नहीं रहता. मां-बाप इतने छोटे और कमीने नजर आते हैं कि कभी-कभी यह संदेह होने लगता है कि क्या यही हमारे-मां-बाप थे? पति-पत्नी इकट्ठे साथ रहते-रहते इतने बोर हो जाते हैं कि जी चाहता है कि दोनों एक-दूसरे का गला घोंट दें, या फिर संसार छोड़ कर तीर्थ यात्रा को या हज करने चले जायें.

दर-असल बोर्डम से बचने का एक ही रास्ता है कि मुहब्बत एक फार्मूले के अंतर्गत करो. जब एक प्रेमिका से तंग आ जाओ, तो दूसरी लड़की से मुहब्बत कर लो. दरअसल मैं मुहब्बत नहीं करता, कोई किसीसे मुहब्बत नहीं करता, मुहब्बत की कहानियां पागलों की कहानियां के अतिरिक्त और कुछ नहीं. इस ऐटमी दौर में मजनूं, फरहाद, रोमियो बनना कोई शराफत नहीं, बल्कि मूर्खता का उदाहरण है. पश्चिम में स्कूल के लड़के-लड़कियों को शरीरिक शिक्षा दी जाती है, बल्कि वहां अनुभव के हेतु शादियों का रिवाज पड़ चुका है. और मेरी तो यह भविष्यवाणी है कि पचास वर्षों के अंदर-अंदर, जबकि हम और तुम न होंगे, शादी का रिवाज ही समाप्त हो जायेगा.

मुझे तो हंसी आ जाती है, जब कभी मैं यह सुनता हूं, या किसी समाचारपत्र में पढ़ता हूं कि फलां साहब ने आत्महत्या कर ली, क्योंकि उन्हें अपनी मनचाही चीज नहीं मिली. मृत्यु के बाद कुछ नहीं रहता. निकट के सगे-संबंधी मरने वाले के लिए कुछ देर आंसू बहायेंगे, उसके बाद फिर वे जीवन की उलझनों में उलझ जाते हैं. सारा जीवन कोई किसीके लिए रोता ही नहीं, रो सकता भी नहीं. यह जीवन का कारवां इसी प्रकार चलता रहेगा.

यह जरूरी नहीं कि इनसान अधिक खाये. मगर कम खाने में क्या कमाल है? यानी इनसान इतना जरूर खाये कि शरीर में शक्ति की बिजली जैसी लहर दौड़ती रहे. अगर इनसान कमजोर हो, तो वह जीवन के कई सुखों से वंचित रहता है. जीने की इच्छा कम होती है, वह फलसफाना बात अधिक करता है, जैसी कि इस समय मैं कर रहा हूं. दरअसल मैं विषय को बदलना चाहता हूं. क्या खयाल है उस लड़की के बारे में तुम्हारा? वह लड़की, जो हमारी मेज से जरा आगे की मेज के पास बैठी है, जिससे आनंद लेना कोई बुरी बात नहीं. तुमने शायद इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि जब हम दोनों ने इस होटल में प्रवेश किया था, तो हर इनसान की निगाह मेरे ऊपर थी, लेकिन अब हर आदमी उस लड़की को देख रहा है. मैं भी उस लड़की की ओर बार-बार क्यों देखता हूं, यह जानते हुए भी कि तुम्हारी निगाहों में मेरी इज्जत कम हो जायेगी. भाड़ में जाये ऐसी इज्जत, जो सुंदरता के मार्ग में दीवार बन जाये.

इस लड़की की सुंदरता इस धीमी-धीमी रोशनी में एक आंच-सी देती है. गरदन का हलका-सा खम और काले बालों का कंधे पर लटकना, लड़की का अपनी दोनों कोहनियों को मेज पर रखना और अपने दोनों हाथों में चेहरे को थाम लेना, स्वप्न-भरी पलकों का धीरे-धीरे हिलना, आपस में मिलना, यह सोयी-सोयी-सी आंखें, जिनमें नींद का नशा है, या शराब का, कोई नहीं जानता. रात भर यह लड़की जागी है, या इसने शराब पी है. यह कमबख्त लाल रोशनी कहां से आ गयी! इस लाल रोशनी में लड़की के गाल सुरजमुखी की भांति तमतमा उठे हैं.

मैं रोने का कायल नहीं. मैं बिल्कुल नहीं रोता, किसीके सामने बिलकुल नहीं रोता. हां, रोता हूं, तो अकेले में रोता हूं. ताकि लोगों को मेरी कमजोरी का पता न चले.

लो भई, वह लड़की चली गयी, अच्छा हुआ, वह चली गयी. वह न जाती, तो लोग मेरी ओर न देखते. दर-असल होटल में लड़कियों का अधिक महत्व है. मजमे में हजारों लड़कियां आती हैं. कोई उनकी ओर नहीं देखता, अगर कोई देखेगा, तो पल भर के लिए. उसके बाद सबकी निगाहें मुझ पर जम जाती हैं. मेरा खयाल है, अब यहां से उठना चाहिए. यह जगह मेरे बैठने के लायक नहीं है, क्योंकि अगर कोई दूसरी लड़की, यानी कोई सुंदर लड़की इस होटल में आ गयी, तो सब लोग उसकी ओर देखने लगेंगे.

★ ★

मैं अपने जीवन का रहस्य तुम्हें बताना चाहता हूं. वास्तव में यह मेरी जिंदगी रहस्य नहीं है. पर मेरी नसल का रहस्य है. यह रहस्य उस चीज से संबंधित है, जिसे हम रुपया कहते हैं. रुपये के पीछे भाग-दौड़, एक अंधी कोशिश, एक श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करने की जाहिलाना कोशिश. . .बहरहाल तुम्हें बताना चाहता हूं कि जब मेरे मां-बाप इस बंबई शहर में आये थे, तो बड़े ही गरीब थे. उस समय उनके चार बेटे थे. रोजी-रोटी के लिए मेरे पिताजी को इतनी मेहनत करनी पड़ती थी कि बताना कठिन है. फिर वह अमीर हो गये. कारोबार ऐसा चला कि रुपयों की बारिश होने लगी. मलबार हिल पर उन्होंने एक शानदार कोठी बनवा ली, चार फैक्टरियों और दस कारों के मालिक बन गये. चारों बेटों को पढ़ाई-लिखाई के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए हिंदुस्तान से बाहर भेज दिया. मेरे भाइयों ने शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात वहीं शादियां कर लीं. किसीने अंग्रेज लड़की से शादी कर ली, किसीने पेरिस की सुंदर नौजवान लड़की से ब्याह कर लिया, किसीने अमरीकी लड़की को अपना जीवन-साथी बना लिया. पिताजी ने कारोबार के लिए सबको रुपये दिये. मेरे भाइयों ने अपने-अपने कारोबार को ऐसा चमकाया कि लाखों के मालिक बन गये.

मेरी मां अत्यंत सुंदर थीं. उनका कद लंबा था और चेहरे की बनावट क्लासिकल थी. गोरी रंगत, छरहरा बदन, नाक सुतवां, लंबूतरा चेहरा, बादामी आंखें और बाल तो कमर तक लटकते थे. जवानी को लांघ कर जब मेरी मां ने बुढ़ापे की आयु में पैर रखा, तो उनकी सुंदरता में बढ़ोत्तरी ही हुई थी. बड़े मिलनसार स्वभाव की थीं. ममता, प्यार और मेल-जोल की साक्षात मूर्ति थीं.

मैं इस समय केवल यह घटना सुनाना चाहता हूं, जिसका संबंध मेरे बाप की मृत्यु से है. इतनी दौलत इकट्ठी करने के बाद, अपनी कोठियां और फैक्टरियां बनाने के बाद अचानक उन पर लकवा का हमला हुआ और शरीर के दायें भाग पर बड़ा तेज फालिज गिरा, दायां भाग बिल्कुल बेकार हो गया. यहां तक कि जबान से वह एक शब्द न बोल पाते थे. डाक्टरों नर्सों और इलाज करने वालों की कमी न थी. इसके अतिरिक्त मेरी मां ने जो सेवा उनकी की, वह कभी भुलायी नहीं जा सकती थी. एक साये की भांति उनके साथ रहीं. मेरे पिताजी का जरा-सा संकेत उन्हें बता देता कि उन्हें किस चीज की जरूरत है. कभी-कभी मेरे पिताजी सबको कमरे से बाहर निकाल देते और केवल मेरी मां कमरे में रह जातीं. एक-आध घंटे कमरे का दरवाजा बंद रहता, फिर खुल जाता और लोग मिलने आते.

हर दिन उनकी हालत बिगड़ती जाती. चारों बेटे फारेन से आ गये थे. उनके बच्चे और उनकी पत्नियां भी आयी हुई थीं. सबके सब होटलों में ठहरे हुए थे, केवल मैं उनके साथ कोठी में रहता था. मुझे कुछ ऐसा लगता, जैसे पिताजी मुझसे कुछ कहना चाहते हों और न कह पाते हों. उस दिन पिताजी के जीवन की अंतिम रात थी. उनके चेहरे पर बड़ा दुख छाया हुआ था, आंखों में भय प्रकट हो रहा था, जैसे वह कुछ कहना चाहते थे, लेकिन कह न पाते थे. रात के बारह बज चुके थे. मैं और मां उनके सरहाने बैठे हुए थे, नर्सें खड़ी हुई थीं. उन्होंने सबको बारी-बारी जाने का इशारा किया. पहले एक नर्स गयी, फिर दूसरी, फिर उन्होंने मेरी मां की ओर देखा. मां ने उनकी ओर देखा. वह समझ गयीं, अब बैठना ठीक नहीं क्योंकि पिताजी का चेहरा क्रोध से फूल गया था. आंखें लाल हो गयी थीं. मां चली गयीं. अब कमरे में केवल मैं उनके पास रह गया.

रात के बारह बज चुके थे. काली अंधियारी रात थी. उन्होंने इशारे से मुझे समझाया कि दरवाजा बंद कर दो और चटखनी लगा दो. मैंने वैसा ही किया. उन्होंने मुझे इशारा किया कि मैं अपनी कुर्सी उनके निकट ले आऊं. मैंने अपनी कुर्सी उनके निकट कर ली.

फिर उन्होंने धीरे से जबान खोली और बोले—बेटा. . .! मैं मर चुका हूं. तुम्हारा बाप मर चुका है. मैं वह नहीं हूं. जो तुम मुझे समझते हो. अब मेरा और तुम्हारा कोई रिश्ता नहीं है. मैं जानता हूं, ये मेरे बेटे, मेरी बहुएं क्यों आयी हैं. ये सब लोग जायदाद का बंटवारा चाहते थे. और मैंने बंटवारा कर दिया है. वसीयत नामे पर मैंने हस्ताक्षर कर दिये हैं. मैं अब न किसीका बाप हूं, न कोई मेरा बेटा. मैं तुम्हें चाहता हूं, शायद इसीलिए तुम्हें मैं वह बात बताना चाहता हूं, जो आज तक मैंने किसीको नहीं बतायी. तुम्हारी मां सुंदर थी और अब भी सुंदर है. वह शरीफ थी और अब भी शरीफ है. जब मेरी और उसकी शादी हुई थी, तो मैं गरीब था. अच्छे जीवन की कामना ले कर हम बंबई आये. जहां से चले थे, वहां हमारी आर्थिक हालत बड़ी खराब थी. मैंने बहुत कोशिश की कि कोई नौकरी मिल जाये, कोई बिजनेस कर सकूं, मगर हर कोशिश बेकार साबित हुई. मैं अपने बच्चों को ले कर इस बड़े शहर में आया. तब तक तुम पैदा नहीं हुए थे. हम एक दोस्त के यहां ठहरे. उस बेचारे ने हमारी खूब आवभगत की, लेकिन दौड़-धूप करने के बाद भी मुझे नौकरी न मिली. रुपया तो था नहीं, बिजनेस क्या करता. मेरे दोस्त के घर एक बिजनेसमैन आ कर ठहरता था. उसकी नजर मेरी पत्नी पर पड़ गयी. बेटे, तुम अपनी मां को जवान अवस्था में न देख सके, मगर उसे इस बुढ़ापे में देख कर तुम अनुमान लगा सकते हो कि यह जवानी में कैसी रही होगी. तुम्हारे सामने मुझे यह सब कहते हुए अच्छा नहीं लगता, लेकिन क्या करूं, जो वास्तविकता है, उसे कहने में क्या हर्ज है. जरा पानी देना, बेटा, गला सूख रहा है.

—आप अधिक बातें न कीजिए, डाक्टर ने मना किया है. मैंने पानी देते हुए कहा.

पिताजी ने पानी पिया और फिर कहने लगे—वह बिजनेसमैन तुम्हारी मां पर मोहित हो गया. यह एक तरफा प्रेम था. मैं तारीफ करूंगा तुम्हारी मां की कि गरीबी और दुख के समय में भी कभी उसके पग न डगमगाये. वह बिजनेसमैन लाखों का मालिक था, उसने मुझसे तो कुछ न कहा, हां, जिस दोस्त के यहां हम ठहरे थे, उससे जरूर कहा कि अगर एक बार एक रात के लिए यह औरत मेरे पास रहे, तो जो कुछ इस औरत का पति मांगेगा, मैं दूंगा. . .

यह बात मुझ तक पहुंची. कभी-कभी गरीबी और बेरोजगारी इस कदर कष्टप्रद हो जाती है कि इनसान वह सब करने पर भी विवश हो जाता है, जिसे करने के लिए उसकी आत्मा तैयार नहीं होती. मैं जानता था कि मेरा दोस्त भी मुझसे तंग आ चुका था. . .

जो कुछ मेरे दोस्त ने मुझसे कहा, मैंने सुन लिया और सारी रात जागता रहा. तुम्हारी मां भी न सो सकी. अंत में तुम्हारी मां ने मुझसे पूछा—क्या बात है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको नींद क्यों नहीं आ रही है?...

मैंने कहा ––तुम्हें अच्छी तरह मालूम है कि हम जीवन के दिन कैसे काट रहे हैं. अब मुझे ऐसा लग रहा है कि मेरा दोस्त मुझसे कहने वाला है कि तुम यहां से चले जाओ. इसके बाद हम कहां जायेंगे. कहां रहेंगे, मुझे कुछ मालूम नहीं. हां, एक बात उसने कही है, जो मुझे तुमसे नहीं कहनी चाहिए. इसके पहले कि मैं तुमसे वह बात कहूं, मुझे मर जाना चाहिए. लेकिन मुझ में इतना साहस नहीं है. एक बिजनेसमैन यहां आता है...

––हां, वह अधिकतर मुझे घूर कर देखता है.

––वह कहता है, अगर तुम एक रात उसके साथ सो जाओ, तो जो कुछ मैं मांगूंगा, वह देगा...

तुम्हारी मां चुप रही और फूट-फूट कर रोने लगी, बोली–– अरे, तुमने तो यह बात कह कर अपनी आत्मा को बेच दिया.

दूसरे दिन वह बिजनेसमैन आया और तुम्हारी मां उसके साथ चली गयी. जब वापस आयी, तो उसने मेरे हाथों में नोटों का एक बंडल थमा दिया.

वह मेरी इनसानियत, शराफत, नेकी, प्यार और मेल-जोल की अंतिम रात थी. मैंने अपनी पत्नी को बेच दिया था और मेरी पत्नी ने अपने बच्चों के लिए अपनी आबरू और शराफत को बेच दिया था. फिर उन रुपयों से मैंने कारोबार शुरू किया. न जाने उन नोटों में क्या चमत्कार था कि मेरा कारोबार चल पड़ा. जिस काम में हाथ डालता, रुपयों की वर्षा होने लगती. फिर जुआ, रेस, सट्टा खेलने लगा. सबमें दौलत प्राप्त हुई. इसके बाद एक फैक्ट्री की नींव रखी, जिसमें पेन बनने लगे और कारोबार बढ़ने लगा, बैंकों में रुपया जमा होने लगा और फिर मैं एक बड़ा दौलत वाला बन गया. पांच फैक्टरियों का मालिक. बैंकों में रुपया है. मेरे पास किसी चीज की कमी नहीं. लेकिन जब उस घटना पर निगाह जाती है, तो यह मालूम होता है कि जो दौलत मैंने इकट्ठी की है, उसकी नींव कितनी घिनौनी है. मैंने सब कुछ पा कर सब कुछ खो दिया है. मैं तुमसे यह कहना चाहता हूं कि ये सारी चीजें मुझे आत्मा बेच कर प्राप्त हुई हैं...

लेकिन बेटा, जो कुछ मैंने कह दिया, इससे मेरे दिल का बोझ हलका हो गया. ऐसा मालूम होता है, जैसे यही कुछ कहने के लिए मैं आज तक जीवित था. मुझे उम्मीद है कि तुम अपनी मां का, जो एक औरत भी है, उसी प्रकार सम्मान करोगे, जिस प्रकार अभी तक करते आये हो. अब तुम अपनी मां को मेरे पास भेज दो.

मैं पिताजी के कमरे से निकल कर मां के कमरे में गया. मां पलंग पर लेटी हुई थीं.

––मां...मां, पिताजी आपको बुला रहे हैं. मां ने कोई उत्तर न दिया. मैं जरा जोर से चिल्लाया. मां... वह फिर न बोलीं. मैं घबरा कर आगे बढ़ा. मां अकेली-सी पड़ी थीं. मैंने उनकी नब्ज देखी. वह मर चुकी थीं. पास की मेज पर एक छोटी-सी शीशी खाली पड़ी थी, जिस पर लिखा था––पॉइजन.

और जब मैं पिताजी के कमरे में गया, तो पिता जी मौत की गोद में सो रहे थे. शायद यही बात बताने के लिए वह जीवित थे.

★ ★

अरे, तुम सो गये मेरी जिंदगी की दुर्घटनाएं सुनते-सुनते! मेरे दोस्त, इससे बड़ी ट्रैजेडी और क्या हो सकती थी! मैंने अपनी मां को वेश्या बना दिया और बाप को दलाल, और आप मजे से आराम कर रहे हैं, जैसे कुछ हुआ ही नहीं! मेरी इतनी बड़ी तौहीन! भगवान की कसम, तुम्हारी जगह कोई और होता, तो कोड़े मार-मार कर खत्म कर देता! मेहमान न होते, तो खाल उधेड़ देता. ठीक है, सोये रहो, जागो नहीं. अगर तुम्हारी आंखें खुल गयीं, तो तुम्हें मेरे अपमान का पता चल जायेगा. सोये रहो और मेरी बातें सुनते रहो. पिताजी बहुत दौलत छोड़ कर मरे थे, इसलिए मेरे बड़ा आदमी बनने का मार्ग साफ हो गया. मैंने अनगिनत रुपया फेंका. पार्टियां कीं. शराबों की बोतलें खोल दीं. प्रेस वालों को बुलाया. फोटो, तसवीरें, इंटरव्यू, भिन्न-भिन्न विषयों पर मेरे उपदेश और वक्तव्य छपने लगे. समाज के बड़े-बड़े लोगों को घर बुलाया. उन्हें खूब खिलाया-पिलाया. उनके साथ फोटो खिचवा कर समाचारपत्रों में छपवाये. बस, फिर क्या था, मैं एक बड़ा उपदेशक और बड़ा आदमी बन गया. अगर किसी के घर का, किसी मार्केट का उद्घाटन होता और मुझे उद्घाटन के लिए बुलाया जाता तो मैं जरूर जाता और इस बात का ध्यान रखता कि फोटो लिये गये हैं या नहीं और मेरी पसंद के फोटो समाचारपत्रों में छपवाये गये हैं या नहीं. बड़ा आदमी बनने का सबसे बड़ा गुर यह है कि आप शब्दों से खेल सकें, व्याख्यान का हर शब्द चुभता हुआ हो, वाक्य जादू-भरे हों और उपदेश करने का लहजा शहद-भरा हो. शब्दों का एक बड़ा भंडार आपके पास होना चाहिए, ताकि आप लोगों को भली प्रकार बहका सकें. हमारी भक्त मंडली बड़ी सीधी-सादी है, उसे बहकाना बड़ा आसान है. आपकी निगाह हर उलझन और हर विषय पर होनी चाहिए. आजकल नास्तिकता का खूब जोर है. कुछ लोगों का 'इलाज' हो रहा है लेकिन कुछ लोगों के ही 'इलाज' से क्या होगा? क्या इससे सुधार हो सकता है? मुझे इन नास्तिकों को समझाना पड़ेगा. इन्हें ठीक मार्ग पर लाना होगा. वास्तव में सफल उपदेशक वही होता है, जिसके पास हर मसले का हल हो और वह किसी मसले का हल न करे. एक मसले का हल तो उसे कभी नहीं करना चाहिए, वरना उसकी उपदेशकी खतरे में पड़ जायेगी और वह मसला है आत्मा-परमात्मा और ईश्वरीय सत्ता का...

दोनों का संबंध आपस में वही है, जो मां और बेटे का होता है. इसीलिए आत्मा-परमात्मा के मसले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर शानदार, प्रभावपूर्ण और दिल दहला देने वाला व्याख्यान दीजिए, मगर भगवान के लिए इस मसले को न हटाइए, वरना उपदेशकों का पत्ता कट जायेगा. जहां तक छोटे-मोटे मसलों का संबंध है, जैसे जाति के झगड़े, प्रांतीय भेद-भाव, भाषाई झगड़े, उर्दू-हिंदी के झगड़े, कितने ही मसले, इनके संबंध में उपदेश दे कर लोगों को उलझाया जा सकता है, या फैसला भी किया जा सकता है.

एक और खास मसला है मेरी निगाहों के सामने और वह है आध्यात्मिक मसला. पूरब और विशेष कर हमारा हिंदुस्तान तो आध्यात्मिकता का सबसे बड़ा घर है. आजकल इंटरनेशनल रूप में इस विषय ने मुख्यता प्राप्त कर ली है और यह आंदोलन खूब जोर पकड़ रहा है. एक-दो बार मैंने सोचा कि मैं भी स्वामी बन जाऊं, मार्डन स्वामी जो एअर-कंडीशंड कूपे में यात्रा करते हैं. यह उपदेशक और स्वामी, दोनों का काम शब्दों से खेलना है. अच्छी-खासी भीड़ मिलती है. सब बड़े-छोटे, मर्द-औरतें आदर-भरी दृष्टि से देखते हैं. एक सफल योगी, स्वामी या ऑल इंडिया शोहरत वाला स्वामी साल में एक-दो बार न्यूयार्क, लंदन, पेरिस के चक्कर लगा सकता है. वहां कीर्तन के अड्डे खोले जा सकते हैं. इसी प्रकार फॉरेन एक्सचेंज में बढ़ौती भी हो रही है. जहां तक इंगलैंड और अमरीका का संबंध है, वहां इस आंदोलन ने काफी जोर पकड़ा है. बहुत-से समाचारपत्रों में अमरीका और ब्रिटेन के रहने वालों की तसवीरें छपती हैं कि वे किस प्रकार आत्मिक विषय से प्रभावित हो कर धोती पहने हुए, गले में माला डाले हुए ढोलक बजा-बजा कर पागलों की भांति नाच रहे हैं. उन्हें नाचते-कूदते देख कर मुझे हर्ष होता है कि आखिर हिंदुस्तानियों ने अपनी गुलामी का बदला ले लिया. अमरीका ऐटमी हथियारों से हमें डराता है और कभी-कभी हमारा अपमान भी करता है, लेकिन जो दुर्गत आजकल अमरीकी और अंग्रेज नौजवानों की हो रही है, इसके लिए मुझे पूरब के समस्त आध्यात्मकवादियों, उन स्वामियों और योगियों को धन्यवाद देना होगा कि उन्होंने वह चमत्कार करके दिखा दिया, जो गांधी और जवाहरलाल नेहरू न कर सके. यदि पश्चिम वाले इसी प्रकार पूरबी आध्यात्मिक विषय पर विश्वास लाते गये, तो परमात्मा की कृपा से जिस प्रकार हम नाकारा हो गये हैं, उसी प्रकार अमरीका और ब्रिटेन की पूरी नयी और पुरानी नसल नाकारा हो जायेगी. दूसरी जातियों को नकारा बनाने की जो योजना हमारे संतों, मुनियों और योगियों ने बनायी है, मैं उसका हृदय से स्वागत करता हूं. हम तो पहले ही नाकारा थे, पूरी दुनिया को नाकारा बना देने का काम वास्तव में किसी चमत्कार से कम नहीं है. यह आंदोलन दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है. इसे अपनाया जा सकता है. अभी दिल नहीं मानता, राह में केवल एक रुकावट है और वह है चोला बदलने की रसम, यानी धोती-लुंगी या भगवे कपड़े पहनने होंगे. और मुझे ऐसे कपड़े पहनने की आदत नहीं है. हो सकता है, दो-तीन वर्षों में हमारे योगी और स्वामी भी पैंट और बुश शर्ट पहनना शुरू कर दें. उस समय मैं स्वामियों की लाइन में तत्काल खड़ा हो जाऊंगा. इसके लिए मुझे बहुत किताबें पढ़नी पड़ेंगी. कहीं यह न हो जाये कि भगवे वस्त्र पहन कर स्वामी तो बन जाऊं, मगर आत्मिक उपदेश करने में असफल हो जाऊं. अगर चोला ही बदलना है, तो ए ग्रेड के स्वामियों में मेरी गिनती होनी चाहिए. यों मैं इस प्रकार की सभाओं में सम्मिलित हुआ हूं, जहां देश के विख्यात स्वामियों ने उपदेश किये, मैंने उनके संबोधन का ढंग, बात करने का अंदाज, उनके जोशीले वाक्य और उनकी भावुकता को खूब ध्यान दे कर सुना और देखा है और विशेषकर इस बात को जानने की चेष्टा की कि वह ऐसी कौन-सी दुखती रग है, जिस पर वे उंगली रखते हैं तो लोग वाह-वाह चिल्ला उठते हैं. एक बात मैंने नोट की जो आपको बता देता हूं कि मैंने इस प्रकार की सभाओं में औरतों की अधिक संख्या देखी है. औरतों को बड़ी आसानी से मूर्ख बनाया जा सकता है. एक तो उनमें समझ ही नहीं, अगर मान भी लिया जाये कि समझ होती है, तो वह बहुत थोड़ी मात्रा में होती है. इसलिए इस प्रकार की सभाओं को प्रभावित करना बड़ा आसान है. मेरे सोये हुए दोस्त, उपदेशकों की जिस सीढ़ी पर मैं पहुंचा हूं, वह उपदेशकों की अंतिम सीढ़ी है. वास्तव में मैं यह कहना चाहता हूं कि मेरा जीवन अंदर से खोखला और घटिया हो चुका है. मैं इसे और घटिया नहीं बना सकता. यह गिरावट की भी अंतिम सीढ़ी है, जहां अच्छाई और बुराई में कोई अंतर नहीं रहता, जहां अमीरी और गरीबी की कोई पहचान नहीं, जहां झूठ और सच की कोई चिंता नहीं. जब इनसान इस सीढ़ी पर पहुंच जाये और जब उसकी बात को भगवान का दर्जा दिया जाने लगे, तो ऐसे समय प्रोफेशन बदलना परले दर्जे की मूर्खता होगी.

इस समय मुझे भ्रम हो गया है. क्या तुम मौजूद भी हो? कहीं मैं अपने-आपसे तो बातें नहीं कर रहा था? यानी तुम नजर नहीं आते. वायु में घुल गये हो, या तुम्हें सोने में चलने की बीमारी है? बहरहाल तुम चले गये. अच्छी ही किया, तुम्हें एक दिन जाना ही था. तुमने मेरी बातें सुनीं कि नहीं. तुम मेरे जीवन के रहस्य से प्रभावित हुए या नहीं, मुझे इससे कोई मतलब नहीं. मेरा काम है उपदेश देना. लोगों को प्रभावित करना. जब तक लोग मेरे उपदेशों से प्रभावित होते रहेंगे, मैं एक उपदेशक की हैसियत से व्याख्यान करता रहूंगा. मुझे मालूम है, एक समय ऐसा भी आने वाला है, जब मोड़ नहीं रहेगी, एक आदमी भी नहीं रहेगा, मैं केवल अपने आपसे बातें करूंगा. मेरा साया भी मुझसे जुदा हो जायेगा. वह दिन कयामत का दिन होगा, जब मेरा उपदेश सुनने के लिए कोई न आयेगा. उस दिन के आने के पहले मुझे मर जाना चाहिए. अच्छा विदा, मेरे भाई, मेरे हमदम, मेरे प्यारे, विदा! □□□

(अनुवाद : साबिर दत्त)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी हत्या

• हेमांगिनी रानडे

अब बुत बन कर खड़ी रहेगी, या कुछ बोलोगी भी ?

. . .

—नहीं जी, मुझसे नहीं होगा! यह इनसान है या हैवान?

. . .

—सुनायी नहीं देता? या गूंगी हो? ओफ्फो! एक शब्द भी बोले, तो कसम ले लो!

हां! नहीं बोलूंगी मैं! और बोलूं भी क्या? कि यह मेरा कसूर नहीं? कि मेरे हाथ से फूलदान नहीं टूटा? कि मैंने उसे नहीं गिराया? कि वह छोटी मेम सा'ब के हाथ से सरक गया?

नहीं बोलूंगी. कुछ नहीं बोलूंगी. एक बात कहूंगी, तो दस और कहनी पड़ेंगी, सुननी पड़ेंगी. इससे बेहतर है कि मैं खामोश रहूं. और फिर खामोश रहने की तो मेरी बचपन की आदत है. कितने साल हुए? कौन जाने! हुए होंगे! पच्चीस या पचास. हां, इससे क्या होता है? तबसे उसके साथ मेरा बहनापा है. बहनापा या दुश्मनी? कुछ भी कह लो. लेकिन रिश्ता गहरा है. मैं उसका साथ नहीं छोड़ सकती. चाहे वह कितना ही मजाक उड़ाये मेरा. हां, वह मेरा मजाक उड़ाती है. हंसती है मुझ पर. . . . पहले-पहल कब हंसी थी वह?

हां, जब छुटकू घुटनों के बल चलता टूटी गेंद लेने जा रहा था. कैसा दीखता था. और मैं? क्या हो गया था मुझे उस समय? खूब हंसी थी मैं तब. . . जिंदगी में शायद पहली बार. गरीब परिवार के ढेर-से बच्चों को जल्दी हंसी नहीं आती. और फिर, मैं तो बीच की थी. एक के बाद एक तीन बहनों दो भाइयों की पीठ पर हुई, तो घर की खुशी कुछ सहम गयी. मैं तीसरी लड़की, मेरे बाद एक भाई छुटकू. जब मैं हुई, तो घर भर सुन्न-सा हो गया. वे चाहते थे कि मैं न होती, मेरी जगह छुटकू होता. लेकिन मैं हुई. मुझमें और दूसरी बहनों में भी कुछ फर्क था—— वे सीधी-सादी थीं, और मैं. . ? मैं?——भगवान ने तुझे बनाते समय भंग खायी होगी, मेरी मां कहा करती. माथे पर भद्दी-सी मोटी गांठ थी और दांत आगे को निकले हुए. मैं नजरें नीची करती, तो सबसे पहले मुझे अपने दांतों का आभास मिलता. मैं कभी लजायी नहीं. कैसे लजाती? दांत दिखायी देने लगते मुझे अपने. और हां, लजाने का मौका भी कब आया? नहीं आया. मैं हंसती भी नहीं. तब भी दांत दिखायी देते. दिखायी तो वह कैसे भी देते लेकिन हंसने पर शायद ज्यादा खूंखार दिखते.

लेकिन उस दिन मैं हंस दी. अच्छा लगा मुझे. कितना हलका-हलका, मानो टूटी गेंद के साथ मैं अब उछल पड़ूंगी हवा में. कितना भला था. लेकिन तब पिताजी झल्ला पड़े—— हंसती है कि हिनहिनाती है, कलमुंही! लड़की है कि घोड़ी! घोड़ी? मैं? चुप हो गयी. बस. तब वह हंसी थी. कौन? मेरी साथिन. खूब हंसी थी, लेकिन बिल्कुल चुपचाप. उसने मेरी ओर देखा और हंसते-हंसते लोट-पोट हो गयी, बोली, अब आज से तुम मेरे कब्जे में हो. मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगी.

बस, तब से वह मेरे साथ रहती है. चिपकी रहती है. एक पल को मुझे नहीं छोड़ती. लेकिन अच्छा ही तो है. अपना कहने को तो कोई है. मां-बाप पाल नहीं सकते थे, सो मुझे नौकर कर दिया. खाना-पीना और तनख्वाह उन्हें दी जाये—— छह रुपये. मुझे अपने माथे की गांठ और लंबे दांतों के साथ उन्होंने विदा कर दिया. मैं छुटकू के बिना रह गयी. लेकिन क्या हुआ, मेरी सहेली जो थी मेरे साथ. मैं उसी से बातें किया करती. और वह मुझसे. लेकिन हमारी बातें किसीको सुनायी थोड़े ही देती थीं? हम चुपके-चुपके बातें किया करते और फिर मुझे किसीकी जरूरत ही न पड़ती.

★ ★

मेरी मां कभी-कभी मेरे मालिक के यहां आती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पगार वसूलने. मुझे नफरत थी अपनी मां से. मां? हां! जन्म देने वाली को शायद मां ही कहते हैं. वह आती और मालकिन के पास अपना दुखड़ा रोने बैठ जाती. चिढ़ थी मुझे उससे. इसलिए नहीं कि उसने मुझे—मांस के इस वीभत्स लौंदे को—जन्म दिया है, बल्कि इसलिए कि वह लोगों का ध्यान मेरे भोंडेपन की ओर आकर्षित करती थी. जहां मैं काम करती, वहां के लोग मुझे दिन-रात देखते थे. आदत हो गयी थी उन्हें मेरे उस रूप को देखने की. लेकिन जब मेरी मां आती, वह नये सिरे से मेरा कुरूप उनकी नजरों में बांधती. कहती—देखा? इस डाइन को देखा बहूजी? सुबह देख लो, तो दिन भारी हो जाये. यह तो आप हैं, जो इस चुड़ैल को संभालती हैं. . . ! और मालकिन की आंखों में एक नया भाव उभरता. वह मेरी तरफ ऐसे देखती, जैसे पहली बार देख रही हो. मेरे भोंड़े चेहरे में उसे नया घिनौनापन दिखलायी देता. घृणा होती मुझे अपनी मां से. और मेरे माथे की गांठ दुखने लगती. शूल उठते उसमें. मैं बौरा जाती. उफ्! तब वह—मेरी सहेली—मुझसे चुपके-चुपके कहती—मैं जो हूं! मैं तुझे घिनौना नहीं समझती. तू मुझमें समा जा. कोई तुझे कुछ न कहेगा. फिर वह हंसती—बिना आवाज के. मेरा लाख जी चाहता कि मैं मां से कुछ कहूं, क्यों वह बार-बार मुझे नयी मौत दे जाती है! मालकिन की फटी-फटी आंखों में उंगलियां खोंच दूं—देखोगी मुझे? दीदे निकाल दूंगी!

लेकिन वह समझाती, और मैं मुंह मोड़ कर अपनी उस सहेली के साथ घुलमिल जाती. वह मुझसे चिपक जाती और मैं उसको थामने के लिए छटपटाती. . .

कितनी नौकरियां बदलीं. . . मां-बाप नहीं रहे या नहीं आते. . .मरने दो सालों को? मुझे उनकी क्या जरूरत? मेरे पास वह जो थी. बस, बहुत था. उसको अपने से लिपटाये मैं खामोशी के आलम में निश्चिंत थी. नयी-नयी आंखों में अपने प्रति घृणा देखने की शायद मुझे आदत हो गयी थी. अब मैं बड़ी भी तो होने लगी थी. हां, मेरा शरीर कुछ अजीब ढंग से फूल रहा था. सपाटी की जगह कुछ गोलाइयां आ रही थीं. हुंह! आयें! इससे क्या! लेकिन अब मेरे साथ काम करने वाले नौकर—साले मर्द—पीछे से आ कर मुझे छूते. घिन आती मुझे. उबकाई आने लगती. छिः.

एक दिन एक ने पीछे से हाथ बढ़ा कर मेरे सीने को छूना चाहा. एक चांटा मारा मैंने उसे. हरामी गाल सहलाते हुए कहने लगा—है तो चुड़ैल और ऊपर से यह नखरा! कोई पूछेगा भी नहीं! हुंह! न पूछे! मैं कब चाहती थी किसीका पूछना. वह सबसे कहता फिरता—इसके तीन छातियां हैं. दो सीने पर, एक माथे पर. और खूब हंसते सभी. बस, मेरी गांठ दुखने लगती. जी चाहता कि सर पटक-पटक कर उसे लहूलुहान कर दूं. लेकिन वह समझाती—ना. . .ना. . .!

पर अब उसकी आंखें पहले-सी सहानुभूति भरी नहीं थीं. अब कुछ शरारत थी उनमें. मैं आश्वस्त हो कर भी आश्वस्त न होती. और उसकी वह हंसी. . . अब उसकी हंसी में पहले वाली बात नहीं थी. लगता, वह मुझे चिढ़ा रहा है. उसका लिपटना भी मुझे लिस-लिसा लगता. लेकिन कितने सालों की आदत थी उसमें अपने को खो देने की! मैं डूब-डूब जाती उसके सान्निध्य में.

अब मेरे शरीर की गोलाइयां लटकने लगी थीं. गांठ का दर्द जब-तब होता, पर मैं चुप थी. कहती क्या और किससे? पर वह थी न. वह सुनती. पर अब उसे सुनाने में राहत कहां थी? ऐसा लगता, वह मुझे बरदाश्त भर करती है, और कुछ नहीं. . . कुछ भी नहीं. . .

फिर एक दिन मैंने छुटकू को देखा. छुटकू! टूटी गेंद. . .हंसी. . .हलकापन. . .उसे देखते ही कितना अच्छा लगा! आहा, मेरा जी चाहा, हंस दूं. . . जी खोल कर हंस दूं. कितने साल हुए, मैं नहीं हंसी. . . पच्चीस या पचास. लेकिन आज मैं छुटकू के साथ हंसूंगी. वह भी हंसेगा. मैं दौड़ी. वह बाग में था. मुझे देख कर वह भी किलकारी मारने लगा. मैं उसके पास पहुंची. वह उछला, मैं झुक कर उसे उठाने लगी. . .अपने पास छुटकू को ले कर मैं हलकी हो जाऊंगी. . . हलकी. . . गेंद की तरह उछल पड़ूंगी दूर हवा में. मैंने हाथ बढ़ाये छुटकू और हंसने लगा. इतने में किसीने उसे मेरे हाथों से छीन लिया. छुटकू रोने लगा. वह कहने लगी—देख. . . देख, यह कैसी औरत है! हाय-हाय! खा जायेगी मेरे लाल को! चुड़ैल! डाइन! बदसूरत! घिनौनी. . .!

और. . . और छुटकू मेरी तरफ देखने लगा. उसकी आंखों में डर था. . .?. . .मेरा डर. . . मुझसे डर. घृणा थी. . . मुझसे. . .मेरे लिए. . . और तब वह हंस दी. . .जोर से. . .पहले की तरह चुपके-चुपके नहीं. . .खूब जोर से. . .हा-हा-हा-हा! कहने लगी. . .चीख-चीख कर—तू उठायेगी बच्चों को? तू? अपनी शकल तो देख तू. . .! हा-हा-हा-हा!

मेरा माथा! उफ्! कितना दर्द था! मेरी गांठ खूब दुख रही थी. मेरी छाती. . .भर गया उसमें दूध. . . लबालब. . .अब फूटा तब फूटा. और वह हंसी. . . चारों तरफ छुटकू का रोना. . .चीखना. . . दूध. . .लबालब. . .फूटा. . .हंसी. . .रामा उफ्. . . फूट गया. . .छाती फूट गयी. . .दूध. . .दूध. . . लाल रंग का. . .बहने लगा. . .रोना. . .चीखना चीखना. . .हंसी. . .लाल लाल. . .हा-हा-हा-हा. . . नहीं. . .नहीं. . .मैं उस हंसी को रोकूंगी, मैंने हाथ फैलाये. . .लाल हाथ. छटपटायी उसे ढूंढ़ने को. हमेशा वह मुझे छलती है, हाथ में नहीं आती. . . मैं पकड़ूंगी उसे. . .पा लिया! उसकी गरदन! चीखी वह, मैंने जोर से गरदन दबायी. . .भरपूर दबायी. लाल लाल हाथ लाल-लाल गरदन छुटकू रो रहा है. नहीं, मैं उसके साथ हंसूंगी. अब मुझे कोई नहीं रोक सकता. मैं खूब हंसूंगी. . . □□□

श्री समर्थ सदन, दूसरी मंजिल, डा. डी. डो. साठे मार्ग, गिरगांव, बंबई-४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा विभाग, हरियाणा

हरियाणा के लेखकों को पुस्तक प्रकाशन के लिये सहायतानुदान

राज्य के लेखकों विशेषतः युवा लेखकों को प्रोत्साहन देने के लिये भाषा विभाग, हरियाणा ने एक योजना आरम्भ की है, जिसके अंतर्गत हरियाणा के हिन्दी / संस्कृत / उर्दू लेखकों की अप्रकाशित पुस्तकों पर प्रकाशनार्थ आर्थिक सहायता दी जाएगी. प्रस्तुत की जाने वाली पुस्तक किसी भी विषय की हो सकती है, किन्तु वह टेक्स्ट-बुक या उसकी सहायक पुस्तक न हो. एतदर्थ निर्धारित प्रपत्र पर आवेदन तथा पुस्तक की एक पांडुलिपि विभाग में ३० सितम्बर, १९७५, तक पहुंच जानी चाहिये. आवेदन-पत्र तथा नियमावली के लिए निम्न पते पर तुरन्त लिखें.

निदेशक,

भाषा विभाग, हरियाणा,

कोठी नं. १५८०, सेक्टर-१८-डी, चण्डीगढ़—१६००१८

डी. पी. आर—हरियाणा (डी. १०६–७५)

केवल बिनाका टॉप टूथपेस्ट ही मुँह की पूरी रक्षा करता है

ARMS-CBT/26-008 HN

देखिये!
बिनाका टॉप का
विशेष फैलने वाला
तत्व किस प्रकार
काम करता है।

कॉंच की प्लेट में थोड़ा-सा पानी डालिए। थोड़ा-सा कोयले का चूरा या रंगीन पाउडर पानी पर छिड़किए।

पानी में बिनाका टॉप घोलिए। मिश्रण की एक बूंद कॉंच की प्लेट के बीचों-बीच डालिए।

अब देखिए कि बिनाका टॉप कितनी तेज़ी से चारों तरफ़ फैलता है... पानी की सतह पर फैले हुए मैल को काटता है और पानी कितना साफ़-सुथरा हो जाता है।

बिनाका टॉप बिल्कुल इसी तरह काम करता है। इसमें एक विशेष फैलने वाला तत्व होता है जो तुरंत आपके मुँह में फैल जाता है और दांतों में सड़न पैदा करने वाले कीटाणुओं का नाश करता है और सांस की दुर्गंध को दूर करता है। यह आपके मुँह की पूरी रक्षा करता है।

बिनाका टॉप टूथपेस्ट
व बिनाका टूथब्रश मुँह की पूरी रक्षा के लिए

सीता-गायत्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमकहराम

• रामजी मिश्र

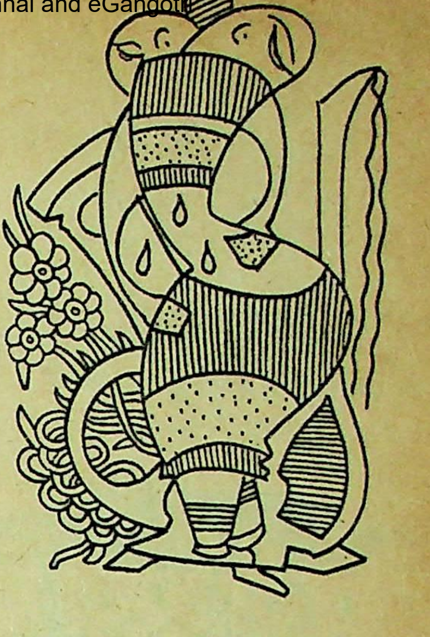

• सिकंदर आज़म

एक गांव में एक गरीब किसान रहता था. उसके पास एक बहुत अच्छी गाय थी. किसान उसके लिए नरम-नरम घास लाता और खली-दाना मिला कर उसे खिलाता.

एक दिन सुबह उठ कर उसने देखा कि गाय अपने स्थान पर नहीं है. उसने उसे खोजना शुरू किया. दिन भर भूखा-प्यासा गाय खोजता और रात को उदास हो कर सो रहता. सपने में भी वह 'श्यामा-श्यामा' कह कर बड़बड़ाने लगता. दो दिन के बाद जमींदार की भी दो गायें चोरी चली गयीं. जमींदार को शक हुआ कि शायद ईर्ष्या के कारण गरीब किसान ने उसकी गायें चुरा कर बेच दी हैं. उसने उस किसान को हर तरह से डराया-धमकाया लेकिन वह बराबर कसमें खाता रहा–– सरकार, मैं गऊ की किरिया खा कर कहता हूं, मैंने आपकी गायें नहीं चुरायीं.

चार दिन के बाद उस गांव से दस-बारह मील दूर एक पशु-मेला लगने वाला था. गरीब किसान और जमींदार दोनों उस बाजार में पहुंचे. किसान बड़ी दर्द भरी आवाज में 'श्यामा श्यामा' पुकारता गायों के झुंडों का चक्कर लगा रहा था जब कि जमींदार खरामा-खरामा टहलता हुआ चल रहा था.

इतने में गाय के रंभाने की आवाज आयी. किसान ने आवाज पहचान ली. वह खुशी के मारे उछल पड़ा––सरकार, मेरी श्यामा मिल गयी. यह उसीकी आवाज है. और वह आवाज की दिशा में लपका. गायों के पास पहुंचा तो देखा, श्यामा उसीको देख रही थी और बार-बार रंभा रही थी. किसान ने गाय की पगही पकड़ी और उसे झुंड के बाहर निकाल लाया. गाय को सहलाते हुए उसने जमींदार से कहा–– यही है मेरी श्यामा!

––और मेरी गायें? जमींदार ने मोटी आवाज में डपटते हुए पूछा.

किसान ने झुंड की एक-एक गाय को बड़े गौर से देखा फिर एक गाय की ओर इशारा करते हुए बोला––आपकी एक गाय तो वह रही.

जमींदार असमंजस में उस गाय को घूरता रहा. किसान ने दुबारा कहा –– 'आप पहचानते नहीं? वह दूसरी भी खड़ी है. आपकी भी दोनों गायें मिल गयीं. उनके नाम ले कर बुलाइए.

जमींदार को अपनी गायों का नाम मालूम न था. वह किसान के द्वारा बतायी गयी गायों के पास पहुंचा और उनकी गर्दन से लिपटी रस्सियों को खोलने लगा कि गायें बुरी तरह सिर झटकने लगीं. जमींदार खीझ और गुस्से से बौखला गया. उसने पास पड़ी अरहर की संटी उठायी और गायों को पीटने लगा. इतने में उन गायों को बेचने वाला आया और जमींदार को खूब उसने ऐसी हरकत के लिए खरी-खोटी सुनायी. वह इतने जोर-जोर से और लगातार बोलता जा रहा था कि जमींदार को अपनी बात कहने का मौका ही नहीं मिला. वहां अच्छी खासी भीड़ इकट्ठी हो गयी. गायों को इस तरह पीटना लोगों को नाराज करने के लिए काफी था. वे लोग जमींदार को उत्तेजित स्वर में बुरा-भला कह रहे थे. थोड़ी देर बाद जमींदार ने जोर-जोर से पुकारना शुरू किया–– ओ श्यामा के मालिक, ओ गरीब किसान, श्यामा... जमींदार ने देखा वह गरीब किसान मस्ती से गाय की रस्सी पकड़े गांव की ओर जा रहा था और उसके पीछे-पीछे जल्दी-जल्दी टांगें बढ़ाती उसकी गाय चल रही थी.

मेरी गायें बड़ी नमकहराम हैं. मेरे नौकर भी बड़े नमकहराम हैं जिन्होंने इनके नाम तक मुझे नहीं बताये. मैं अभी जा कर उन नौकरों को भी निकालता हूं. और भीड़ देखती रही, हांफता हुआ जमींदार दूर जाती श्यामा के पीछे-पीछे चला जा रहा था सिर झुकाये हुए. ◘

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़े लड़के के साथ वह रिक्शा से उतरे, तो पत्नी और लड़की जकीया लपक कर उन्हें उतारने रिक्शा तक आये, पर वह दोनों की उपेक्षा कर खुद उतर जाते हैं. सहारा— किस बात का सहारा? मतलबी, दुनियादार लोग उन्हें क्या सहारा देंगे? उनके मन का रोष अभी तक ठंडा नहीं हुआ था.

—कैसी है तबीयत, जी? पत्नी ने पूछा.

—ठीक हैं. उन्होंने छोटा-सा उत्तर दिया और नाली के इस पार देखने लगे, जहां मुर्गी अपने नये-नये जन्मे चूजों को साथ लिये कचरे के ढेर को खंखोर रही थी. प्यारे सफेद-सफेद पैर कचरे से मैले हो गये थे. मुर्गी के इन नन्हें चूजों का संघर्ष देख कर आदमी का संघर्ष भी

गिरवी रखी धूप

• मेहरुन्निसा परवेज़

भूल जाता है. यह नन्हें-नन्हें बच्चे अभी अंडे तोड़ कर निकल भी नहीं पाते कि उन्हें पेट की भूख सताने लगती है और वह दाने की खोज में इधर-उधर चोंच मारने लगते हैं.

—अब्बा, चाय ले लो. जकीया चाय का कप लिये आंखों के सामने आ खड़ी होती है, तो वह उसे आश्चर्य से निहारने लगते हैं, —साल भर में ही लड़की में कितना अंतर आ गया! सच है, लड़कियां कूड़े के ढेर-सी बढ़ती हैं.

वह एक हाथ में कप-प्लेट को संभाले चाय सुड़पने लगते हैं. बांये हाथ की हथेली तिरछी हो कर छाती से चिपक गयी थी, बांया पैर भी ठीक से नहीं चलता था, पर जबलपुर के उस हकीम का खुदा भला करे, अब उन्हें घसीट कर चलने लायक बना दिया था. पिछले इन्हीं जाड़ों में तो लकवा की हवा लग गयी थी. कई दिन सरकारी अस्पताल में पड़े रहे, पर कोई फायदा नहीं हुआ. सरकारी रोटी तोड़ते आखिर कब तक पड़े रहते! खुद-दारी का खून है, क्यों किसी का हराम का खायें! लौट कर इसी खाट पर पड़े-पड़े दिन काटते रहे. पत्नी और लड़कों की उपेक्षा बढ़ती जा रही थी. रिटायरमेंट के बाद घर में कोई इज्जत नहीं होती, कुत्ते-सी गत! जी हुआ, तो रोटी का टुकड़ा डाल दिया, नहीं तो दुतकार दिया! तंग आ कर जबलपुर बहन के पास चले गये.

साल भर बहन के पास रहे, घर से एक खत नहीं, कोई खबर नहीं. जीते जी मरा समझ लिया था इन लोगों ने! बस, हर माह दवा के लिए उनकी पेंशन से पच्चीस रुपये काट कर भेज दिये जाते. औलाद नमकहराम निकली, इस बात का उन्हें उतना दुख नहीं था, जितना पत्नी की आंख पलटने का. साली औरत की जात ही ऐसी होती है! सारी उम्र की बोआई का नतीजा है, जिसे बुढ़ापे में वह काट रहे थे.

★ ★

—अरे, दादा? पड़ोस का बिहारी हैरान-सा आ खड़ा हुआ—कब आये दादा? अच्छे तो थे? बड़े कमजोर लग रहे हो!

—ले, बैठ तो! खाट पर उसके लिये जगह करते हुए बोले—बुढ़ापे का शरीर है, घटेगा या बढ़ेगा? यार, यह बुढ़ापे का गणित है, हमेशा घटता ही है, जवानी में जोड़ ही जोड़ है, गुणा ही गुणा है. वह धीरे-धीरे बोलते हैं—अपनी कह, बिहारी, भैंस का क्या हाल है? छोटीन को बिदा कर लाये?

—फागुन में भैंस पकायेगी, तब थोड़ा ऋण उतरेगा. छोटीन को बिदाई कर लाने जाना है, सयानी भई गयी है. गांठ में पैसा हो, तो जावें, कलकत्ता थोड़ी दूर है? गठरी भर पैसा खर्च होता है!

—यही होता है अपनी बिसात से बढ़ कर काम करने से! ताकत नहीं, तो गये क्यों इतनी दूर ब्याहने! देख, बिहारी, जमाना उलटा चल रहा है. लड़की सयानी भई गयी. मायके में रहना हमका पसंद नहीं. औरत ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जात है, सब शंकर [illegible] रहेंगे.

—बात ठीक कहत हो, दादा . . . किसको क्या कहें! तकदीर ही जब रहन हो जाये, तो आदमी की क्या चलती है! बड़ी बहू को देखो न, आते ही सारे घर को कब्जा कर ली! बुढ़ापे की जान है, अच्छी चीज खाने को मन तरस जाता है, पर किससे कहें? चाय भी सुसरी देती है ऐसे, जैसे मायके का माल दे रही हो! बात-बात में बोले है—मेरा मरद छाती तड़का-तड़का कर कमाये है, तुम लोगन को का है, बैठे-बैठे सोली-सोली भर खाये हो!

—अरे बिहारी! वह हंसे—अभी क्या देखा है भइया, अभी और देखेगा जब दूसरी को लायेगा! यह मत सोच, छोटी आयेगी, तो कसेला भर पानी देगी! नहीं रे, नहीं! दो बहू घर में आयें, तो जिम्मेदारी और बढ़ती है. दो बैलगाड़ी के चक्के जैसा, एक भी घटना या बढ़ना नहीं . . . खिंचा पड़ते ही तड़-से बीच में डोर टूट जायेगी. अभी तो और देखना-सुनना होगा. पराये घर का पेड़ अपने घर में देर से जड़ पकड़ता है रे!

—ठीक कहते हो, दादा! बुढ़ापा क्या ऐसे ही छत पर से उतर कर आ जाता है. ये बुढ़ापे में बहुत देखना होता है! बिहारी ठंडी सांस खींचता जेब टटोलने लगा—का बताऊं, तुम नहीं रहे, तो मन की बात सुनने कौन नहीं था. बोलो, बीड़ी पीओगे?

—ला, जला कर दे, मेरा तो बायां हाथ ही बेकार है! आदमी का एक हाथ बेकार हो जाये, तो उसे आधा ही खाने का हक है. पहले चार रोटी खाता था, अब दो खाता हूं. घर बोलता है जा, और माटी बोलती है आ.

—क्या बोलते हो, दादा, जी को रुला देते हो!

—बड़ा भइया बुलाने गया था. वह बीड़ी का कश अंदर तक खींचते बोलते हैं, थोड़ी गरमाहट लगती है. —सोचा होगा, साल भर से बाप की खबर नहीं ली. खून है मेरा, खून को खून खींचता है न, जा कर ले आया. बोला —अब्बा, कब तक फूफी के घर पड़े रहोगे? चलो घर.

—चलो, अच्छा है, अरे, औलाद की यही बात देख कर तो संकट टल जाता है जिंदगी का! मन सुपले-सा फूल जाता है.

—कहो, इधर खेती-बाड़ी का क्या हाल है?

—अच्छी है, दादा. बिहारी आवाज को धीमा करते बोला—अकाल तो दादा पेपर में आया है. उस दिन जहाज आया था यहां, मुख्यमंत्री आये थे. सुना है, एक करोड़ रुपया आया है आकालग्रस्त क्षेत्र के लिए.

—न रकम आ गयी, तुम्हारा-मेरा भला हुआ

—लाओ, दादा, घुंगीया खिलाओ! बिहारी उठता हुआ बोला —भैंस ढूंढने निकला था, तुम्हें देख यहीं बैठा तो बैठ ही गया.

—आना फिर, पेपर पढ़ कर सुनाऊंगा. बहुत-सी बात जबलपुर रह कर सुन आया हूं.

—सच्ची. . . तो अभी गया और अभी लौटा, तब तक सोच कर रखना देखो! कहता बिहारी सड़क पर चला गया.

—बेचारा कितना सीधा है! उसे जाते देख कर सोचते हैं, रिटायरमेंट के बाद खाली रहना कितना खलता है! ऐसे एक-दो साथियों को मन कितना खोजता है!

★ ★

साल भर बाद वह लौटे थे, उसी वातावरण में, बड़ा भला-सा लग रहा था उन्हें. अपना घर, अपनी औलाद, अपनी जमीन का सुख अपना अलग ही होता है. जबलपुर में सब कुछ था, पर पता नहीं क्यों उनका मन नहीं लगता था. रह-रह कर मन उदास हो जाता था.

जिस दिन बड़ा लड़का लेने आया, तब वह हकीम के घर गये थे—उसे देख वह कितने प्रसन्न हुए थे! मन बाग-बाग हो गया था. बेटा उन्हें मना कर घर ले जाने आया था. जैसे ही लड़के ने कहा —अब्बा, मैं लेने आया हूं, वह तुरंत तैयार हो गये थे. बहन ने रोका था— अरे, आधा इलाज छोड़ कर मत आओ! पर वह नहीं माने और तुरंत चलने को तैयार हो गये थे. पानी में लाठी मारने से कहीं वह अलग हुआ है!

जमाना क्या उनकी आंखों ने नहीं देखा? पटवारी से नौकरी शुरू की थी. बस्तर क्या आज-सा था? पूरी बारह तहसीलें थीं. रुपयें की बारह पायली बढ़िया चावल मिलता था. पायली भी आज की-सी छोटी नहीं, पीतल

● श्यामराम चावड़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की पांडा पायली चलती थी. महाराजा [illegible] लाल कलिंदर साय के नाम से पायली चलती थो. सारे जगदलपुर में एक पायली रहती थी. चावल पसंद करो और चावल नपाने एक जगह आना पड़ता था. चावल जो नापता था नौकर, उसे मजदूरी नहीं दी जाती थी. पायली की सींक से जो चावल नीचे गिरता था, वह उस नौकर की मजदूरी होती थी, दिन भर सैकड़ों बोरे चावल नप जाता था, वह जमाना था. बेईमानी इन्सान जानता ही नहीं था.

अंग्रेज आये, पर तब घोड़ों पर दौरा होता था. बैलगाड़ी में तंबू साथ चलते थे. साहब की जहां इच्छा होती, ठहर जाते. वहीं तंबू गाड़ दिये जाते. पैरे के गद्दे बन जाते, उस पर चादरें बिछ जातीं. देखते-देखते सूना जंगल आबाद हो जाता था बात-की-बात में बकरा, शराब, नाच-गाना, औरत, सब जुट जाते थे. साहब खुश हो कर जाते थे.

वह हमेशा डिपार्टमेंटल एक्जाम में फेल होता था. दोस्तों में किरकिरी होती, दूसरे इस उम्र में बच्चों-सा पुस्तक ले कर घोंटना भी नहीं होता और न ही ऊपर पास करवाने की सिफारिश के लिए उतनी रकम रहती. नतीजे में न वह प्रमोशन पा सका, न उसकी पे स्केल में वृद्धि हुई. इस तरह उसे पेंशन में भी घाटा सहना पड़ा. यह वह दुखती रग थी, जो हर सांस के साथ दर्द करती है.

★ ★

पत्नी पान का डिब्बा ले कर धूप में आ बैठती है समंदर शांत था, जाने के पहले के उस तूफान का कहीं नामोनिशान नहीं था.

——अपने मोहल्ले के रामजी का लड़का मर गया. . . उसकी औरत गर्भवती थी. . . चौथा चल रहा था.

——क्या, कौशिक नहीं रहा? बड़ा भला लड़का था! मेरे सामने ही तो छोटे से बड़ा हुआ था. बुरी लत में पड़ गया था. उसी में जान गयी होगी?

——और क्या, छाती छलनी हो गयी थी. बाप के धंधे को संभाल लिया था. शवयात्रा में क्या आदमी थे. बाप रे, पूरी गली भर गयी थी! बाद में उसकी मां ने चावल, दाल, नमक वगैरह का सीधा भेजा था घर-घर तेलगू लोग जनाजे में शरीक होने वाले का एहसान नहीं रखते. पत्नी बोलती जा रही थी——और इनमें एक अजीब दस्तूर है——शादी के वक्त भी दोनों दूल्हा-दुल्हन को साथ नहलाते हैं, और मौत में भी. कौशिक लाश के पास उसकी औरत कला को भी नहलाया था अजीब दस्तूर है! बेचारी का रो-रो कर बुरा हाल था. अभी उसकी चूड़ियां नहीं उतारे हैं——इन लोगों में गर्भवती स्त्री का श्रृंगार नहीं उतारते. वह अभी भी पूरा श्रृंगार किये है.

——अच्छा! बड़ा बुरा हुआ! शाम को उसके घर हो आऊंगा. बच्चों को तसल्ली दे आऊंगा. उन्होंने ठंडी सांस खींची——रामजी की अपनी औलाद नहीं हुई, बड़े भाई के बच्चे को गोद लिया, तो वह भी बुढ़ापे में दगा कर गयी! सहारा किसे मिलना था और किसे देना पड़ रहा है! यहीं है दुनिया, जिसे देख-देख कलेजा फटता है.

——पान खाओगे?

——लाओ, पान लेते वह पत्नी को देखते हैं. जबलपुर जाते वक्त जो घर में झगड़ा हुआ था, उसका अब असर नहीं था. यही पत्नी उनसे कितना तंग आ गयी थी! बात-बात में ताने. पर अब परिवर्तन आ गया था और वह हैरान थे, कुत्ते की दुम भी कभी सीधी हो सकती है?

आजकल मौत भी कितनी महंगी हो गयी है! पास जमा-पूंजी हो, तो आदमी मर सकता है, वरना नहीं. जीते जी तो चीथड़े भी पहन कर गुजारा चल जाता है, पर कफन के लिए नया कपड़ा चाहिए ही! ओफ, उन्हें मौत आये, तो महीने के शुरू में ताकि पेंशन मिल गयी हो.

साल भर बाद घर लौटे थे, तो उन्हें नया-नया-सा लग रहा था. वैसा ही सुख, जैसा कि वह पहले लंबे पंद्रह दिन के दौरे से लोटते थे तो नया-नया-सा लगता था, पत्नी भी स्वागत करती थी.

पहले वह बिहारी के साथ धीरे-धीरे टहलने निकल जाते थे. यह उनका पुराना शगल था. अस्पताल के किनारे वाली रोड से चर्च के सामने से होते सीधे रेलवे को जाते थे. चर्च के अहाते में कौन-कौन से फूल कब-कब होते हैं, उन्हें पता था, यह उनका अपना इकलौता सुख था, जिसकी आंच केवल उन तक ही पहुंचती थी. जाने और लौटने में घर से ले कर राजनीति तक पर बातें हो जाती थीं. पर अब उनकी भी तकत नहीं रह गयी थी.

बिहारी उनका पुराना साथी था. पहले वह अदालत में गवाही देने का धंधा करता था. रोज अदालत पहुंच जाता , जिसे किराये का गवाह चाहिए, वह उसे पांच रुपये रोज पर रख लेता. बस, यही पांच रुपये उसके दिन भर के लिए काफी थे. चावल-दाल से ले कर दारू-पानी तक हो जाता था. दारू की बुरी लत ने उसे निकम्मा कर दिया. यह लत उसे बचपन से है.

उसके उस्ताद जो उसे पढ़ाया करते थे मदरसे में, वह रोज अपने चहेते शागिर्द को दारू लाने भेजते. काफी दिनों तक तो बालक बिहारी ईमानदारी से दारू पहुंचाता रहा, एक दिन इच्छा हुई, चख कर देखा जाये. बस, उसी दिन से रास्ते में छुप-छुप कर एक-एक घूंट पीते-पीते लत लग गयी और तब से ऐसी मुंह से लगी कि छूटती नहीं. रोज शाम को आफिस पहुंचना जरूरी है. कमीज के अंदर धोती में बोतल दबी रहती. कोई पूछ लेता, तो राजदाराना अंदाज में जवाब मिलता——डाक लाने आफिस जा रहे हैं. मोहल्ले में सारे लोग उसे शराबी समझ कर दुतकारते थे, पर यह बात वह ही अकेले जानते थे कि दिल का वह कितना साफ और ईमानदार है.

★ ★

——नहाओगे न, पानी रख देती हूं. पत्नी ने कहा, तो उन्हें आश्चर्य-सा हुआ. . . ऐसा जो शायद पहली बार हुआ है, वरना वह कह-कह कर थक जाते थे, तब कहीं नहाने को पानी मिलता था. साल भर जबलपुर रह आये, इसलिये है शायद यह चेंज.

वह नहा कर बाहर आये, तो बड़े लड़के ने पूछा——अब्बा, खा कर चलेंगे, या आ कर खायेंगे? वहां टाइम लग जायेगा.

——चलना कहां है? उन्होंने आश्चर्य से पूछा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—पेंशन लेने.

—पेंशन लेने? उन्होंने और आश्चर्य में भर कर पूछा—पेंशन तो उठा ली होगी न?

—नहीं, अभी कहां.

दोनों तैयार हो कर रिक्शे पर पेंशन लेने दफ्तर पहुंचे, तब आधा दिन झुक गया था. पेंशन लेने कई लोग बेंच पर बैठे थे. लड़के ने उन्हें बेंच पर सहारा दे कर बैठा दिया और खुद पान खाने चला गया.

बरामदे में चिड़िया फुदक कर बार-बार उन तक आ रही थी, जैसे पूछ रही हो, इत्ते दिन कहां थे?

जब उनका नंबर आया, तो बाबू ने नाक पर झुका हुआ चश्मा ठीक करते उन्हें घूरा, ऊपर से नीचे तक देखा, फिर हंसा—कहो, दादा, कहां रहे इतने दिन? हम तो समझे थे कि दूसरी दुनिया में पहुंच गये हो और घर के लोग अभी भी तुम्हारी कमाई खा रहे हैं! इसीलिए उस दिन तुम्हारे बेटे से मैंने कहा था, बरखुरदार, हराम की रोटी सब तोड़ते हैं पर यह डाका डालना ठीक नहीं! पहले अपने बाप को बुला लो, हम देखना चाहते हैं. चलो दादा, अच्छा हुआ, इसी बहाने तुम आ गये, वरना शक पर पेंशन देना बंद कर दिया जाता.

उन्हें जोर से धक्का-सा लगा. सारी खुशियां भरभरा कर ढह गयीं. . . तो घरवालों के लिए वह एक बेकार, फालतू आदमी है, पर उनकी पेंशन. . . . ?

——लो, पान खा लो, लड़के ने पत्ते के चोंगे में पान बढ़ा दिया.

पान मुंह में डाल, पत्ते को मसलते हुए वह बहुत गहरे-गहरे कहीं डूब-से गये. □□□

प्रतापगंज, जगदलपुर (म. प्र.)

राजस्थानी लोककथा

वरदान

● रघुनाथप्रसाद गुप्ता

एक लकड़हारा था. वह हमेशा जंगल से लकड़ी काटता और उन्हें बेच कर अपनी औरत और लड़के का पेट भरा करता था.

एक दिन जब वह लकड़ी काट रहा था तो उसके पास से ही नारदजी 'नारायण-नारायण' कहते हुए गुजरे. लकड़हारा ने नारदजी को देख कर सोचा कि इनके पैर पकड़ लूं जिससे मेरा जीवन सफल हो जाये. जैसे ही नारदजी उसके करीब पहुंचे, उनके पैर पकड़ लिये. नारदजी ने कहा—बोलो वत्स, क्या चाहते हो? लकड़हारा ने कहा—पहले वचन दो तो पैर छोड़ूंगा. नारदजी ने कहा—मैं तो कुछ भी नहीं दे सकता. हां, मैं भगवान विष्णु के दरबार में जा रहा हूं, उन तक तुम्हारा संदेश पहुंचाने का वचन देता हूं. अब लकड़हारा ने पैर छोड़ दिये और बोला—मेरा एक छोटा-सा संदेश है, यह भगवान तक पहुंचा दीजिए—कलम मालिक के हाथ या मालिक कलम के हाथ?

यह संदेश सुन कर नारदजी भगवान विष्णु के दरबार में पहुंच गये. उस समय लक्ष्मीजी उनके पर दबा रही थीं परंतु नारदजी ने अंदर संदेश भेजा दिया कि एक बहुत महत्वपूर्ण संदेश लाये हैं. अतः भगवान विष्णु उसी समय बाहर आये. नारदजी ने लकड़हारा का संदेश सुनाते हुए कहा—भगवन, बोलिये, इसका क्या जवाब दूं? भगवान विष्णु भी संदेश सुन कर चक्कर में पड़ गये. आखिर नारदजी से कहा कि लकड़हारा तीन जीव हैं. तीनों सूर्य की साक्षी में उनसे एक-एक वरदान मांग सकते हैं.

दूसरे दिन जब नारदजी जंगल से गुजरे तो उन्होंने लकड़हारा को भगवान विष्णु का संदेश बतला दिया. उसने सोचा, अभी किसी को भी नहीं बतलाऊंगा. घर किंतु पहुंचा तो पत्नी को सुनाते हुए उसने कहा—अपने ये वरदान बाद में मांगेंगे.

१५ रोज का समय गुजर गया, परंतु लकड़हारा ने वरदान न मांगे. यह सब देख कर उसकी पत्नी ने सोचा कि मैं तो अपना वरदान मांग ही लेती हूं. अतः जब लकड़हारा लकड़ी काटने गया और लड़का पाठशाला तो पीछे से उसने भगवान सूर्य को जल चढ़ा कर कहा—भगवन, यदि आपने वास्तव में वरदान दिये हैं तो मुझे तो किसी राजा की रानी बना दो. इतना वरदान मांगते ही भगवान ने उसे एक अत्यंत रूपवती १६ वर्षीय कन्या का रूप दे दिया. अब वह अपने घर के सामने आंगन में बाल बनाने लगी. इतने में उधर से एक राजा जो घोड़े पर सवार हो कर गुजर रहा था, उसे अपने घोड़े पर बैठा महल में ले गया और अपनी रानी बना लिया.

इधर शाम को जब लकड़हारा लकड़ी बेच कर घर आया और स्त्री न मिली तो उसके दिमाग में बात आयी कि अवश्य ही पत्नी वरदान मांग कर कहीं चली गयी होगी. सुबह होते ही लकड़हारा ने सूर्य की साक्षी में जल चढ़ा कर कहा—भगवन, मेरी पत्नी जहां भी हो उसे कुतिया बना दो. बस कुतिया बनते ही वह महल से बाहर निकाल दी गयी. अब वह अपने पुराने मकान के पास चक्कर लगाने लगी.

लड़का अपने पिता को वरदान मांगते देख चुका था. बहुत सोचने के बाद उसने सूर्य को जल चढ़ा कर कहा—भगवान, मुझे कुछ भी नहीं चाहिए, हम पहले जैसे थे, हमें वैसा ही कर दो. ऐसा कहते ही उसकी मां कुतिया से औरत बन कर वापस आ गयी और तीनों प्राणी आपस में मिल गये. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषाओं की प्रथम मौलिक कहानी और आद्य कथाकार

(८)

किसी भी भाषा की पहली कहानी की खोज अपने आपमें एक महत्त्वपूर्ण और रोचक कार्य है. इस महत्त्वपूर्ण खोज के लिए सारिका ही पहल कर रही है. पूर्व के अंकों में मलयालम, गुजराती, बंगला, तेलुगु, डोगरी, कश्मीरी और सिंधी की प्रथम मौलिक कहानियां आप पढ़ चुके हैं. इस अंक में दी जा रही है उड़िया की उपलब्ध प्रथम मौलिक कहानी 'रेवती.' वास्तव में उड़िया के प्रथम आद्य कथाकार श्री फकीरमोहन सेनापति की पहली मौलिक कहानी 'लछमनियां' थी, जो सन् १८६८ में 'बोधदायिनी' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी, किंतु वह कहानी किसी भी प्रकार उपलब्ध न हो सकने पर उनकी ही उसी क्रम में दूसरी मौलिक कहानी 'रेवती' यहां दी जा रही है. जब यह क्रम समाप्त होगा, तब आप स्वयं ही दो निर्णय ले सकेंगे--एक; कि भारतीय भाषाओं में से पहली आधुनिक कहानी किस भाषा के पास है, और दो; कि क्या कहानियां सचमुच पश्चिम से आयी थीं?

प्रथम मौलिक उड़िया कहानी

रेवती: एक विवेचन

• श्रीनिवास उद्गाता

फकीरमोहन सेनापति (१८४३-१९१८) आधुनिक उड़िया साहित्य के प्राण-प्रतिष्ठाता थे. जन्म से दरिद्रता, अभाव व दुःख-पीड़ित, उच्चशिक्षा से वंचित फकीरमोहन का प्रारंभिक काल अत्यन्त दयनीय था. पितृहीन फकीरमोहन बालेश्वर बंदरगाह में पालों की सिलाई की निगरानी से ले कर कचहरी में मोहर्रिर, रजवाड़ों में दीवानगिरी, बालेश्वर मिशन स्कूल में अध्यापन आदि के अवलंबन से जीवन और जीविका के बीच नित्य संघर्षशील रहे. इसलिए शायद उनके लिए जीवन की परिभाषा अलग थी. और उस परिभाषा ने शायद उन्हें परंपरा से हट कर कुछ कर दिखाने का बल दिया. वह जन्म से विद्रोही थे. अपने सेनापति नाम को सार्थक बनाते हुए अन्याय के विरुद्ध असीम साहस से खड़े रहने का बल रखते थे. इसी कारण शायद उस समय उड़िया भाषा के विरुद्ध हुए षड्यंत्रों का मुकाबला इस अकेले आदमी ने किया और उड़िया भाषा बच गयी, नहीं तो उसका साहित्य तो दूर की बात रही, शायद आज उड़िया भाषा अपनी प्राचीनता और परंपरा तथा हर दिशा में समर्थ सौंदर्य के बावजूद एक ऐतिहासिक भाषा बन कर रह गयी होती.

प्रारंभिक काल में लघु कथा (शॉर्ट स्टोरी) को साहित्य क्षेत्र में सम्मानास्पद स्थान प्राप्त नहीं था. उन्नीसवीं सदी के अंतिम पर्याय में ही इसे एक महत्त्वपूर्ण स्थान मिला. उस समय फकीरमोहन सेनापति ने 'लछमनिया' (१८६८) शीर्षक कहानी लिखी थी. यह कहानी **'बोधदायिनी'** नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी. यह आधुनिक उड़िया साहित्य की पहली कहानी है, जिसकी सूचना उनके **'आत्मचरित'** से मिलती है. कहा जाता है कि यह कहानी उपलब्ध नहीं है. कहा जाता है कि यह कहानी भारतीय स्वाधीनता-संग्राम को ले कर तत्कालीन ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध लिखी गयी थी. देहात में रहने-बसने वाले सामान्यजन पर १८५७ के आंदोलन की कैसी प्रतिक्रिया हुई थी, उसका सेनापति ने इस कहानी के माध्यम से चित्रण किया था.

फकीरमोहन तक कहानी झूठ बोलती आयी और फिर मानो एकाएक उसका रूप बदल गया. तब तक राजा-रानी, राजपुत्र-राजकन्याओं को प्रेम करने का हक था. उनकी समर्थता और क्षमता, उनका प्रणय-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरह कहने के लिए कहानी थी, जो सिर्फ अद्भुत अलौकिकता, ऐंद्रजालिक कल्पना का वर्णन मात्र करती आयी थी, या उससे हट कर देवी-देवताओं के संबंध में कह कर उनकी चमत्कारिता का वर्णन करते हुए नीति-उपदेशों का व्याख्यान करती रही, वह भी पद्य में और एक बोझिल, अलंकारिक, पांडित्यपूर्ण भाषा में. परंतु फकीरमोहन ने साधारण मानव के, अतिसाधारण समाज के भाव-अभाव, हर्ष-विषाद को अपने साहित्य में आधार के रूप में अपनाया. उनके साहित्य ने साधारण मनुष्य के सुख-दुःख की बात कही है, अतिवास्तव सत्य को प्रकाशित किया है. फकीरमोहन को उनकी रचना-शैली ने नहीं, बल्कि उनके साहित्य की आत्मा ने प्रतिष्ठित किया है. उसी से उन्हें आदर प्राप्त हुआ है और लोकप्रियता मिली है. आज शैली में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो जाने पर भी एकांत सत्य को प्रकाशित करने के संदर्भ में उनका साहित्य चेतन और अवचेतन हृदय को आंदोलित और आमोदित करता है. ब्रिटिश शासन काल भारत में पराधीनता, आर्थिक शोषण एवं नागरिक अधिकारों के हनन का इतिहास है. उस समय बने स्वार्थी कानूनों के द्वारा देश भर में अभाव, उत्पीड़न, विशृंखलता, असंतोष, विद्रोह आदि का ही विकास हुआ. शोषण और अत्याचार बढ़ कर एक भयानक स्थिति की सृष्टि हुई. उससे फकीरमोहन का सचेतन व्यक्तित्व, उनकी अम्लान प्रतिभा, उनका क्रांतिदर्शी हृदय कहानी से बढ़ कर पात्रों पर केंद्रित हुआ और तात्कालिक समाज की असंख्य अनीतियों, कुसंस्कारों, अत्याचार और शोषण की कटु आलोचना, उसका परिहासपूर्ण विद्रूप और उसके प्रतिकार में विद्रोह करने को आग्रही हुआ, यही उनकी कहानियों की विशेषता है. फकीरमोहन ने अपने कर्तव्य-बोध को ही अपनी साहित्य -सृष्टि का आधार बनाया था. वही उनकी साहित्य-सृष्टि का उद्देश्य, लक्ष्य या आदर्श, जो भी कहें, था, और इसमें उन्हें सार्थकता मिली थी. फकीरमोहन से लेकर यही साहित्यिक अभिव्यक्ति उड़िया कथा-साहित्य के परवर्ती पर्याय तक थी.

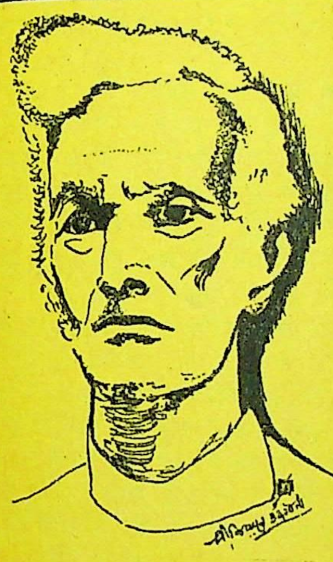

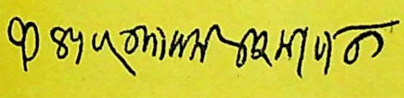

(फकीरमोहन सेनापति के हस्ताक्षर : उड़िया में)

उड़िया आद्य कथाकार : फकीरमोहन सेनापति

आधुनिक उड़िया कहानी के जन्मदाता फकीरमोहन सेनापति का जन्म मल्लीकाशपुर (जिला बालेश्वर, उड़ीसा) में सन् १८४३ की जनवरी में, मकर संक्रांति को हुआ था. १८६८ में उन्होंने बालेश्वर में प्रेस खोला और **'बोधदायिनी'** तथा **'बालेश्वर संवाद वाहिका'** नामक पत्रिकाओं का प्रकाशन किया. १८७१ से १८९६ तक उन्होंने नीलगिरि, डोमपड़ा, ढेंकानाल, दशपल्ला, पाललहड़ा और के उंझर के राजाओं के दीवान के रूप में कार्य किया.

इस संक्रांति पुरुष ने जीवन भर उड़िया साहित्य की सेवा की और उड़िया भाषा की प्रतिष्ठा के लिए निरंतर संघर्ष किया. फकीरमोहन सेनापति ने ही सर्वप्रथम उड़िया कथा साहित्य की भाषा को आधुनिक रूप प्रदान किया. उन्होंने विभिन्न धर्मों के तत्त्व को समझने का प्रयास किया और संस्कृत, हिंदी, बंगला, फारसी, अंग्रेजी आदि भाषाएं सीखीं. पांडेय मुरलीधर और पांडेय मुकुटधर शर्मा ने उनके उपन्यास **'लछमा'** का हिंदी में अनुवाद किया था. उनकी अनेक कहानियों के हिंदी और अंग्रेजी में अनुवाद छपे. उनकी कहानियों का एक संग्रह और उपन्यास **'छमाण आठ गुंठ'** कुछ ही समय पूर्व अंग्रेजी में प्रकाशित हुआ है. केंद्रीय साहित्य अकादमी द्वारा उनकी अनेक कृतियां अनुवाद के लिए चुनी गयी हैं.

उनकी प्रमुख कृतियां ये हैं: **'छमाण आठ गुंठ'** (उपन्यास), **'पुनर्मूषकोभव'** (उपन्यास), **'मामुं'** (उपन्यास), **'लछमा'** (उपन्यास), **'प्रायश्चित'** (उपन्यास), **'रांडि पुअ अनंता'** (कहानी संग्रह), **'गल्प स्वल्प'** (कहानी संग्रह) और **'आत्मजीवन चरित.'** उपर्युक्त तथा उनकी अन्य कृतियां १८६६ से १९२७ तक की अवधि में प्रकाशित हुईं. उनका **'आत्मजीवन चरित'** एक अनोखी रचना है. घटनाक्रम की सूक्ष्मता की दृष्टि से उनकी इस कृति को उड़ीसा का सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक इतिहास माना जाता है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फकीरमोहन के साहित्य की भाषा के संबंध में कुछ कहना उचित होगा. उड़िया भाषा में साहित्यिक सृजन का आरंभ **'बौद्धगान ओ दोहा'** या **'चर्या गीतिका'** से हुआ था. इस ग्रंथ के गीतों को उड़िया, बंगला, असमिया आदि भिन्न-भिन्न भाषाओं के विद्वान अपनी भाषा की आद्य काव्य-सृष्टि मानते हैं. और इन गीतिकाओं में इन्हीं भाषाओं की काव्य-सृष्टि के लक्षण कम-बेशी मौजूद भी हैं. इसकी रचना लगभग आठवीं सदी से ग्यारहवीं सदी की अवधि में हुई थी. इसके पश्चात सारलादास की **'महाभारत'** की रचना की अवधि में जिस काल का अंतर है, वह उड़िया साहित्य के इतिहास में अंधकार-युग है. अध्यापक-कवि श्री चिंतामणि बेहेरा के शब्दों में उड़िया साहित्य के आदि जनक माने जाने वाले महाकवि सारलादास (पंद्रहवीं सदी) ने संस्कृत महाभारत का अनुसरण किया है, फिर भी जैसे महाकवि व्यास ने अपने महाभारत को समग्र भारत वर्ष के जीवन-वेद के रूप में परिणत किया है, उसी तरह सारलादास ने भी उड़िया महाभारत को उड़िया जाति का जीवन-वेद बनाया है. उड़िया जाति के स्वप्न, साधना, आदर्श और संस्कृति के प्रतिबिंब के साथ उसका सामाजिक चित्रण और चारित्रिक यथार्थता महाभारत में लक्षणीय है. उड़िया महाभारत की भाषा आम आदमी की भाषा है जिसमें न आडंबर है, न कृत्रिमता. पर इसके पश्चात साहित्य-सृष्टि में धीरे-धीरे कृत्रिमता बढ़ती गयी. भाषा सजी-संवरी, आलंकारिक, संस्कृतनिष्ठ, पांडित्यपूर्ण होती गयी. चार सौ वर्षों के पश्चात फिर से फकीरमोहन ने उसी भाषा को अपनाया, उन्हीं शब्दों के प्रयोग से उनका साहित्य लालित्यपूर्ण बना और अभिव्यक्ति आम आदमी की अभिव्यक्ति बनी. समाज ने उन्हें अपनी बातें समझ निकटता से देखा, क्योंकि उसमें आम आदमी, साधारण-से- साधारण आदमी के मन की गहराई को छूने वाली शक्ति थी और उसी शक्ति ने गद्य शैली की प्रतिष्ठा की. इसी कारण उड़िया के विद्वान आलोचक उन्हें 'व्यास कवि' कह कर सम्मान देते हैं.

फकीरमोहन ने अपने **'आत्म चरित'** में लिखा है : 'उस कहानी (**'लछमनियां'**) को लोगों ने आग्रह से पढ़ा. पर कितनों ने ? मैं बालेश्वर से आ गया और रजवाड़ों में काम करते समय दीर्घ समय तक साहित्य रचनाएं बंद रहीं. फकीरमोहन की अनुपलब्ध कहानी **'लछमनियां'** के बाद उनकी दूसरी रचना है **'रेवती'** (रचनाकाल १८९८, प्रकाशन-काल– १९००), **'रेवती'** की शिल्पगत सार्थकता और अश्रुल आवेदन ने इस कहानी के लिए उड़िया लघु-कथा के क्षेत्र में एक उल्लेखनीय तथा सार्थक स्थान बनाया है. उड़िया लघु-कथा के क्षेत्र में **'रेवती'** एक अम्लान सृष्टि है. यह कहानी ही फकीरमोहन की एकमात्र प्रेम-कहानी है. फकीरमोहन ने शायद तत्कालीन सामाजिक रुचि से प्रभावित हो कर अपने साहित्य में कामज या रूपज प्रेम को स्थान नहीं दिया था. फिर भी 'रेवती' एक प्रेम-कहानी है, जिसमें वासुदेव और **'रेवती'** का प्रणय देहज

श्रीनिवास उद्‌गाता: जन्म: (६ जनवरी, १९३५) उड़िया के प्रसिद्ध लेखक हैं, जो अनेक वर्षों से हिंदी में भी लिख रहे हैं. उड़िया में अभी तक इनकी १५ मौलिक तथा अनुवादित कृतियां प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनमें इनके चार मौलिक उपन्यास 'नील नयन तले,' 'कांता', 'शिलार सपन' और 'शेष रात्रि प्रथम सकाल,' और दो कहानी संग्रह–'पूर्णिमा' और 'पार्वती' हैं. उड़िया में इनके द्वारा अनुवादित श्री भगवतीचरण वर्मा का उपन्यास 'चित्रलेखा' और श्री कमलेश्वर की कहानियों का संग्रह 'नील हद' (नीली झील) और कुछ अन्य कथाकारों की कृतियों के अनुवाद भी छप चुके हैं. इसी प्रकार उड़िया के दो उपन्यासों का हिंदी में अनुवाद —'एक सागर, हजार लहरें' और 'नील शैल' छप चुका है. यह ओडिशा साहित्य अकादमी के सदस्य हैं और पिछले वर्ष इन्हें अपने एक कविता-संग्रह पर १००० रुपये का पुरस्कार मिल चुका है.

नहीं, आत्मज है. इस कहानी में भी उनकी अन्य कहानियों की तरह दो वर्ग हैं— एक शोषक, दूसरा शोषित. श्यामबंधु शोषित वर्ग के थे. उनकी मृत्यु के पश्चात उनकी सारी ईमानदारी और निष्ठा के बावजूद उनके घर से तहसील की बकाया रकम के बहाने दो दुधारु गायें ले लेना या खेती की जमीन छीन लेना, शोषण का एक मार्मिक नमूना है. इस कहानी के जरिये फकीरमोहन ने तात्कालिक समाज के कुसंस्कार और अशिक्षा का मार्मिक चित्रण किया है. उस समय समाज आत्मकेंद्री था. एक-दूसरे की सहायता तो दूर की बात रही, अपने को संभाले रखने की प्रवृत्ति इतनी सशक्त थी कि एक परिवार के संपूर्ण विलीन होने तक को निर्लिप्त भाव से देखने वाले लोग थे. बुजुर्गों में स्त्री-शिक्षा के प्रति घोर विरोध था, जो दादी मां जैसी पात्र के जरिये चित्रित हुआ है. दादी मां में यह धारणा जमकर थी कि रेवती की पढ़ाई के कारण ही सर्वनाश हुआ. वह कुलच्छनी है. कुलांगी है. उसने पढ़ा, इसलिए सब विनाश हुआ. अंत में रेवती के प्रति गालियां बकने के अलावा हर तरह से बेसहारा, दुखी बुढ़िया का मन को शांति देने के लिए और कोई चारा नहीं था.

कहानी की गति में यथार्थता है, अस्वाभाविकता कहीं भी नजर नहीं आती. बूढ़ी की सबसे प्यारी थी रेवती . . .जिसे वह कोसती थी. . .और उसी रेवती के लिए वह जीती रही. इस कहानी की कथा-वस्तु , कथन शैली, भाषा और चरित्रचित्रण में कोई आडंबर नहीं है. यह एक अतिवास्तववादी मार्मिक कहानी है. इसकी आडंबरहीन सरल सुंदरता यथार्थ में अतुलनीय है. □□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

प्रथम मौलिक उड़िया कहानी

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

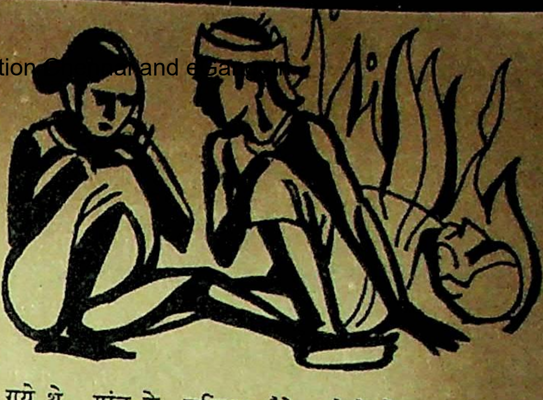

कटक जिले के हरिपुर परगने में एक गांव है, नाम है, पाटपुर. गांव के एक सिरे पर एक मकान, आगे-पीछे चार कमरे, घर के परकोटे पर से उतरती परछती में ढेंकुली बिठायी गयी है. आंगन के बीचों-बीच कुआं, सामने बाहर का दालान और बाड़ी की ओर भीतर का. बाहर के दालान में बने खुले कमरे में बाहर से आये लोगों की बैठक होती है. रैयत मालगुजारी अदा करने आती है. श्यामबंधु महांति जमींदार की तरफ से गांव के गुमाश्ता हैं, महीने में दो रुपये की तनखाह, तनखाह के अलावा मालगुजारी-सुधार, हक-साबूती आदि से दो पैसे हाथ आते हैं. कुल मिला कर महीने में चार रुपये से कम नहीं होते. दुनियादारी किसी तरह चलती है. किसी तरह क्यों? अच्छी-खासी चलती है. यह नहीं है, वह नहीं हो पाया, यह घर में किसी के मुंह से सुनाई नहीं पड़ता. बाड़ी में साग-भाजी के अलावा दो सहिजन के पेड़ हैं. घर में दो गायें बंधी हैं, थोड़ा दूध, थोड़ी छाछ हंड़िया में पड़ी ही रहती है. बूढ़ी तुस मिला कर उपले थाप देती है जिससे ईंधन नहीं खरीदना पड़ता. जमींदार ने साढ़े तीन बीघा जमीन दी है. खेती करने को. फसल न कम पड़ती, न बढ़ती. श्याम बंधु सीधे-सादे आदमी, लोग उन्हें मानते हैं, उनका आदर करते हैं. लोगों को भाई-भतीजा कहकर दर-दर जा कर लगान वसूलते हैं. किसी से अन्याय की एक पाई तक नहीं लेते. रैयत मालगुजारी देकर भरपाई तक नहीं चाहती. चार अंगुल के ताड़ के पत्ते पर लिख कर खुद जाकर छान में खोंस आती है. श्यामबंधु के घर में प्राणी चार हैं—वे दो जने, एक बूढ़ी मां और दस वर्ष की एक बेटी. बेटी का नाम है रेवती. श्यामबंधु संध्या समय बरामदे में बैठे 'कृपा-सिंधु बदन...' गाते और कितने ही भजन गाते. कभी-कभी दीवार पर दीया जलाये भागवत पढ़ते हैं. रेवती पास बैठी सुनती रहती है. उसने सुन-सुन कर कई भजन याद कर लिये हैं. उसके कोमल शिशुकंठ से भजन बहुत भले लगते हैं. संध्या समय बाबू के पास बैठे वह भजन गाती है तो गांव के कई लोग आ कर सुनते हैं. रेवती ने बाबू से एक भजन सीख लिया था. उसी को गाने से श्यामबंधु खुश होते हैं. बेटी को वही भजन गाने को कहते हैं, रेवती गाती है.

दो वर्ष पहले स्कूलों के डेपुटी इंस्पेक्टर देहात के दौरे के समय आ कर एक रात के लिए पाटपुर में ठहर गये थे. गांव के मुखिया जैसे लोगों के अनुरोध से डेपुटी जी ने इंस्पेक्टर साहब से अर्ज करके एक अपर प्राइमरी स्कूल खुलवा दिया है. शिक्षक हैं, कटक नार्मल स्कूल की अध्यापन-परीक्षा पास छात्र वासुदेव. नाम जैसा वासुदेव है, वह भी वैसा वासुदेव, लड़के के बाहर-भीतर सब सुंदर. गांव की गली में चलते हुए सर उठा-कर किसी की ओर ताकता तक नहीं. उमर अंदाजन बीस होगी. सुंदर रूप, मानो गढ़ा-तराशा गया हो. बचपन में यकृत की खराबी हुई थी. उसकी मां ने सर पर तपती बोतल के मुंह से आंच लगायी थी, वह निशान अब भी है. पर वह निशान उसके चेहरे पर फबता है. वासुदेव बचपन से अनाथ, मामा के घर आदमी बना है. जात का कायस्थ है. श्यामबंधु भी कायस्थ हैं. कभी पूनम, कभी गुरुवार आदि के पर्वों पर घर में पीठी मिठाई बनती है तो श्यामबंधु पाठशाला जा कर कह आते हैं—बेटा वासु, शाम को घर आना, तुम्हारी मौसी ने कहा है. इसी तरह आते-जाते एक माया-सी हो गयी है. रेवती की मां वासु को देखने पर कहती है—हाय, बचपन से मां-बाप नहीं हैं, क्या खाता है, कौन देख-भाल करता है!

वासु रोज श्यामबंधु के पास घड़ी-आध घड़ी बैठ आता है. उसे दूर से देख कर रेवती 'वासु भाई आये... वासु भाई आये' चिल्ला कर बापू से कहती है. रेवती रोज शाम को बापू के पास बैठ कर पुराने भजन गा कर वासु को सुनाती है. वासु को वे गीत नये-नये-से लगते हैं. एक दिन इधर-उधर की बातें हो रही थीं कि श्याम बंधु ने सुना, कटक में लड़कियों के लिए भी एक स्कूल है. वहां लड़कियां पढ़ती हैं, सिलाई सीखती हैं. उसी दिन से श्यामबंधु ने रेवती को पढ़ाने का विचार किया और उन्होंने अपने मन की बात वासुदेव से कहीं.

वासु श्याम बंधु को पिता के समान मानता है. उसने कहा—जी, मैं वही कहने की सोच रहा था. दोनों ने सलाह-मशविरा कर रेवती को पढ़ाने का तय किया.

रेवती

• फकीरमोहन सेनापति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेवती पास बैठी सुन रही थी, [illegible] वह अंदर चली गयी और मां और दादी तक 'मैं पढ़ूंगी... मैं पढ़ूंगी' खबर पहुंच गयी.

मां बोली --ठीक है, ठीक है, तू पढ़ेगी.

दादी चिहुक उठी-- पढ़ाई क्या री? औरत जात, पढ़ाई क्या होगी? रसोई सीख, खीर-मिठाई बनाना सीख, आलपना बना, पाठ का क्या करेगी?

रात के समय श्यामबंधु आम की लकड़ी के पीढ़े पर बैठे भात खा रहे हैं, साथ बैठी रेवती भी खा रही है. बूढ़ी सामने बैठ कर भात ला. . .दाल दे जा. . . नोन दे आदि हुक्म दे रही है बहू को. बात ही बात में बूढ़ी कहने लगी--अरे शाम, रेवी पाठ पढ़ेगी. . .अरे अरे पाठ का क्या होगा? औरत जात की पढ़ाई कैसी?

श्यामबंधु ने कहा--कहती है, पढ़ेगी, तो पढ़े!

रेवती चिढ़ उठी और दादी को गाली देते हुए कहने लगी--तू जा बूढ़ी डोकरी कहीं की! और उसके बाद जिद करते हुए बापू से कहने लगी--नहीं पिताजी, मैं पढ़ूंगी?

श्यामबंधु बोले--हां, हां, पढ़ेगी, तू! उस दिन बात झूठी ही हुई.

दूसरे दिन शाम को वासुदेव ने सीतानाथ बाबू की लिखी 'प्रथम पाठ' किताब ला कर रेवती को दी तो वह खुश होकर, बापू के पास बैठ कर पुस्तक को शुरू से अंत तक उलट-पलट कर देख गयी. उसमें हाथी, घोड़े, गाय आदि के चित्र देख कर वह खुश हुई. राजा लोग हाथी-घोड़े रख कर खुश होते हैं, कोई चढ़ कर खुश होता है, तो रेवी ५.. तसवीर देख कर खुशी हो रही है. रेवी दौड़ती हुई जा कर मां को किताब की तसवीरें दिखाने लगी और इसके बाद दादी के पास पहुंच गयी. दादी थोड़ी चिढ़ कर बोली--हां, हां, जा! तो रेवती उसे दुतकारने लगी.

* *

आज दिन अच्छा है--श्री पंचमी. रेवती सुबह नहा-धोकर, नये कपड़े पहन कर घर के अंदर से बाहर और बाहर से अंदर आ-जा रही है. वासु भाई आयेंगे तो किताब पढ़ायेंगे. बूढ़ी के डर से विद्यारंभ के लिए कोई व्यवस्था नहीं हुई है. सुबह लगभग छः घड़ी के समय वासु आ कर पढ़ा गया--अ आ, ह्रस्व इ, दीर्घ ई, ह्रस्व उ, दीर्घ ऊ. . .आदि. प्रतिदिन पढ़ाई होने लगी. रोज सुबह-शाम वासु आ कर पढ़ा जाता. दो साल के अंदर रेवती ने काफी कुछ पढ़ लिया है. मधुराव की छंदमाला वह बेझिझक पढ़ लेती है.

एक दिन रात के समय श्यामबंधु खाने बैठे थे कि मां-बेटे में बात हुई. उससे पहले भी शायद बात हुई थी. आज उसी बात का उपसंहार हो रहा था.

श्यामबंधु ने कहा-- मां, यह ठीक नहीं होगा क्या?

बूढ़ी बोली--हां, अच्छा ही होगा, लेकिन जात-पांत का पता लगाया?

श्यामबंधु ने कहा--और अब तक क्या कह रहा था? अच्छे कायस्थ कुल में जन्मा, गरीब है तो क्या हुआ, जात तो अच्छी है!

रेवती पास बैठी खा रही थी. इस बात का मर्म पता नहीं क्या समझा रेवती ने, वही जाने पर उस दिन से उसके रंग-ढंग बदल गये. तब से पिताजी के सामने वासु भाई पढ़ाने बैठते हैं तो उसे शरम आती है. अकारण-सकारण हंसी आती है, सर नवाए दोनों होठ को जबरदस्ती बंद कर वह हंसी छिपाती है. वासु पढ़ाने लगता है, तो वह चुपचाप पढ़ती है, कभी-कभार. .हां. हूं, बस. पढ़ाई खतम होने पर मुंह बंद किये मुसकराती हुई अंदर भाग जाती है. रोज शाम को बाहर किवाड़ पकड़े किसी की बाट जोहती है. वासु के आने पर अंदर चली जाती है, बार-बार बुलाने पर भी बाहर नहीं निकलती. अब रेवती के बाहर निकलने पर बूढ़ी चिढ़ती है.

देखते-ही-देखते श्री पंचमी से पंचमी, दो साल बीत गये. विधि का विधान, किसी के दिन समान नहीं जाते. फागुन के दिन, कहीं कुछ नहीं, अचानक हैजा फैल गया. सुबह गांव में लोगों ने सुना कि गुमाश्ता श्यामबंधु महांति को हैजा हो गया है. देहातों में हैजे के नाम से ही किवाड़-दरवाजे बंद हो जाते हैं. सब सोचते हैं, विशूचिका-बूढ़ी मानो टोकरी लेकर रास्ते पर से आदमी चुग रही है. दरवाजे तक कोई नहीं आता. घर में दो औरतें क्या कर पायेंगी? एक बच्ची है, जो चीखती-पुकारती बाहर-भीतर हो रही है. वासुदेव ने सुना, तो स्कूल छोड़ कर दौड़ा हुआ आया. न डर है, न भय, न अपने शरीर के लिए चिंता. श्यामबंधु के पास बैठ कर पैर सहलाता रहा, मुंह में पानी देता रहा. दिन के तीसरे पहर श्यामबंधु ने वासु की ओर देख कर रुंधे-हकलाते स्वर में कहा--वा. . .सु. . .एं. . .वं. . .लं. . . गां. . .! वासु चीख पड़ा. घर में हलचल मच गयी. रेवती धरती पर लोट, बिलख रही थी. देखते-देखते शाम तक समाप्त! क्या करें, वासु कल का छोकरा और दो स्त्रियां! गांव में बस उन्हीं का ही एक घर कायस्थ का. सास, बहू और वासु, तीनों ने जैसे-तैसे काम चलाया. श्मशान से लौट आने तक सुबह का तारा उग चुका था. घर में पैर धरते-न-धरते रेवती की मां को दस्त हुआ. देखते-देखते दोपहर तक गांव भर में खबर फैल गयी कि रेवती की मां भी नहीं रही.

दिन गुजर जाता है, किसी के लिए रुका नहीं रहता. किसी की पालकी पर पाट छतरी तो किसी के लिए बेड़ियों पर कोड़ा. दिन सभी के बीतते हैं, बीतेंगे भी. देखते-देखते तीन महीने बीत गये. श्यामबंधु के घर में दो गायें थीं. तहसील की बकाया रकम के लिए जमींदार के आदमी आ कर उन्हें ले गये. हमें पता है, जमींदार के रुपयों को श्यामबंधु शिव-निर्माल्य की तरह मानते थे. एक रुपया भी वसूल हो जाता, तो जब तक जा कर कचहरी के खाते में जमा न कर आते, तब तक उन्हें चैन नहीं. परंतु उन पर रकम बाकी हो या न हो, दोनों गायें दुधारू थीं, यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात पहले ही से जमींदार को मालूम थी. इसके अलावा जमींदार से खेती के लिए जो तीन बीघा जमीन मिली थी, वह भी छीन ली गयी है. हलवाहे का अब और क्या काम? वह भी दोल पूनम के दिन काम छोड़ कर चला गया. दोनों बैल साढ़े सत्रह रुपये में बिके. उसमें से दोनों के क्रिया-कर्म के बाद जो बचा था, उसी से जैसे-तैसे एक महीना गुजर गया. आज लोटा तो कल पतीला बेच-बांच कर एक महीना और बीत गया.

वासु दोनों वक्त आता है. रात एक पहर तक घर पर रहता है. दादी-पोती सोने को जायें, तब लौटता है. वासु पैसे-वैसे देना चाहे, तो दादी-पोती कोई भी नहीं लेती. जोर-जबरदस्ती दे भी दे, तो पैसे आले में पड़े रहते हैं. यह देख कर वासु अब और नहीं देता. बूढ़ी जो एक-दो पैसे देती है, उसी से वह सामान खरीद लाता है. उसी दो पैसे के सौदे से आठ-दस दिन का गुजारा हो जाता है.

घर पर की छान उड़ चुकी, नया छाजन चाहिए. वासु ने दो रुपये का पुआल खरीद कर बाड़ी में ला कर रख दिया है. नयी छान बनी है. बूढ़ी अब रात-दिन नहीं रोती है, सिर्फ शाम को बैठी रोती है. रोते-रोते वहीं लुढ़क जाती है और रात वहीं बीत जाती है. रेवती उसी के पास सुबकते-सुबकते सो जाती है. बूढ़ी को अब अच्छी तरह दिखाई नहीं पड़ता. वह पगली-सी हो गयी है. अब रोना छोड़ रेवती को गाली देने लगी है. इस सारे दुःख, सारी दुर्दशा की जड़ है रेवती, यह उसने मन ही मन तय कर लिया है, रेवती पढ़ने लगी, इसलिए बेटा मरा, बहू मर गयी, नौकर छोड़ कर चला गया, बैल बेचने पड़े, जमींदार के लोग आकर गायें ले गये. रेवती कुलच्छनी है, कुढंगी है. बूढ़ी की आंखों से दिखाई नहीं देता, इसका कारण भी रेवती की पढ़ाई है. बूढ़ी गाली बकती होती, तो रेवती की आंखों से आंसुओं की धारा बहती रहती. डर के मारे वह बूढ़ी के सामने नहीं आती. बाहर बरामदे में या घर के अंदर मुंह छिपाये, काठ मारे पड़ी रहती है. वासु भी दोषी है, क्योंकि रेवती तो पहले पढ़ी हुई नहीं थी, उसने आ कर पढ़ाया. पर बूढ़ी वासु से कुछ नहीं कहती. वासु नहीं हो, तो घर पल भर के लिए भी नहीं चले. तिस पर जमींदार का आदमी झमेला कर रहा है.

रेवती अब लीलामयी प्रतिमा नहीं रही. उसका स्वर अब कोई नहीं सुनता. बाप-मां के मर जाने के बाद से उसे बाहर किसी ने भी नहीं देखा. कुछ दिनों तक वह खूब बिलखती रही, पर अब जोर-जोर से नहीं रोती, परंतु रात-दिन उसकी बड़ी-बड़ी आंखें छोटी-छोटी नील कुइयों की तरह पानी से छलछलाती रहतीं. उसके छोटे-से प्राण, उसी में छोटा-सा मन एकबारगी टूट गया है. उसके लिए अब दिनरात एक समान हैं. मां-बाप मर गये हैं, वे अब लौट कर नहीं आयेंगे, इस बात का जैसे उसे विश्वास नहीं. न पेट में भूख है, न आंखों में नींद. दिनरात मां बाप के ध्यान में डूबी रहती है. दादी के डर से खाने बैठती है. फर्श पर से उठती ही नहीं. देह में बस हाड़-चाम बाकी रह गये हैं. [illegible] वासुदेव के आने पर उठ खड़ी होती है, बड़ी-बड़ी आंखें उठा उसे एकटक देखती है, वासु के देखने पर धीमी-सी आह भर सर नवा लेती है.

हाथ की गिनती में आज श्यामबंधु को मरे पांच महीने हो गये. जेठ के दिन, ठीक दोपहर के समय वासु ने दस्तक दी. इस समय वह कभी भी नहीं आता. बूढ़ी ने कूंथते हुए जा कर किवाड़ खोला. वासु बोला—दादी मां, डेपुटी इंस्पेक्टर हरिपुर थाने में बैठ कर बच्चों से पाठ पूछेंगे. सब लड़के जायेंगे. मुझे चिट्ठी मिली है. मैं लड़कों को ले कर कल सुबह जाऊंगा. पांच दिन लग जायेंगे.

रेवती किवाड़ की आड़ में खड़ी सब सुन रही थी, लथ से वहीं जमीन पर निढाल बैठ गयी. अच्छा ही हुआ कि किवाड़ पकड़े खड़ी थी, नहीं तो गिर पड़ती. वासु ने पांच दिन के लिए चावल, नमक, तेल, बैंगन वगैरह ला कर आंगन में रख दिये और बूढ़ी को प्रणाम कर शनिवार के दिन शाम के समय निकल पड़ा. बूढ़ी बोली—देख बेटा, धूप में घूमना नहीं. सेहत का खयाल रखना, समय से खा-पी लेना. इतना कह कर उसने आह भरी. रेवती एकटक वासु को देख रही थी. आज का देखना एक और किस्म का था. इसके पहले वासु आये तो वह सर झुका लेती थी, आज वह भाव नहीं है. आज चार आंखें मिलीं—आंखें फेर लेना किसी के बस की बात नहीं.

वासु चला गया है. दिन ढल गया है, घर और बाहर चारों ओर अंधेरा घिर गया है. रेवती जिस तरह ताक रही थी, वैसे ही ताकती रह गयी है. बूढ़ी के पुकारने पर उसकी चेतना लौट आयी. घर और बाहर सब अंधकारमय था.

* *

रेवती बैठी-बैठी दिन गिन रही है, आज छह दिन हुए. मां-बाप के गुजर जाने के बाद उसने, बाहर के दालान को देखा नहीं था. किंतु आज वह दो बार बाहर हो आयी है. समय अंदाजन छह घड़ी. हरिपुर में स्कूल के लड़कों के लौटते ही लोगों में कानाकानी होने लगी—हरिपुर से लौटते समय गोपालपुर के बरगद के नीचे पंडित जी को हैजा हुआ, चार बार दस्त हुए और वह आधी रात चल बसे. गांव वालों ने हाय-हाय मचायी. . . .लड़के, बच्चे, माएं, लड़कियां, औरतें, सब फूट-फूट कर रो पड़े. कोई बोली—अहा, कैसा सुंदर रूप! किसी ने कहा—कैसा धीर! कोई कहने लगी—गली में से जाते, तो कैसे शांत, कैसे भला. . !

रेवती ने सारी बातें सुनीं, बूढ़ी ने भी. रो-रो कर बूढ़ी का गला रुंध गया और वह रो नहीं सकी. अंत में उठ कर उसने कहा —अहा बेटे, तूने अपनी ही बुद्धि से प्राण गंवाये. यानी वह रेवती को पढ़ाने की दुर्बुद्धि के कारण ही मर गया, नहीं तो मरा नहीं होता. सुनते ही रेवती घर के अंदर जा कर निढ़ाल हो गिर पड़ी है. शोर-शब्द कुछ भी नहीं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह दिन बीता, दूसरे दिन सुबह रेवती को पास नहीं देख कर बूढ़ी ने चीख कर पुकार लगायी—अरी ओ रेवती ...ओ रेवी....अरी ओ मुंहजली .... आगलगी ! बूढ़ी पगली की तरह हो गयी है. रोना-चीखना कुछ भी नहीं, सिर्फ गुस्से से रेवती को गालियां दे रही है. अरी ओ मुंहजली ...आगलगी! बूढ़ी को आंखों से दिखाई नहीं पड़ रहा है. टटोलते-टटोलते जा कर उसने रेवती को पाया. पुकारने पर कोई जवाब नहीं मिला, तो उसकी देह सहला कर देखा, काफी बुखार है, देह से आग फूट रही है, चेत नहीं. बूढ़ी देर तक उसके पास बैठी रही. सोचती रही, क्या करे, किसे बुलाये. कुछ तय नहीं कर सकी, तो झल्लाकर बोली—जो तेरा अपना किया हुआ है, उसका क्या इलाज? यानी तूने पढ़ा, इसलिए बुखार हुआ, इसका मैं क्या कर सकूंगी!

रेवती धरती से चिपक गयी है. आंखें नहीं खोलती. बुलाने पर जवाब नहीं देती ऊं-चूं तक नहीं. आज छह दिन हो गये. रेवती इस बीच दो-चार-बार चीख चुकी. उसकी चीख सुन कर बूढ़ी उसके पास गयी. शरीर सहला कर देखा. हाथ-पैर ठंडे लग रहे थे. पुकारने पर हां-हूं किया. आंखें फाड़े एकटक देख रही है, कुछ न पूछने पर भी बक रही है. कोई वैद्यराज देखते, तो 'तृष्णा दाह पुलापश्च' आदि श्लोक पढ़ कर कहते—सन्निपातस्य लक्षणं. पर बूढ़ी को खुशी हुई. देह तपती नहीं है. बात नहीं कर रही है, अब बोलने लगी है. देख नहीं रही थी, अब आंखें खोलने लगी है. पानी मांग रही है. दो-चार पथ्य हो जायें, तो लड़की उठ बैठेगी.

—तू सोती रह, मैं तेरे लिए पथ्य बना लाती हूं. कह कर बूढ़ी उठ गयी. पथ्य क्या बनाती? घर भर में टोकरी, छाज हंडी-हंडिया सब कुछ टटोलने पर भी अनाज का एक दाना तक नहीं मिला. गहरी सांस ले कर पल भर के लिए बूढ़ी वहीं लथ से बैठ गयी. वासु पांच दिनों के लिए चावल-दाल ला कर दे गया था. उसी में किसी तरह दस दिन गुजर गये. बूढ़ी की दृष्टि ठीक होती, तो समझ गयी होती. घर में लोटा-बरतन कुछ भी नहीं. एक फूटा लोटा हाथ लगा. उसी को ले कर वह हरि साहू की दुकान चल पड़ी.

हरि साहू बूढ़ी के हाथों में लोटा देख मतलब ठीक-ठीक समझ गया. बूढ़ी ने अपना अभिप्राय बताया, तो उसने लोटे को ले कर इधर-उधर देखा—नहीं, नहीं, घर में चावल नहीं है. तिस पर इस फूटे लोटे को रख कर कौन चावल देगा ? यह बात नहीं कि हरि के घर में चावल नहीं था, देने की इच्छा भी थी, पर सस्ते में लेना है.

चावल नहीं है, सुन कर बूढ़ी के सर पर मानो आसमान टूट पड़ा ...क्या करूं, लड़की बुखार से उठी है, क्या ले कर दूंगी उसके मुंह में! वहीं घड़ी भर के लिए बैठ गयी. उसने दो बार हरि को देखा. फिर बोली—जाऊं, क्या कर रही है, देख आऊं.

वह लोटा ले कर लौट रही थी कि हरि ने कहा—दे दो, देखता हूं, घर में क्या है.

हरि ने लोटा रख लिया और उसके बदले चार मान चावल, आधा मान दाल, कुछ नमक दे दिया.

अब तक बूढ़ी ने दातून तक नहीं की थी. देह और मन की बात क्या कहें! घर पहुंच कर रेवती को पुकारने लगी. उसका विश्वास था कि रेवती अच्छी हो गयी है, पानी लादेगी और वह भात बना देगी. रेवती का कोई जवाब नहीं मिला, तो वह झल्ला कर पुकारने लगी—अरी ओ रेवती ...ओ रेवी ... अरी ओ मुंहजली ...आगलगी ...! फिर भी कोई जवाब नहीं.

उधर रेवती का सन्निपात रोग क्रमशः बढ़ रहा था. भयानक यंत्रणा. देह धीरे-धीरे शीतल होती जा रही थी. जीभ सूखती जा रही थी. वह किसी तरह बाहर आ गयी. अच्छा नहीं लगा. बाड़ी की ओर जा कर बरामदे में बैठ गयी. दिन ढलने को हुआ. हवा तेज बह रही थी. वह दीवार के सहारे बैठ गयी. पूरी बाड़ी को देख गयी. बापू ने पिछले साल यह केले का पेड़ लगाया था, फूल खिला है. दो साल पहले मां ने अमरूद का पेड़ लगाया था, कितना बड़ा हो गया है! उस पर भी फूल खिले हैं. उस पेड़ को देख कर मां की याद आयी. शाम हो आयी है. उसने आकाश की ओर देखा, पहले पहर का तारा चमक रहा था, उसमें से किरणें फूट रही थीं. ध्यान लगाये रेवती उस तारे को एकटक देख रही थी ...अपलक . तारे का विस्तार धीरे-धीरे बढ़ रहा था ...चक्र का आकार हो गया है, वह और बढ़ रहा है, और उज्ज्वल हो रहा है. अहा, यह किसकी मूर्त्ति है तारे में ! शांतिदायिनी, प्रेममयी, आनंदमयी माता की अभयमूर्ति बैठी हुई मानो स्नेह से गोद में उठा लेने को बुला रही है. मां ने दो किरण-हाथ पसार दिये. किरणों ने आ कर चक्षु का स्पर्श किया और वे हृदय के अंदर प्रविष्ट हुईं. उस अंधेरे के अंदर और कोई शब्द नहीं था— केवल श्वास के स्वर. अंत में मां ...मां ...दो बार अस्पष्ट रूप से सुनाई पड़ा. बाड़ी निस्तब्ध , मौन थी.

उधर बूढ़ी न सरकते-सरकते जा कर रेवती के सोने की जगह टटोला, कोई नहीं था. सारा घर, बाहर, आंगन, ढेंकी शाल ...कहीं नहीं. सोचा, बुखार ठीक हो गया है, बाड़ी की ओर घूम रही होगी. वही पुकार 'अरी ओ रेवती...ओ रेवी...अरी ओ मुंहजली... आगलगी ...' फिर गूंजी. वह बाड़ी की तरफ, आंगन की ओर गयी. बरामदा जमीन से दो हाथ की ऊंचाई पर था, एक हाथ चौड़ा—अरे, तू यहां बैठी है ! देह सहला कर बूढ़ी पहले चौंक पड़ी—उसने एक बार और सर से पैर तक उसे सहला दिया, फिर नाक के सामने हाथ रख कर चीख पड़ी. इसी के साथ-साथ धड़ाम की आवाज आयी, बरामदे के नीचे से.

श्याम बंधु महंति के घर के किसी भी व्यक्ति को दुनिया में फिर कोई नहीं देख सका. पड़ोसियों न रात पहर गये आखिरी बार सुना—अरी वो रेवती .... ओ रेवी ....अरी ओ मुंहजलो ...आगलगो !

(अनुवाद : श्रीनिवास उद्गाता) □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूकानदारी • मदन शर्मा

दोनों भाइयों ने मिल कर जूतों की दूकान खोली थी. किसी ग्राहक को दुकान के भीतर प्रवेश करते देख एक भाई चुपके से कहीं खिसक जाता. दूसरा ग्राहक को जूते निकाल-निकाल कर दिखाने लगता.

—यह कितने का है?

—पचास का. देखिए, मैं आपको यह तीस में दे दूंगा. मगर एक बात है, कहीं मेरे भाई को इसका पता न चल जाये.

इतने में दूसरा भाई भी भटकता हुआ आ पहुंचता.—कहो, क्या हो रहा है? कितने में दे रहो यह जोड़ा?

—तीस में, अपना ही आदमी है.

—ठीक है, लुटवा दो दुकान. पचास की चीज तीस-तीस में देते जाओ और जब दुकान को ताला लग जाये, तो सड़क पर बैठ जाना.

—यह क्या बात हुई! तुम्हारे यार-दोस्त जब चाहें आयें और जिस भाव चाहें चीज उठा कर ले जायें और एक-आध कभी मेरा आदमी आ जाये तो तुम आंखें दिखाने लगे.

—क्या कहा? मैं आंखें दिखाता हूं?

इस प्रकार झगड़ा बढ़ता चला जाता. लगता दोनों एक दूसरे को गले से पकड़ने ही वाले हैं. तभी पहला भाई अवसर पा कर ग्राहक को आंख मार देता. ग्राहक तीस रुपये रख और जूतों का डिब्बा बगल में दबा कर चल देता.

दोनों भाई खिलखिला कर हंसते और अगले ग्राहक की राह देखने लगते. दुकान चल निकली तो उस पर बड़ा-सा साइन बोर्ड लगा दिया गया. उस पर सबसे ऊपर लिखा था—'ये जूते आप ही के लिए हैं.'

बीच में मोटा-सा 'जनता शू कंपनी' लिखा था और सब से नीचे बारीक अक्षरों में —सौदागर मल हकूमत राय एंड संस. □

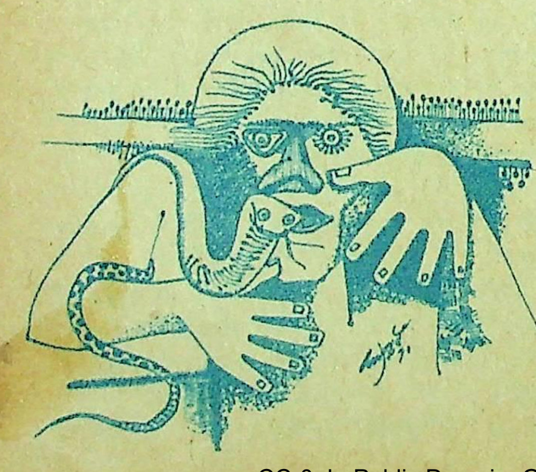

विनोद दुबे

अनुरक्ति • ओम प्रभाकर

एक पुंश्चली स्त्री थी.

वह रोज अपने प्रेमी से मिलने जाती थी. उसके रास्ते में एक उद्यानाश्रम पड़ता था, जहां एक तपस्वी रहता था.

उस दिन आकाश में छाये सघन बादलों के कारण दिन में भी अंधेरा-सा था. प्रेमी से मिलने की तीव्र लालसा और कहीं वर्षा न होने लगे इस आशंका के कारण स्त्री तेज चाल से चली जा रही थी. आश्रम से गुजरते हुए वह नहीं जान पायी कि कब एक पेड़ के नीचे बैठे तपस्वी को उसके पांव की हलकी-सी ठोकर लग गयी.

लौटते समय तपस्वी ने स्त्री को टोका और फटकारा—तुम्हें लज्जा नहीं आती. पति के रहते पर पुरुष से प्रेम करती हो. और अपने इस पाप-कर्म में इतनी लिप्त हो कि रास्ते में कौन बैठा है यह भी नहीं देखती. आज जाते समय तुम्हारे अपवित्र पैर की ठोकर से मेरी साधना भंग हो गयी. तुम रौरव नरक में जाओगी.

स्त्री हंसी किंतु प्रकटतः अत्यंत विनम्रता पूर्वक बोली—अगर साधना से ही स्वर्ग-नरक मिलता है महात्मन्, तो अपने श्राप पर एक बार फिर विचार कीजिए. एक ओर आपकी साधना है, जो किसी हलके से स्पर्श से ही भंग हो जाती है और दूसरी ओर मेरी कि मुझ रास्ते में बैठा मनुष्य भी नहीं दिखाई देता.

तपस्वी अवाक रह गया. □

पारस मणि • रेखा सिंह

बात सनातन ऋषि और एक निर्धन ब्राह्मण की है. सनातन ऋषि यमुना के तट पर तपस्या करने को बैठे ही थे कि एक निर्धन ब्राह्मण वहां पहुंचा और बोला—मुनिवर, बहुत दूर से आ रहा हूं. मेरे दुखों का अंत नहीं. स्वप्न में मुझे एक देवता कह गये कि आपकी शरण जाऊं.

सनातन ने कहा—मैं तो अकिंचन हूं. तेरी क्या सहायता कर सकता हूं?

कुछ सोच कर मुनिवर पुनः बोले—हां, याद आया. वहां उस वृक्ष के नीचे मैंने एक पारस मणि गाड़ कर रखी हुई है. उसे ले ले.

पारसमणि! ब्राह्मण के हर्ष का पारावार न रहा. भागा-भागा उस स्थान पर गया और मणि खोद लाया. ज्यों ही उसने उसे अपने लोहे के ताबीज से छुलाया, वह सोने का हो गया.

वह पुनः सनातन ऋषि की शरण में पहुंचा और अश्रुपूरित नेत्रों से बोला—मुनिवर, मुझे यह नहीं चाहिए, मुझे चाहिए आपके इन चरणों की धूलमात्र जिन्होंने पारस मणि को भी ठुकरा दिया है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवाल हीन जवाब :

फिलॉसफी

विश्वविख्यात महिला नोवलिस्ट ग्रेथर्ट स्टेइन की मृत्यु इस प्रकार हुई—

विस्तर को दबोच कर, छत की ओर शून्यता-भरी आंखें गड़ा कर उसने अचानक पूछा—तो फिर जवाब क्या है?

थोड़ी देर वह मौन रही; कोई जवाब न मिला. निःस्तब्धता भंग कर उसने फिर पूछा—तो फिर सवाल क्या है?

और वह मृत्यु के मुंह में समा गयी.

इस घटना का भाव-मर्म आधुनिक फिलॉसफी है. □

स्वर्गीय कुत्ते

पेरिस शहर में कुत्तों का एक शानदार श्मशान है. संगमरमर की कंदरागार, स्वर्गीय जीवों की तसवीरों से अलंकृत स्मारक-चिह्न उसकी गौरव गरिमा बढ़ाते हैं. प्रतिदिन पेरिस की वंध्य महिलाएं अपनी मोटर से श्मशान पर पधारती हैं एवं अपना शोक प्रकट करतीं; कोई अपने स्वर्गीय कुत्ते के लिए 'कबाब', 'कटलेट' आदि स्वादिष्ट भोजन कबर पर छोड़ जाती हैं.

अर्वाचीन में भी ऐसा अंधविश्वास है इसे हम कदापि नहीं स्वीकारते, यदि एक संभ्रांत महिला पुलिस को यह शिकायत नहीं भेजती. वह हर दिन अपने प्यारे मृत कुत्ते के लिए स्वादिष्ट खाना पहुंचाती थी. उसका विश्वास था कि रात को अंधेरे में देवदूत के पंखों में प्रत्यक्ष हो, वह भोजन खाता था.

लेकिन घटनावश एक दिन वह महिला अपनी छतरी कबर पर ही भूल गयी और जब कुछ ही क्षणों में लौटी तो उसने क्या देखा कि श्मशान का चौकीदार उस स्वादिष्ट भोजन से अपने उदर की पूर्ति कर रहा है. □

● आर. डी. पुरोहित

परदे के पीछे

पौराणिक मिस्र में सारे दैवत्व और जीवन का मूलाधार 'ऐसिस देवी' थी, जिसकी प्रतिमा एक परदे के पीछे प्रतिष्ठित थी. जिसने भी परदे को उठाया उसे अलौकिक और निगूढ़ रहस्यों का ज्ञान हुआ; लेकिन केवल पुरोहित ही उस भाग्य का भोक्ता था.

एक नवजवान 'सेयस' नगर में था जिसको ज्ञान की बड़ी तृष्णा थी और अलौकिकता के प्रति आकांक्षा भरा विश्वास. एक घटाटोपमय अंधेरी रात को उसने चुपके से मंदिर में प्रवेश किया एवं कांपते हाथों से परदे को उठाया और जो कुछ उसने देखा उसे कोई दूसरा न जान सका, क्योंकि सुबह होते ही वह खुली आंखों से अबोध पड़ा हुआ मिला, परदे के समक्ष ही.

इसका क्या कारण है?

उसने सत्य को आंखों देखा, उसने देखा जो कुछ वहां था, वह धोखा था, परदे के पीछे कुछ नहीं था. ऐसिस एक कपोल-कल्पित शून्य अवतार निकली. दैवत्व सीमातीत शून्यता था; सत्य का ज्ञान विश्वासी के निमित्त मौत बन बैठा. □

जरूरत

रेस्तरां में मैंने बिल चुकाया, और बैरे ने छूटे पैसे दिये— एक पांच रुपये का नोट मैला और मुड़ा हुआ मुझे मिला. नोट के किनारे लिखा था : 'तुम्हारे लिए मैंने अपनी अस्मत बेची है.' □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कबिरा खड़ा बजार में (१८)

• हरिशंकर परसाई

इस बार कबीरदास की भेंट एक अभिनंदनी से

कबीर बाहर निकला तो अजरज में आ गया. वह कनछेदी जो बेकार बैठा रहता था, आज काम में लगा था. कुदाली से घर के सामने का चबूतरा तोड़ रहा था. पसीना-पसीना हो रहा था.

मैंने कहा—अरे कनछेदी, यह क्या कर रहे हो?

कनछेदी ने कहा—साधु, बोलो मत. काम करने दो.

मैंने कहा—पर यह चबूतरा क्यों तोड़ रहे हो?

कनछेदी ने कहा—यह 'एनक्रोचमेंट' है. अतिक्रमण है. देखते नहीं नगर निगम की नाली पर यह चबूतरा बना है. इरादा तो यह था कि बांयीं तरफ एक ठेला बनवा कर किसी पानवाले को किराये पर दे दूं. पर अब तो इसी चबूतरे को उखाड़ देना है. मैं नहीं उखाड़ूंगा तो 'वे' आ कर उखाड़ देंगे.'

मैंने कहा—कनछेदी, तुम तो ऐसे बोल रहे हो जैसे कोई लजीली औरत कहती है—हमारे 'वे' कल बाहर जाने वाले हैं, 'वे' कह रहे थे कि कमला. . .

कनछेदी ने कहा—तुम कुछ भी कहो, पर मैं नहीं कहूंगा. दीवारों के भी कान होते हैं. इस नाली के भी कान हैं. बड़ों-बड़ों की हवेलियां रो रही हैं.

मैंने कहा—पर कनछेदी, बीस साल से तुम यह चबूतरा बनाये हो. तुम्हें इन बीस सालों में यह समझ में नहीं आया कि यह 'एनकोंचमेंट' है.

कनछेदी ने कहा—मैंने तो बड़ों-बड़ों की देखा-देखी में यह कर डाला. पर तुम तो ज्ञानी हो. तुमने मुझे क्यों नहीं बताया?

कबीर ने कहा—मैं तो समझ रहा था कि नाली का इतना हिस्सा तुमने खरीद लिया है.

कनछेदी ने गुस्से से कहा—देखो, ये बातें मत करो. मेरी एक सलाह मानो. अपने ये लंबे बाल कटवा डालो.

मैंने कहा—मैं क्या लड़कियों को छेड़ता हूं?

कनछेदी ने कहा—पर लड़कियां तुम्हें छेड़ती हों तो? बात तो वही हुई. खैर, कहां चले?

मैंने कहा—तोताराम अभिनंदनी से मिलने.

कनछेदी जोर से हंस पड़ा. बोला—अच्छा, साधु चला अपने अभिनंदन का इंतजाम करने!

मैंने कहा—नहीं कनछेदी, मैं अपना नहीं, अभिनंदनीजी के अभिनंदन के सिलसिले में जा रहा हूं.

कनछेदी ने कुदाली चलायी. पत्नी से बोले—जल्दी टोकनी भर. वे आते ही होंगे.

और कबीर चल दिया तोताराम अभिनंदनीजी के पास. तोतारामजी इस इलाके के मशहूर अभिनंदन समारोहों के आयोजक हैं.

मैं उनके पास पहुंचा. वह बड़े उदास बैठे थे.

मैंने कहा—अभिनंदनीजी, मैं कबीरदास हूं.

उन्होंने कहा—आओ साधु.

मैंने कहा—इतने उदास, हताश क्यों बैठे हैं?

उन्होंने कहा—क्या बताऊं? सारी योजना फेल हो गयी. जिन समाजसेवी का मैंने अभिनंदन आयोजित किया था, कार्ड छपवा कर बांट दिये थे, वे जेल की हवा खा रहे हैं. अब मैं क्या करूं? वे इस इलाके के सबसे प्रसिद्ध समाजसेवी हैं. हर संस्था को दान देते रहे हैं.

मैंने पूछा—फिर वे गिरफ्तार क्यों हो गये? वे तो 'दानवीर' हैं.

अभिनंदनीजी ने कहा—साधु, छापा पड़ा, तो सोना, चांदी, नकद मिले. दो खाते मिले. दो नंबरी मामले मिले. तस्करी का माल मिला. वे जेल में डाल दिये गये और मेरा कार्यक्रम फेल हो गया.

मैंने कहा—आपका बड़ा पैसा डूब गया.

वे बोले—नहीं, पैसा तो नहीं डूबा क्योंकि पैसा उन्होंने ही दिया था. पर मेरी इज्जत डूब गयी.

मैंने कहा—इज्जत तो बनती बिगड़ती रहती है. फिर बन जायेगी. पर आप इतने घबड़ाये क्यों हैं?

उन्होंने कहा—साधु, निमंत्रण पत्रों पर मेरा नाम छपा है. मेरी इज्जत भी गयी.

कबीर ने उन्हें हिम्मत बंधायी—कोई चिंता की बात नहीं. तुम्हें क्या पता कि ये समाज-सेवी ऐसे हैं. तुम बेफिक्र रहो. रोटी खायी कि नहीं?

वे बोले—दो दिनों से नहीं खायी.

मैंने कहा—जाओ, रोटी खा कर आओ.

वे भीतर रोटी खाने चले गये. कबीर गाता रहा:

कबिरा नौबत आपनी दिन दस
लेहु बजाय,
ये पुर पटरन ये गली,
बहुरि न देखौ आय!

अभिनंदनीजी खा कर लौटे.

कहने लगे—कोई डर तो नहीं है?

मैंने कहा—कोई डर नहीं. डर तो अपने गलत कामों से पैदा होता है.

वे बोले—मैंने कोई गलत काम नहीं किया. साधु, लोग काम करते रहते हैं, समाज में, साहित्य में, धर्म में, राजनीति में— पर इनका मूल्यांकन नहीं होता. इसलिए मैंने 'तोताराम अभिनंदन एजेंसी' कायम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को. इस एजेंसी के मारफत मैं इन लोगों का जो किसी भी क्षेत्र में विशिष्ट सेवा करते हैं, अभिनंदन करवाता हूं. मैं नहीं चाहता कि कोई भी जो विशिष्ट सेवा करे, अभिनंदन न पाये.

मैंने कहा—आपका उद्देश्य क्या है ?

वे बोले—हमारी एजेंसी समाज सेवा करती है.

मैंने कहा—कोई ठग यदि विशिष्ट हो जाये तो?

वे बोले—तो हम उसका भी अभिनंदन करेंगे. मैं तो नटवरलाल का भी अभिनंदन करना चाहता था.

मैंने कहा—आपकी कार्यप्रणाली क्या है ?

उन्होंने कहा—एक तो यह कि 'क्लाएंट' हमारे पास खुद आते हैं. कहते हैं— जितना भी पैसा लगे, अभिनंदन करा दो. दूसरे, हम खुद 'क्लाएंट' को तलाशते हैं. यश की कामना किसे नहीं होती? हम जाते हैं लोगों के पास कि फलां साहब को देशसेवा करते ४० साल हो गये. उनका अभिनंदन करना हमारा कर्त्तव्य है. यदि उनका अभिनंदन नहीं किया और वे मर गये, तो उनका प्रेत हमारे आसपास मंडराता रहेगा. लोग दयावश अभिनंदन समिति बना लेते हैं. संयोजक हमेशा मैं होता हूं.

मैंने पूछा—कोई ५० साल का हो गया हो तो?

अभिनंदनीजी ने कहा—हां ऐसे 'केस' भी हमारे पास आते हैं. कहते हैं—हम पचास साल के हो गये. हमें समाज सेवा करते २५ साल हो गये. हमारा अभिनंदन करो. मैं देखता हूं कि वे केवल ४९ साल के हैं. मैं वापस कर देता हूं. मैं झूठे केस नहीं लेता.

मैंने कहा—तुम दया किया करो. नौकरी में उम्र 'कंडोन' होती है. कोई विशेष आदमी है पर 'ओवरएज' हो गया है तो, उसकी उम्र माफ कर दी जाती है. तुम भी ४९ साल वाले को क्या ५० का नहीं मान सकते? अरे एक साल पहले ही अभिनंदन कर दो.

अभिनंदनीजी ने कहा—कबीर तुम ठीक कहते हो. मैं आगे, ध्यान रखूंगा. पर लोग बहुत तंग करते हैं.

मैंने पूछा—कैसे?

उन्होंने कहा—अपना अभिनंदन ग्रंथ खुद छपा कर ले आते हैं. कहते हैं कि तुम अपनी फीस ले लो, पर यह अभिनंदन ग्रंथ किसी बड़े आदमी के कर-कमलों से मुझे भेंट कराओ. तब मुझे बड़ी मेहनत पड़ती है.

मैंने कहा—पर 'क्लाएंट' फीस तो देता होगा?

वे बोले—देता तो है. पर काम के हिसाब से फीस कहां मिलती है!

मैंने पूछा—कितने अभिनंदन अभी तक करवा चुके?

उन्होंने कहा—लगभग पचास. जिन्हें कोई नहीं जानता था, उनका भी अभिनंदन मैंने कराया. मैं प्रचार कर देता हूं. उनके लिए बड़े शर्म की बात है कि फलां साहब को समाजसेवा करते ३० साल हो गये. वे प्रचार से दूर रहे. मौन सेवक रहे. अपना सर्वस्व त्याग दिया. वे ६० के हो गये. हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनका अभिनंदन करें. लोग भावुक हैं. झांसे में आते हैं. जो उन्होंने नहीं किया, वह सब मैं उनके अभिनंदन पत्र में लिख देता हूं.

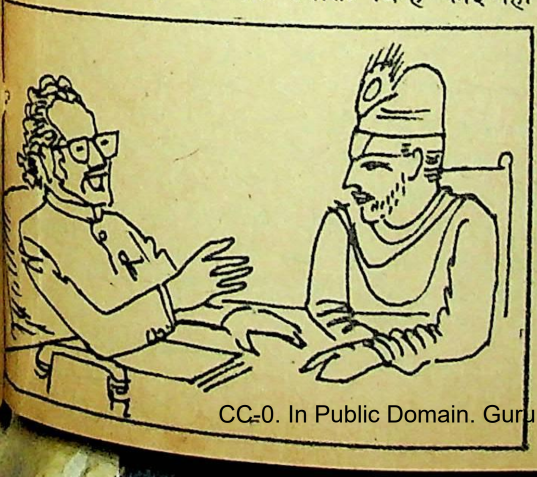

अभिनंदनीजी ने पूछा— संत तुमने कभी मेरा कोई अभिनंदन समारोह देखा?

मैंने कहा—कई देखे हैं. बढ़िया होते हैं. तीन महीने पहले मैंने एक कुलपति का अभिनंदन देखा था.

उन्होंने कहा—साधु, विश्वविद्यालय के एक गुट के अध्यापक मेरे पास आये थे कि वाइस-चांसलर का अभिनंदन करा दीजिए. मैंने कहा—खर्च कौन देगा? वे बोले—हम देंगे. मैंने अभिनंदन करवा दिया. संत तुमने देखा?

मैंने कहा—वही तो मैं कह रहा हूं. मैंने देखा कि पैंट पहने अध्यापक लोग वाइस-चांसलर के चरणों पर सिर रख रहे हैं. मुझे डर लग रहा था कि इनका पैंट फट जायेगा.

अभिनंदनीजी ने कहा—मैं इस बात का खयाल रखूंगा. आगे निमंत्रण पत्र में नोट छपवा दूंगा कि जिन्हें चरण छूना है, वे कृपया धोती पहन कर आयें.

अब अभिनंदनीजी बिलकुल ठीक थे. मैंने पूछा— कितने 'क्लायेंट' लिस्ट पर हैं ?

उन्होंने कहा—आठ हैं! पर उनका भविष्य निश्चित नहीं है. मैं कमजोर 'केस' नहीं लेता अब.

मैंने पूछा—कभी कोई कठिनाई आयी?

वे बोले—हां आयी. एक साहब का जन्म संयोग से एक अप्रैल को हो गया. मैं तीन साल कोशिश करता रहा कि इनकी वर्षगांठ मनवा दूं. पर मैं निमंत्रण पत्र बांटता और लोग आते नहीं. वे कहते—हमें 'अप्रैल फूल' बनाया जा रहा है. आखिर मैं १०० आदमियों के पास गया और कहा कि ये सचमुच पहली अप्रैल को पैदा हुए थे. तब समारोह हुआ.

मैंने कहा—अभिनंदनीजी, आपको, इतने साल अभिनंदन करते हो गये. यह धर्म भी है और धंधा भी. कबीर आपका अभिनंदन करना चाहता है.

तोतारामजी ने कहा—संतबीर, मेरा क्या अभिनंदन? मेरी तो, 'अभिनंदन एजेंसी' है. पर संत मैं तुम्हारा अभिनंदन करना चाहता हूं. फिफ्टी-फिफ्टी! बोलो?

मैंने कहा—मेरे बाद तुलसीदास ने लिखा है—

हम चाकर रघुबीर के, पटौ लिखौ दरबार.
अब तुलसी का हो हिंगे, नर से मनसबदार!

लौटा तो देखा,

कनछेदी 'एनक्रोचमेंट' साफ कर चुके थे. कहने लगे— कहो साधु, क्या तय किया अभिनंदनीजी से?

मैंने कहा—कुछ नहीं. वे मेरा अभिनंदन करना चाहते हैं—उनकी एजेंसी है. मैं उनका अभिनंदन करना चाहता हूं. कंबल-कंबल में गांठ नहीं बंधती □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोझ

• चंद्रा ओलक

वैसे इस ठंडी और सुस्त सुबह में खुद को ढीला छोड़ कर रजाई में दुबके रहना मुझे अच्छा लग रहा है. सुबह जब मां एक चाय की प्याली ला कर मुझे जगा गयी थीं, तब से ही चिड़ियों का शोर मेरे खाली दिमाग में तेजी से घुसता जा रहा है. चिड़ियों का मेरे दिमाग में संघर्षरत दौड़ते रहना इसलिए भी सुखद लग रहा है कि यों मैं अपने नहीं, चिड़ियों के संघर्ष को ओढ़ कर अब ये दिन आसानी से काट सकूंगा. फिर भी लगता है कि मैं अनावश्यक तौर पर कुछ न कुछ मन में उरेहता जा रहा हूं. यह शायद असंतुलित मन की वजह से हो और तब से हो, जब से रेवा मायके गयी है. रेवा से अलग हुए कुल तीन-चार दिन ही हुए हैं और इतने कम वक्त में ही उसके तनमन की कोई तस्वीर मुझे नहीं मिल रही. क्या वाकया है? शायद मैं उसकी नामौजूदगी में खुश नहीं हूं. मैंने वैसे रेवा से भी कहा था कि मायके में उसे भी कोई खुशी नहीं मिल सकती. लेकिन कल उसने आने को फोन कर के बताया था कि वह मौसा के यहां पूना जा रही है और खुश है. मायावी, साली! झूठ भी कनवे किया, तो इनडायरेक्ट!

और अग्नि ने जब यह बात मुझ तक पहुंचायी, तो मुझे रेवा पर दुगुना गुस्सा हो आया. क्या यह बात वह किसी तरह सीधे मुझ तक नहीं पहुंचा सकती थी? और तब से ही मैं अपसेट हूं. साली, बेवफा! फिर कल शाम जब मैं अग्नि के यहां खुलासा जानकारी लेने गया था, तो मेरे मन में था कि मैं वहां से सीधा रेवा के मायके जा कर उसका पूना जाना रोक दूंगा और उसे बांह से घसीटता हुआ ला कर इस घर की कोठरी में डाल दूंगा. पर मुझे खुद पर हैरानी हुई थी कि अग्नि से सब कुछ जान कर भी मैं कैसे उस बात को पचा गया था. और मेरे पास बचा रह गया था एक अशांत कौतूहल. फिर मैंने खुद को तसल्ली दे ली थी कि अच्छा हुआ, सिर से एक बोझ टला. इसलिए भी कि मां इन दिनों अस्वस्थ थीं और कायदे के मुताबिक घर के काम का बोझ रेवा के सिर होना चाहिए था, जब कि वह देर तक बिस्तर में पड़ी रहती थी. रेवा से माथा खपाने का नतीजा होता, आपसी किचकिच.

अब सोच रहा हूं, एक तरह से यह अच्छा ही हुआ कि रेवा मेरी ओर से हमला किये जाने के पहले ही इस संबंध हर चीज को तोड़-फोड़ कर चली गयी. नहीं तो इस वक्त भी मैं उसे उसकी सुस्ती पर लताड़ रहा होता, या वही मेरे बिस्तर में घुसे होने पर मुझे कोस रही होती, या बिस्तर से खींच कर गुसलघर में धकेल रही होती. और इस बात पर हाथापाई तक की नौबत आ चुकी होती. मैं उसे धमका रहा होता कि वह चाहती है, ऐसी ठंड में निमोनिया पाल लूं. और वह कहती— निमोनिया नहीं, दलिद्दर पालो तुम... और मैं कहता—पालूंगा! जाओ, तुम खुद को संभालो. मेरे खिसियायेपन को भांप कर तब वह मौके का फायदा उठा कर मां को बुला लाती. रेवा जानती है, इस बात पर मां उसकी हिमायत पर उतर आती हैं. मेरे नियमबद्ध और अपटुडेट रहने के मामले में वे दोनों एकमत थीं.

कभी-कभी रेवा पर मेरा हाथ उठ जाता, तो वह मां के लिए अचंभे का बायस बन जाता. वह कहती— अरुण, इस हद तक जाने का परिणाम ठीक न होगा!

किंतु प्रायः रेवा भावहीन हो कर हट जाती थी. बाद में कमरे में जा कर देखता, तो वह आराम से ट्रांजिस्टर बगल में दबोच पलंग पर आत्मलिप्त-सी लेटी होती. मुझसे आंखें मिलाते ही मुंह दीवार की ओर फेर लेती. मैं जल-भुन जाता. मुझे लगता, वह मेरी आत्म-पीड़ा को जैसे पैरों तले रौंद डालना चाहती हो. मैं उसे दिल में गालियां देने लगता. सोचता, अगर मैं ऐसी जड़ आत्मा के साथ जीता रहा, तो मेरी तो जिंदगी ही खत्म हो जायेगी.

चिड़ियों का शोर अब मुझमें जम गया है, जैसे दलदल में कोई पहिया जम जाये. तब काफी जोर लगाने पर वह पहिया खिसकता है. अपने ख्यालों को यहां से खिसकाने में मुझ पर भी काफी जोर पड़ रहा है. काफी पीछे जाना पड़ रहा है. तभी कब से कह रही है, अरुण, खाना ठंडा हो रहा है! मैं पीछे सिगरेट मुट्ठी में दाब लेता हूं. चौंक जाता हूं. कहना चाहता हूं, खुद ही ले लूंगा, मां क्यों टंगी पड़ी हैं? पर कहता नहीं. जानता हूं, खुद क्या लूंगा! और मां का काम टंगा रहेगा. हाथ-मुंह धो कर जल्दी खाने बैठने का सोच लिया है.

खाने लगा, तो चाहा, मां को साथ शामिल कर लूं. मां शब्द गले तक आया भी, पर मां दालान में जा बैठी थीं. खाने के बाद एक बार नजर दालान में गयी. मां ऊन की उधेड़-बुन में जुटी थीं. हठात् जैसे किसी ने मुझ पर कोड़ा फटकारा. यह रूप क्या मेरी मां का है? मेरी मां ऐसी कब हो गयीं? मुरझायी रंगत, आंखों के गिर्द झुर्रियों का जाल. नहीं, मेरी मां ऐसी कदापि थी ही नहीं. थीं रंगभरी. रूप और गरिमा से पूर्ण. साथ में बुद्धि की जागरूकता से चेतन.

दलदल में फंसा पहिया राह पा कर धीरे-धीरे खिसकने लगा.

मां तब युवा और क्रियाशील थीं. घर के काम के अलावा बाबू के प्रेस के काम में हाथ बंटाया करती थीं. एक बार की बात याद आती है, बाबू को एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोध-ग्रंथ छापने को मिला था. वह किसी विद्वान का ग्रंथ था और मां हिंदी और संस्कृत की जानकारी रखती थीं, इसी भरोसे बापू ने उसे छाप देने की हामी भरी थी. मां ने कंपोजिंग का काम तो अपने ऊपर ले ही रखा था, अब प्रूफ रीडिंग भी अपने जिम्मे ले ली थी. साथ ही स्क्रिप्ट का पूर्व संशोधन भी वही करने लगीं, जैसे शोध-ग्रंथ उस विद्वान का न हो कर मां का अपना हो, जिसमें वह अपने ही जीवनकाल का संपूर्ण इतिहास लिख रही हों.

हालांकि मां के पहले बाबू ने हम भाई-बहन को ही कंपोजिंग का काम सिखलाया था, पर अब सारा काम अकेली मां कर रही थीं. और वह विद्वान संतुष्ट था और बाबू भी, क्योंकि इस अतिरिक्त संशोधन का पारिश्रमिक भी बाबू को अलग से मिलना तय हो गया था. मां उस काम में जी-जान से जुटी थीं.

अन्नि और मैं उन दिनों हाई स्कूल में आ गये थे. मां को हमारे ब्रिलियंट होने का विश्वास हो चला था. वह दो-तीन बार मुझे कुछ लिखने को दे भी चुकी थीं और मैंने उनका विश्वास बरकरार रखते हुए उस काम को खूबी से निभाया था. हम भाई-बहन इस तरह अपनी इमेज बनाने लायक माने जाने लगे थे.

जिस दिन की विशेष घटना यहां दे रहा हूं, उस दिन इत्तिफाक की बात ही समझो कि मैं ज्योमेट्री का एक थ्योरम सुलझाने में लगा था. कुछ संशोधित पन्ने मां ने अन्नि को उतारने को कह दिया. पन्ने अन्नि जल्दी-जल्दी घसीटने लगी. और यह भी इत्तिफाक ही था कि उसी शाम अन्नि को एक सहेली के यहां जाना था. और लिखे हुए पन्ने वह संशोधित स्क्रिप्ट के नीचे ही दाब कर चली गयी. और तीसरा संयोग भी उसी दिन आन पड़ा कि शाम मां को भी घर से बाहर काम था और लिखाई का काम देखा गया अगले दिन जब कि मैटर फाइनली प्रेस में जाने वाला था और मां ने तब पाया कि उसमें काफी त्रुटियां हैं. अशुद्धियां तो खैर थीं ही, लिखाई भी यों घसीटी गयी थी कि पढ़ी ही नहीं जा रही थी. पढ़ते हुए शुरू में तो मां ने विवेक से काम लिया, पर बाद में बस शिकायत ही नहीं, इल्जाम-सा बन कर बाबू तक जा पहुंचा. अन्नि की तलबी हुई और पूछा गया कि यह क्या लिखा है उसने?

अन्नि कोई उत्तर न दे सकी, महज घूरती खड़ी रही. दोबारा पूछा जाने पर वह ढिठाई पर उतर आती बोली—यह ये है और वो वह. .

ऐसी ढिठाई पर अनायास ही मां गरजीं. कहा—खुद ही गढ़ लिया यह ये है और कागज पर घसीट दिया.

अन्नि वैसी ही ढीठ बनी खड़ी रही.

—और यह लिखाई? लिखाई का इश्तिहार जैसे मां बाबू के पास उठा ले गयीं.

—पर पूछा तो होता, अन्नि? बाबू बोले.

—अगली बार खुद ही कर लेना आप. . . .!

अन्नि विरोध से भर उठी. विरोध में फेंकी हुई उस बात पर मां की आंखें अंगारे जैसी फट उड़ीं और सीधी बहन पर ही जा गिरीं. लेकिन बहन का कमाल भी तब देखने काबिल था कि वह मां पर दांत पीसने से बाज नहीं आयी.

देख-सुन कर बाबू ने बहन को इशारे से पास बुलाया. बहन दो कदम बढ़ी और रुक गयी. बाबू ने संकेत से ही सुझाया—जाओ, माफी मांगो.

माफी मांगने वाली बात को बहन ने जैसे दिल से कतई काट दिया. उसकी ढीठ नजरें मां से कुछ दूरी पर किंतु मां के ही अगले आदेश पर टिकी थीं.

—तुम्हें शऊर कभी नहीं आयेगा! बाबू ने जैसे फिर बहन को राह दी हो. पर बहन टस से मस नहीं हुई. अड़ियल टट्टू जैसी जहां थी, वहीं बनी रही.

—लड़की, अभी वक्त है, सीख सकती हो! बाबू ताड़ना दे बैठे.

उत्तर में बहन और उद्दंड हो गयी—वक्त कभी नहीं आयेगा. बहन अदम्य साहस से भर गयी.

मां दरवाजे से बाहर जा रही थीं, पर सुन कर वहीं ठिठक गयीं. बहन के दोनों कान ऊंचे खींच कर झटकते हुए बोलीं—वक्त आयेगा, लड़की! और बहन के खिंचे हुए कान बहन के ही हाथों में थमाते हुए मां ने बहन से मुर्गा बन कर कोने में खड़ा होने को कह दिया और साथ ही आदेश दिया कि वह साठ

● विद्याव्रत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक की गिनती पांच बार करे और पूरे पांच मिनट तक इसे दोहराते रहने के बाद मां के पास आये, तब वह फैसला करेंगी कि वक्त कभी आयेगा या नहीं.

मां के आदेश का पालन करने के बाद चेहरे पर वही खामोश उद्दंडता ओढ़े बहन मां के सामने जा खड़ी हुई.

अब यह दूसरी चपत थी, जो बहन ने उपेक्षापूर्ण ढंग से मां के मुंह पर अपनी चुप्पी द्वारा थोपी थी.

तिलमिला कर मां ने बहन की उद्दंडता को जैसे कुचल ही डाला. सामने ही दीवार पर रैकेट टंगा था. मां ने उसे बहन पर खींच फेंका. खौफनाक धमाके से रैकेट दीवार से जा टकराया. बहन पर मां रैकेट का प्रयोग दोबारा करतीं, पर बरामदे के सामने से लोग आ-जा रहे थे, इसलिए मां तड़प कर रह गयीं. बोलीं—— लोगों की शर्म भी तुम्हें कहां है, लड़की! इतनी ढीठ हो कि उलटा लोगों को ही शर्मा दो तुम!

मां की बात बहन के कानों पर तब सिर्फ जूं बराबर ही रेंगी थी और वह थोड़ा-सा सरक कर दरवाजे की आड़ में हो गयी थी. मां ने उसे पास बुलाया, तो बस जरा-सा हिली. मां चिल्ला गयीं—— और पास!

बहन की सवालिया आंखें उधर देखने लगीं. जैसे पूछा हो और कितनी पास?

एक करारा हाथ मां ने तब बहन की जंघों पर आजमा कर बताया——यह देखो! इतनी पास! हारी हुई मां ने तब बहन को जहां खींच कर छोड़ दिया, बहन भी वहीं टांगें ढीली छोड़े निश्चित खड़ी रही.

रैकेट फिर मां के हाथों में झूलने लगा——ढीली टांगें छोड़ने का मतलब तुम जानती हो?

बहन ने अवज्ञा से सिर हिला दिया, जैसे नहीं जानती और जानना चाहती भी नहीं.

——तुम्हारी यह ढिठाई मैं खत्म कर दूंगी! मां कड़ाई से बोलीं और बाबू को भी अपनी कड़ी नजरों का अहसास करा दिया.

इस तरह बात बढ़ गयी, तो बाबू उठ कर बहन के पास आये बोले—— माफी क्यों नहीं मांग लेतीं?

बहन की आंखें पहले बाबू पर उठीं, फिर उसी मशीनी क्रम से मां पर घूम गयीं—— माफ कर दें!

मां ने सवाल किया —— बताया तो नहीं तुमने, काहे की माफी मांगी है?

वैसी ही गुमगुम खड़ी रही बहन. फिर मां की कई हुंकारों के बाद मुंह से बोल फूटा—— माफी मांगी है, बस!

इस पर मां ने फिर बाबू को देखा और बाबू उठ आये—— ओ लड़की, होश में आओ. . . !

पर लड़की होश में हो तब तो! वह मां पर गड़ी हुई नजरें बाबू पर गाड़ बैठी.

——होश तो मैं उसे दिलाऊंगी और ख्याल भी रखूंगी कि इसे होश की याद रहे कि कुछ है, जिसके लिए इसे माफी मांगने की जरूरत पड़ेगी.

पर मां की इन बातों का असर नहीं हुआ और मां ने उसे दूर ठेल दिया——जाओ! साथ ही रैकेट वाला हाथ भी कस कर अग्नि पर छोड़ दिया. रैकेट अग्नि की कनपटी से जा टकराया. कनपटी पर हाथ धरे-धरे अग्नि सामने से निकल कर दूसरे कमरे में चली गयी.

फिर प्रॉबलम साल्व करना बस का नहीं रहा. कमरे में जा कर देखा, अग्नि उसी तरह कान पर हाथ धरे खड़ी है. कान के पास से बहता लहू कानी उंगली पर जम गया है और मुझमें दहशत-सी भर रही है.

वैसे दहशत परसों भी हुई थी. . . . रेवा को झापड़ देने के बाद. वह झापड़ खाते ही तिलमिला गयी थी और आंसू आंखों में भरे हुए गाल सहलाती एकटक मुझे देखने लगी थी. रेवा को झापड़ खाना पड़ा था, मां की बराबरी करने पर. यह तो कहो, मैंने उस का गला ही घोट डाला. साली मेरी बहन के बारे में मुंह खोल बैठी थी—— जैसे आप की लड़की आप लोगों की सख्तियां न सह कर चली गयी है, वैसे बहू भी जा सकती है!

साली बड़ी आयी बहू कहीं की! खैर, आखिर चली ही तो गयी. ठीक है, जाये. मैं निवृत्त ही तो हुआ हूं. अब बोझ या डिप्रेशन तो नहीं है. हंस-गा सकूंगा. तब कहीं कुछ ऐसी चीज निकलेगी, जिसे पढ़ कर कोई कहेगा कि हां, कुछ बात तो बनी! और. . .

उसके रहते तो धौंस-पर-धौंस रहती थी. यह सूट पहनो, तो साथ वह शर्ट हो. यह पैंट पहनो, तो वह बुशर्ट हो! यह कमीज पहनो, तो वह टाई हो! और पूछो-जरूरत? तो कहेगी—— मैच और फैशन. कबाड़ा करती रही है. मेरी फीलिंग्ज का, दिमाग का. जिंदगी हंसने के लिए है, गाने के लिए है, पर उसने रोना ही ध्येय बना लिया है. सोचा होगा, रोने से डर कर तान पर नाचने लगूंगा. उसके गीत गाने लगूंगा.

गीत की याद से उठा हूं और प्लेयर पर रेकार्ड लगा दिया है. रेकार्ड मंथर गति से घूमता ध्वनि पैदा कर रहा है——'**छोड़ो बेकार की बातों में कहीं बीत न जाये रैना. . .**' रेकार्ड बजने दे कर रसोई से काफी का थरमस उठा लाया हूं. मेरे लिए मां बना कर धर देती हैं. पीते समय पता नहीं क्यों मां की जगह रेवा की याद आ रही है. यह शायद रेकार्ड का असर है. उन शब्दों का——'**कुछ तो लोग कहेंगे लोगों का काम है क-ह-ना**'

रेकार्ड उठाने लगता हूं पर पाता हूं, मां आ कर खड़ी हैं. वह दोबारा उसी रेकार्ड को लगा कर जूठे बरतन उठा ले गयी हैं. रेकार्ड खत्म होने पर उसे बदल कर दूसरा धर देता हूं. पर याद में मां और रेवा की पर्सनैलिटी कौंध जाती है. उलटा कर के दूसरा पट धर दिया. शब्द उठ आये——'**यह क्या हुआ? कब हुआ? क्यों हुआ?**'

जूठे बरतन धो कर मां फिर दालान में चली गयीं. इधर पीठ दिख रही है मां की. उधेड़-पट वैसी ही जारी है. पता नहीं क्यों मां के मेहनती स्वभाव पर पहली बार एक दार्शनिक की तरह सोचने का मन हो आया है. याद आया, मां ने कभी कहा था——अरुण, तुम्हें ऐसी आदत बना लेनी चाहिए, जो कठिन दिनों में काम आये, जिससे तुम्हारी पहचान हो सके और तुम आत्मतुष्टि पा जाओ.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मां से पूछना चाहता हूं, आत्मतुष्टि क्या खाली हाथों होती है? और मां को [illegible] चाहता हूं कि दस रुपये माहवार की एक महरी भी उन्हें लगा कर नहीं दे सकता!

—पर तुम सिगरेट पी सकते हो? किसी दोस्त ने कभी सवाल किया था. और मैंने कहा था— देयर आर सर्टेन थिंग्ज व्हिच यू कांट सब्लीमेंट. आज अपनी वही बात छिछली लग रही है. कोई संकल्प लेना चाहता हूं. तभी हाथ पोंछती हुई मां आ जाती हैं और एक रेकार्ड पर साउंड बाक्स धर कर रसोई में चली जाती हैं— **'चिनगारी जब भड़के. . .'** सेलुलाइड पर उतरे हुए शब्दों को सुई की नोक चुन-चुन कर मुक्त करती जा रही है जो आ कर सीधे मेरे सीने पर जमते जा रहे हैं—**'जो बाग बहार उजाड़े, उसे कौन सजाये. . .'** मां को यह गीत अच्छा लगता है. रेवा भी इसे बहुत सुनती थी. मैं अपने बारे में नहीं जानता. पर सोचा हूं कि लोगों की पसंद अलग-अलग क्यों होती है और मेरी सारी आदतें इस सोचने न सोचने के बीच क्यों जुड़ी हुई हैं? जैसे मैंने पेंटिंग शुरू की, छोड़ी, फिर शुरू की, नौकरी का भी वही हाल कि छोड़ी, फिर की, फिर छोड़ी और अब सिर्फ ट्यूशनों पर हूं. यही हाल मेरी शिक्षा का रहा, जो अभी तक अधबीच में लटकी हुई है. फिर उस मस्तूल को वहीं लटकता छोड़ कर मैं ग्लैमर की दुनिया की ओर बढ़ गया. मैंने लड़कियों से दोस्ती की, छोड़ी, की और तब एक जगह मंगनी का सहारा ले लिया. मंगनी की, छोड़ी, फिर की, फिर छोड़ी और आखिर एक मंगनी शादी की शक्ल अख्तियार कर गयी. उसके बाद पता नहीं क्या हुआ, कैसे यह पतझड़ आया कि बाग-बहार सब मझधार में डूबी नाव जैसा हिचकोले खाने लगा.

रेकार्ड की पंक्तियां अब मेरे दिमाग में भरसक एक सैलाब बहा लायी हैं, जिसे अपने ख्यालों से दूर ठेल रहा हूं. पर लगता है, हिचकोले खाने लगा हूं और पानी आंख, नाक, मुंह, कान, सब कुछ ढांपे दे रहा है. फिर भी, वे शब्द हैं जो मेरी चेतना पर ठोकर दे रहे हैं. मैं तन्मय-सा पड़ा हूं, जैसे प्रलय सहने का आदी होऊं और समवेत राग से भी एकात्मकता स्थापित कर ली हो मैंने और गीत के बोलों में जहां कहा है— **'आंधी जो नाव डुबोये, उसे कौन बचाये. . .'** वहां गीतकार का आशय नाव डुबाना वर्जित, बताने से है. और उस वर्जन की थ्योरी में गहराई तक जाते बीच मैं फिर दूसरे रेकार्ड के बोलों में धंस जाता हूं. सोचता हूं, दुनिया में कितने ख्याल, कितने मत, कितने आदर्श हैं? कोई किन-किन को पाले! और यह गायक जो अब कह रहा है—**'छोड़ो यह न सोचो. . .'** तो वह यह कहता प्रतीत हो रहा है, सोचो और खुद को काबू में रखो. बुरी आदतों से बचो, दोस्त! इनके पंजे बहुत पैने होते हैं और तुम उनसे छुटकारा नहीं पा सकते.

मां रेकार्ड से साउंड बाक्स हटा कर चली गयीं, तो अचानक सोचा, मां की भी क्या कुछ आकांक्षाएं थीं! शायद थीं, जो बाबूजी के हाथों पूरी नहीं हुईं और उन्होंने [illegible] बहन-भाई पर लगा कर हमें गढ़ना चाहा था. पर भीतर का सारा खूंखार बल लगा कर भी वह कल्पनानुकूल हमारा कोई ढांचा तैयार कर नहीं सकी थीं. अभी तो उस दिन रैकेट की चोट खा कर जब बहन दूसरे कमरे में चली गयी, तो मैं भी गहरी अवहेलना से भरा, बिना मां से आंख मिलाये ही तमतमाया चेहरा लिये अन्नि के पास चला गया था, और सीना फुला कर मैंने पूछा था— बता, कहां लगी है? बाद में दबे पैरों जब मां उसे देखने आयीं थीं, तो मैंने मां न देखें, ऐसी सतर्कता और फुरती से अन्नि का हाथ वापस वहीं कनपटी पर धर दिया था. बस, अपनी अवज्ञा मैंने इसी ढंग से जाहिर कर दी थी. मैं मां को जानने देना नहीं चाहता था कि उनकी करतूत क्या रंग लायी थी. मां जब पूछने लगीं कि वह दवा कहां रखी है, तब भी मैं हिला-डुला नहीं और गुस्से में फूला रहा. वास्तव में यह गुस्सा मुझे बहुत पहले से आ रहा था. किसी पर निकालना चाह रहा था. पर समझ में नहीं आ रहा था कि गुस्सा निकालूं किस पर. शायद अन्नि पर भी बेहद गुस्सा था मुझे कि ढीठ, कंबख्त मार खाये जा रही है पर पलट कर कहती नहीं कुछ? बुद्धू कहीं की! और अब मां को देखा, तो उन्हें ही घोंसना चाहा—क्या हुआ जो बेवकूफ है बहन! है तो बच्ची ही! और अगर कोई मूर्ख हो, तो क्या उसे मार ही डालना चाहिए?

मां को तब मैंने कैलेस और हृदयहीन कहा था. मन में बहुत-बहुत कुड़कुड़ाया भी था— बड़ी आयी हैं मारने वाली! भला मुझे कोई इतनी बेदर्दी से पीट कर देखे! एक के बदले चार ठोंक कर अक्ल दुरुस्त कर दूं! ऊपर से कहूं— जा, दूर हो जा आंखों से! पर मैं बहन जैसा अड़ियल कभी न बनूं. बाप रे! यह कोई अपमान जैसा अपमान है बड़े का कि वह तो तुम्हें झुकाना चाहता है, सबक सिखाना चाहता, पर सबक उल्टा उसे ही सीखना पड़ता है और वह भी एक ढीठ लड़की से!

★ ★

मां तेल गरम कर लायीं—बता, कहां लगी है चोट? मैंने और अन्नि ने तब भी अपना अबोलापन नहीं छोड़ा. मां तेल की कटोरी फर्श पर धर कर घबरायी-सी पास आ गयीं— दिखा भी! उनकी आवाज कांप गयी. शब्द लड़खड़ा गये. मां जान गयी हैं, लड़की का कान गंभीर रूप से छलनी हो गया है और तात्कालिक उपचार से ही अब कुछ हो सकता है. वह गयीं और दवा भी ढूंढ़ लायीं. बहन को बिस्तर पर लिटा दिया गया. उसका कान घुटने पर धर कर उसमें गरम तेल डाला गया. फिर सेंक दे कर कान पर पट्टी लपेट दी गयी. गरम-गरम दूध पीने को दे कर उसे सुला दिये जाने का यत्न होने लगा. पर इन सारी क्रियाओं के दौरान बहन की आंखें निरंतर चूती ही रहीं. जुबान चुप रही. मां जैसे-जैसे बहन के तपे हुए गाल सहलातीं, बहन के होठ उतने ही वेग से कंपकंपाते और फड़फड़ाने लगते.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मैं खुश और [illegible] था कि ऐसी मां की यही उपयुक्त सजा है. ठीक उसी क्षण मां के होंठ भी फड़फड़ाये थे— इतना झेला, पर माफी नहीं चाही! पता नहीं, सहसा इन शब्दों की कैसी प्रतिक्रिया बहन पर हुई कि वह होंठ खोल कर माफी मांग बैठी —सॉरी अम्मी!

बहन सो गयी, तो मां बहन के उन शब्दों पर टीका करती बोलीं— देख, अरुण, आज इसने मुझे तो कह दिया कि आगे से खुद ही लिख लेना, पर कल किसी और को नहीं कह सकती . क्या नौकरी में कहीं ऐसा कह सकेगी?

मैं जला-भुना बैठा था. तत्काल कहा—नौकरी की जरूरत ही क्यों पड़ेगी?

मां हैरानी में मुझे घूरने लगीं—जरूरत क्या दुनिया में ढूंढ़नी पड़ती है?

—पता नहीं. पर उसे कमाने नहीं जाना होगा. जरूरत होगी, तो कोई और जायेगा, जो जिम्मेदार होगा.

—जिम्मेदार? हां, ठीक है. पर पढ़ना-पढ़ाना, सीना-पिरोना. . . ?

—ऐसी सेवा आजकल कोई नहीं मांगता. जिसे रोटी तैयार मिलेगी, वह और कुछ नहीं चाहेगा. मैंने मां की बात काट दी.

प्रतिक्रिया स्वरूप वह बोलीं — फिर यह रोटी बीच में कैसे आ गयी?

मां की रुसवाई पर मैं और झल्ला आया. कहा— क्योंकि सिखाई गयी थी. जरूरत थी. मरना कोई नहीं चाहता.

मां भी आश्वस्त हो आयीं— तब जाने दो, यही ठीक है.

मां का स्वर ठंडा पड़ जाने पर मैंने कहा— और जो सीखने को कुछ रह भी गया, तो जरूरत के वक्त कुदरत सिखा ही देगी. अगर बहन जिंदा रही तो!

संतोष और संजीदगी मां के चेहरे पर उतर आयी. बोलीं— यह तो अच्छी बात है कि तुम बहन के प्रति फर्ज निबाहने के बानी हो गये हो. भले-बुरे के प्रति भी चौकस हो. प्रगतिशीलता के ही चिह्न हैं ये कि आगे बढ़ो और बोझ उठाओ. यही सीखा होता, तो हमें तो सिखाना ही न पड़ता. मां आंखें पोंछने लगीं.

पता नहीं क्यों सहसा मां पर मुझे करुणा हो आयी. कहा— आपसे सीखे कोई क्या? हर वक्त आप अपने कागज-पत्र के फैलाव में ही तो लगी रहती हैं.

मां ने जवाब दिया— मैं तो बिना पूछे ही बताने को तैयार रहती हूं, बच्चे! और कहती ही रहती हूं कि सुधरो, मेहनत का महत्व समझो.

उन दिनों की मां की बातों का प्रभाव आज भी मुझ पर है. पर उन पर चलना आसान नहीं. संसार में अनगिनत रंग हैं, मेला है और संगीत भी.

इसीलिए परसों , नहीं नरसों, या उससे पहले दिन, जिस रोज रेवा झगड़ कर गयी थी, मैंने एक कॉफी सेट खरीद लिया था. पैक करा कर घर लाना भर था, अतः रेवा को भी साथ ले लिया. जब कीमत चुकता कर रहा था, तब पैक होते सेट को देख कर रेवा मेरे कान में फुसफुसायी—क्या जरूरत है इसकी? मना कर दो. अब भी मेहनत की कमाई को ठीकरों में क्यों डालते हो?

जी चाहा, सरे आम रेवा को उसकी फूहड़ प्रवृत्ति के लिए मलामत करूं कि कम-से-कम दूसरों के सामने तो उजड्ड किस्म की बातें न किया करे! और देखो कि कूड़ मग्ज कितनी है कि ऐसे ओरियंटल पीस को मिट्टी का ठीकरा बता रही है! इतने पर भी मैंने रेवा का लिहाज किया और सिर्फ घर जा कर ही लताड़ा कि आइंदा चार जनों के बीच बेहूदापन न बिखेरा करे.

रेवा चली गयी, तो मैं बाद में भी तड़फड़ाता रहा. साली कैसा छिछला आरोप धर गयी है! कैसा भरपूर उलाहना दे गयी है! एक बार ऐसा उलाहना मां को बातों-बातों में मैंने दिया था, तो मां अपने हिस्से का खाना भी मेरी थाली में धर गयी थीं. वे दो चपातियां तब किसी तरह मुझसे खायी नहीं गयी थीं. तो भी मां ने पछतावा ही जाहिर किया था—खा लो, मैं अभी और बना लूंगी. और मेरे उदासीनताभरे चेहरे पर या होंठों पर शायद ऐसा कुछ फूट आया था जिसका अर्थ था कि जब किसी को पता चले कि घर में कुछ खाने को नहीं, तो उसे भूख ही नहीं लगती.

मुझे याद है, मेरी इस बात ने मां को बहुत-बहुत रुलाया था और अपने कथन के जस्टिफिकेशन के दौरान मैंने कहा था— इस घर में ढंग से कभी कुछ पका भी है! मां के उसी दिल दुखाने का शायद बदला चुकाया है आज रेवा ने. पर मां ने कभी आज तक रेवा की तरह न कुछ कहा, न किया, बल्कि जब ऐसी स्थिति आयी, पता चला कि आज मां का उपवास है, आज वह अस्वस्थ हैं, जो रेवा यह कह गयी कि जब खाने वाले ही नहीं रहेंगे, तो भूख कौन शांत करेगा? साली फूहड़! मतलबी!

कल उसी मतलबी के यहां, मैं गया था. जिन स्थितियों में मैंने बहन को अपने जाने की इत्तिला दी थी, उन्हें समझने या मन ही मन उनका पर्यवेक्षण करने की कोशिश भी की थी और चाहा था कि असल बात पर आ कर अग्नि से कुछ मदद मांग लूं. तभी अग्नि ने कहा—अरुण, तुम और कुछ करो या न करो, पर मां के लिए एक कहारिन तो जरूर रख लो.

बात के अनुमोदनार्थ तुरंत सिर हिला कर स्वीकृति दी— बस, इसी महीने लो! वैसे मैं ढूंढ़ भी रहा हूं और कुछ पशोपेश के बाद बात का अगला हिस्सा भी पूरा कर दिया—ऐंड बाई द टाइम, मेरी ये तंगी भी दूर हो जायेगी.

तंगीवाली बात पर अग्नि चौंक उठी और मैं झेंप-सा गया. पता नहीं क्यों ऐसा है कि जब बहन चौंक जाती है, तो मैं भी सतर्कता बरतने लगता हूं. शायद इसलिए कि अब हम छोटे नहीं रहे. पर ऐसा कुछ है, जो चौंकाता है और मैं संभल जाता हूं. ऐसी दुविधा का विस्तार वैसे कभी बहन की ओर से आया नहीं. स्वेच्छा से बहन ने कभी मेरी कोई मदद नहीं की. वैसे भी मैंने कभी कुछ मांगा हो और बहन को उ- लना पड़ा हो, तो उसे परायेनाम या बेमन का ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा जा सकता है. प्रायः वह मुझसे उलझी ही ज्यादा है. और नीति, ज्ञान सिखाने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी नहीं—जैसे देखो, अरुण, तुम बचत करना सीखो.

—हमेशा सोचा है. मैं अटपटा-सा महसूस करता कहता हूं पर पता नहीं क्यों बात रह जाती है. मेरा सिर खुजलाना देख कर वह और उकेरने लगती है— बात रह जाती है, या कभी किसी की हथेली पर कुछ धरने का स्वाद चखा ही नहीं, इसीलिए जायका आजमाने की बात भी सोच ही नहीं सकते?

बात का सिरा मैं भी दूसरे छोर पर ले जाता हूं— कुछ भी समझो; पर अब मैंने सोचा जरूर है. फिर भी मनगढ़ंत-से इस वक्तव्य के बाद पता नहीं क्यों मैं खुद को अग्नि के सामने 'काफी बौना-सा महसूस करने लगता हूं, हालांकि उम्र में अग्नि मेरे बराबर थी भी नहीं, पर उसकी बातें मुझसे बड़ी हैं.

वैसे इस तथ्य को बहन भी जानती जरूर है और जान कर ही कभी-कभी मुझसे हलकी-फुलकी बातें भी करती है. पर उसकी हलकी-फुलकी बातें भी मैं सहज ही गले के नीचे नहीं उतार पाता. तब सोचता हूं कि अग्नि मुझे ज्यादा क्यों नहीं दबाती? क्या इस-लिए कि कहीं यह न सोच बैठूं कि दूसरों को पिलाती रहती है नसीहत का मिक्सचर.

वैसे हम बहन-भाई हलकी-फुलकी बातों के दौरान भी कोई-न-कोई गुत्थी सुलझा ही रहे होते हैं. बहन की राह-तलाश की इन जुस्तजुओं पर अधिकतर मुझे हंसी ही आयी है. इसलिए भी कि बहन नहीं जानती कि वह किस कदर मां के नक्शेकदम पर चल निकली है. वह क्यों चाहती है कि मैं उसके ढंग पर सोचूं? क्या वह आज भूल गयी है कि जब सब लोग उसकी मनमानी के खिलाफ थे, तो अकेले मैंने ही उसकी हां-में-हां मिलायी थी और रजनीश की जिंदगी में प्रवेश कराने के सिलसिले में मैं इसके कितना काम आया था. किस-किस की रुसवाई का घर और बाहर शिकार नहीं होना पड़ा था मुझे? वही सोच पाया था, तब तक वह मेरे भीतर-बाहर की पूरी परिक्रमा करके मुझ पर सवार-सी हो कर हंसने लगी थी—हां, तो भाये, सुनाओ और कोई नयी-ताजा खबर?

—अब क्या तो नयी और क्या ताजा!

—सुना है, रेवा ने तुम्हें एम. एस-सी पूरा करने का मशविरा दिया है?

मैं नकली स्वांग भरता-सा गंभीर हो जाता हूं— पर हो कैसे सकता है यह जब तक ट्यूशंज से ही पीछा नहीं छूटता!

—यार, ट्यूशंज को क्यों कोसते हो? यह तो बढ़िया न्यूज है कि ट्यूशंज के साथ-साथ पूरा हो रहा है लक्ष्य भी!

—पर हो कैसे? मैं फिर आधे खुले होंठों पर मुसकान बिछा लेता हूं— या तो खुद पढ़ूं या दूसरों को पढ़ाऊं. पर ये दो-दो सेहरे कैसे बांध लूं?

बहन लापरवाही जताती कहती है— छोड़ो यार, बांधने को दो-दो क्या, चार-चार सेहरे भी तुमने बांधे ही हैं. और ट्यूशन छोड़ने वाली बात से तो खैर खुशी हमें होनी नहीं है. वह खुशी तो उन पैरेंट्स को ही होगी कि जिन्हें हर महीने गांठ से निकाल कर तुम्हें देना पड़ता है. हमारी खुशी तो ट्यूशन बने रहने में ही है.

—वह तो है ही! कहता हुआ मैं सोफे पर बैठा बहन से थोड़ा पीछे हट गया हूं. झटका खा कर हलके स्प्रिंग जैसा कुछ इंच ऊपर तक उछल गया हूं. . . कुछ ऐसे कि अग्नि का हाथ मेरे हाथ में आ गया है. पर अग्नि मेरी मुट्ठी से अपना हाथ छुड़ाती हुई अपनी बात को आसान और साकार रूप दे चुकी है. . . उसकी हथेली फिर मेरे आगे खुल गयी है. इस बार कुछ लंबी हो कर हथेली ऐन आंखों की पलकों को छू रही है— लाओ, फिर कुछ देते हो या नहीं? कहती अग्नि हंसती है और फिर खुद ही मुट्ठी सिकोड़ भी लेती है— यार, हम तो राखी पर भी देखते ही रहे.

मैं पानी-पानी हो जाता हूं. पता नहीं, क्या है जो अंदर ही अंदर अचानक चूर-चूर हो गया है. मेरे आधे होंठ फिर खुल गये हैं. झेंप मिटाने के लिए शायद हंसा भी हूं— बताओ, क्या दूं? फिर हंसता हूं. फिर कहता हूं— कहो, क्या दूं? बताओ, जब होता है, खर्च करता नहीं क्या? पर झेंप जैसे यह कहने पर भी मिटी नहीं. बहन भी झेंप का वैसा नंगा रूप देख कर चुप रह गयी है और एक बार और मुझसे बड़ी हो गयी है. . . शायद दर्द से भर कर, जो न दे सकने वाले जुमले से चू पड़ा है . और एक जज्बा भी उस में घायल पड़ा दिख गया है. फिर कुतरी हुई उसी जगह को दर्द जैसे चाट भी रहा है. . .

फिर, कभी-कभार जो दिया भी है, तो वैसा देना खुद को भी बेतुका ही लगा है. कारण, बहुधा मैंने चाहा है, बहन ही मुझे कुछ दे. और जब-जब बहन के रवैये पर सोचा है, इसी नतीजे पर पहुंचा हूं कि सच, बहन बड़ी ही बेदर्द निकली, हालांकि मैं इस नतीजे की तह में कभी नहीं गया कि वह इतनी बेदर्द हुई कैसे? पर मेरे दिल में दर्द उठा है. कई बार तो चाहा है, यही बात मैं बहन के मुंह पर कहूं. . . . खास तौर पर तब, जब मैं दस-बीस मांगूं और वह इनकार कर दे.

पर मैं कई कारणों से दरगुजर कर जाता हूं जिनमें एक कारण मेरी तंगदस्ती भी है. शायद यही सबसे बड़ा और प्रमुख कारण है, क्योंकि इतनी बातों के बावजूद कल मैं दिन भर वहां ठहरा रहा था और मौके की ताक में था कि कब उससे एक सौ रुपया मांगा जा सके और रेवा को पूना जाने से रोका जा सके. पर वही हुआ कि सवाल किया और वह पशोपेश में पड़ गयी. पसोपेश भी कहां, वह तो सफाचट जवाब ही था, साथ ही नसीहत का एक एक्स्ट्रा डोज अलग. जरा इधर-उधर करते हुए शुरू किया था उसने— सोचो, अरुण, कि चाहे जितना तुम मांग लो और मैं दे भी दूं, पर असलियत और सच्चाई तो यही है न कि बनना अपने लिए तुम्हें खुद ही है.

और मैं तत्काल फट पड़ा— क्या इरेलेवेंट बातें हैं! अग्नि, तुम्हें देना हो तो दो नहीं दे सकतीं, तो इनकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर दो. और बस छुट्टी! कहते-कहते मेरा दम फूल आया था. झुंझलाहट का बवाल एक जलजला बन मुझमें फेनिल जैसी लहरें पैदा कर रहा था. बहन के सारे थोथे आदर्शों को लहरों की लपेट में ले कर मैं पुर्जा-पुर्जा करना चाह रहा था. पर पता नहीं क्यों मेरे सारे वकार या जलजले का कुछ भी असर बहन पर नहीं हुआ था और वह उतनी ही सहजता से, उतनी ही तन्मयता से मुझे फुसलाने का प्रयास कर रही थी—देखो, अरुण, रात-दिन एक कर-करके रजनीश ये पैसा कमाता है. बताओ, उसके ऐसे गाढ़े पसीने की कमाई मैं क्या यों ही बहा दूं?

बहुत बहाया है न जैसे? मेरे अंतर में उबाल फिर उठने लगता है. अन्नि के कथन को ले कर उसके लिए गहरी अवहेलना भी उपज आयी है. चाहता हूं, यह बात उसके मुंह पर दे मारूं. कहूं, अभी कोई आ जाये बाजी खेलने तुमसे, तो देखो कैसे सौ-सौ की गड्डियां तुम्हारे हाथों में नाचने लगती हैं. तब तो गाढ़ी कमाई बहती नहीं न? पर एक सौ से किसी दूसरे का घर बसता है, तो जरूर गाढ़ी कमाई बरबाद होती है. घर बरबाद होता है.

घर से जब भी कुछ मिसिंग पाया है उसने, मुझ पर शक किया है. पीठ पीछे तो नाम भी धरा है मेरा. मुंह पर कहा भी है—देखो, अरुण, मेरी कोई चीज तुम मांग कर लो, तो मुझे खुशी होगी, पर इस तरह. . .

मैं उसकी ऐसी बात पूरी सुनने के पहले ही छि: छि: से भर उठता हूं. कितना छिछलापन है! हद दर्जे की बेहयाई! कितने ही विशेषण मैं मन-ही-मन अन्नि को दे डालता हूं— तंगदिल ! झूठी! फरेबी! फ्रॉड ! मैं खुद को ऊंचाई पर रख देखने लगता हूं कि विचारों की दृढ़ता में मैं उससे कितना ऊपर हूं और और अधिक ऊपर उठ कर दिखा सकता हूं. ऐसा न होता तो मैं रजनीश का दिल न जीत सकता. मैं भूत-काल में रजनीश के प्रति किये अपने स्वस्थ प्रयासों का लेखा-जोखा करने में डूब जाता हूं. टटोलने पर इतना कुछ मेरी मुट्ठी में आ जाता है कि चाहूं तो विश्वास से अब भी जता सकता हूं कि मैं उनका कितना बड़ा खैरख्वाह हूं.

पर यह बहन कितनी एहसान-फरामोश है! मुझे सिखाती है— अरुण, जिसने मेरे लिए इतना किया है, उसके लिए मुझे भी तो कुछ करना है!

इसी बहन के लिए एक दिन मैंने मां से कहा था—वह करेगी क्यों, जब कि करना नहीं पड़ेगा?

मां अपनी बात पर डट गयी थीं— करेगी कैसे नहीं ?

—जब घर वाले होंगे, तो करना ही पड़ेगा!

—घर वाले वैसे होंगे ही नहीं, जो जबरन करवायें!

—तब तो और भी करना धर्म है!

—धर्म क्या है, क्या नहीं, यह भी तो सोचने की चीज है.

तभी धीरे से अन्नि ने मेरे आगे चाय की प्याली धर दी. शायद रजनीश को चाय दे कर आयी थी. धीरे-से मेरे गले की टाई को ढीला कर के फुसफुसायी—इस टाई को इस वक्त तो निकाल ही लो तुम, घर जा कर चाहे पहन लेना.

मैं चकित-सा अन्नि का मुंह ताकता बैठा रहा. तब उसी ने कहा— तुमने उससे पूछ लिया होता, तो उसे कितनी खुशी होती!

—उससे नहीं, पर तुमसे तो पूछ कर ली थी. मैं फिर खौल उठता हूं.

वह फिर कहती है— मान लो, अचानक कभी इसी टाई की रजनीश को जरूरत पड़ जाये और वह इसे ढूंढ़े, पर यह नहीं मिले तो ?

—क्या बकवास है ! टाई गले से अलग कर के उपेक्षा से दूर फेंक देता हूं— सीधे कहो टाई चाहिए.

मेरी फेंकी हुई उस टाई को और फिर मुझे देखती हुई बहन खड़ी रही. मुझे घूमते देख कर वह मुड़ी—अरुण!

मैंने अन्नि की ओर नहीं देखा. पर बिना देखे भी यह महसूस किया कि वह मुझे असलियत की ओर खींच रही थी. एक सीधी लीक पर. फिर भी पता नहीं क्यों अन्नि की बात मुझे सीधी नहीं लगती. अन्नि को भी शायद पता नहीं चलता होगा कि मुझ पर उन दिनों का कितना बोझ अब भी है जिसे कभी मैंने अन्नि का पक्ष ले कर पाला था. बाद में पता नहीं उसे किस-किस पर उतारना चाहा था. पर वह उतरा नहीं था. उतरा होता, तो उसका प्रभाव क्यों अब भी मेरे दिल-दिमाग पर होता?

मैं सीढ़ियां उतर कर चला आया था.

और अब चिड़ियों का शोर, जो पूरी तरह दिमाग को ब्लाक कर चुका है. दिमाग खाली ही नहीं हो रहा, हालांकि चिड़ियां अब अपने घोसलों में खामोश हैं. सोच में डूबा मैं अकेला हूं. पर मैं अकेला नहीं था. सामने खड़ी मां कह रही थीं— सुनो, आज जरा एक बार रेखा के यहां चले जाना. . .

मुझे पहली बार लगा कि बोझिल मेरा ही मन नहीं है, दूसरों का भी है. मेरा बोझ तो सिर्फ दूसरों के बोझ का प्रतीक मात्र है, क्योंकि मैंने किसी का बोझ कभी हटाया ही नहीं. फिर भी, एक दिन बिना कुछ सोचे-जाने बहन का बोझ सिर लेने की बात मां से कह दी थी मैंने. पर आज?

मां ने कुछ भी नहीं कहा, पर रेखा का बोझ लेना स्वीकार कर लिया है. वह शायद बोझ का निर्वाह करना जानती है.

—तुमने सुना न? मां दोबारा ताकीद करती दालान में चली गयी हैं. धूप का रुख पलट गया है. ऊन की गुंजलकों को सहेजती मां उधेड़-बुनपट को पिटारी में बंद कर रही हैं. इसके पहले कि एक स्वस्थ सूत्र मेरी कल्पना का भ्रमण करके दूर निकल जाये, मैं उसे कल्पना से खींच कर कागज पर उतारने लगा हूं. □□□

सी ३/३२५ लोदी रोड, नयी दिल्ली-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोमानिया और वेस्टइंडीज की कथा-रचनाओं का विशिष्ट खंड तथा अन्य कहानियां

साथ ही कृष्ण बलदेव वैद के शीघ्र प्रकाश्य नये उपन्यास 'दर्द ला दवा' का एक अंश

'सारिका' की कहानियों के माध्यम से आप देश-विदेश की घटनाओं, परंपराओं, मान्यताओं, जीवन-मूल्यों और सामाजिक तथा मानसिक परिवेशों का जायजा लेते रहे हैं. इस बार अक्तूबर १९७५ अंक में 'सारिका' रोमानिया और वेस्टइंडीज की कथा-रचनाओं का एक विशिष्ट खंड प्रस्तुत कर रही है. साथ ही काफी अरसे के बाद यशपाल की 'सारिका' के ही लिए विशेष रूप से लिखी गयी एक कहानी तथा अन्य कहानियां.

अन्य लेखक—
प्रेमसिंह नेगी, कृष्ण प्रसाद मिश्र, रणजीतकुमार साहा, ज्योतिष जानी आदि.

गर्दिश के दिन — राबिन शॉ पुष्प
और अन्य स्तंभ — कबिरा खड़ा बजार में — हरिशंकर परसाई. लघुकथाएं, कृतियां, विविधा आदि.

सारिका
अक्तूबर १९७५

सारिका के वार्षिक ग्राहकों के लिए विशेष छूट

'सारिका' के प्रत्येक अंक का मूल्य एक रुपया है, किंतु वर्ष भर के लिए वार्षिक शुल्क मात्र दस रुपये है, यानी साल भर में २ अंक मुफ्त। यदि आप दो साल के लिए ग्राहक बनते हैं, तो शुल्क केवल उन्नीस रुपये है यानी दो वर्षों में ५ अंक मुफ्त, हां, तीन वर्ष के लिए शुल्क केवल सत्ताईस रुपये है और इस तरह आप तीन वर्षों का शुल्क एक साथ भर कर ९ अंक मुफ्त में प्राप्त कर सकते हैं.

आपके लिए सारिका की विशेष दरें इस प्रकार हैं:
एक वर्ष — १० रुपये
दो वर्ष — १९ रुपये
तीन वर्ष — २७ रुपये
विदेश में समुद्री डाक से एक वर्ष — २२ रुपये

कृपया यह कूपन जरूरी राशि के चेक / ड्राफ्ट / मनी-आर्डर के साथ आज ही भेज़ दें—

सर्कुलेशन मैनेजर,
सारिका, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बम्बई-४०० ००१

कृपया मुझे / हमें निम्न पते पर एक वर्ष / दो वर्षों / तीन वर्षों के लिए 'सारिका' भेज़ने की व्यवस्था करें.
१० रुपये / १९ रुपये / २७ रुपये चेक / ड्राफ्ट / मनीआर्डर द्वारा भेजे जा रहे हैं.

नाम ....
पता ....
....
....

हस्ताक्षर ....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्बंध

• दीप्ति खंडेलवाल

डिसकोथिक के स्वप्निल माहौल में जब जिस्म जिस्म से लिपट जाते हैं, तो अनीता को लगता है, वह निबंध है— उन्मुक्त, जैसे पहाड़ों से फूटती नदी की जलधारा. अनीता की तरुण देह में भी तो उसी उन्मुक्त, निबंध जलधारा का आवेग है, जो चट्टानों को काट कर बह निकलती है, जो पहाड़ों में से फूट पड़ती है, जो अपनी राह आप बनाती है या जो चलती जाती है तो राहें अपने आप बन जाती है. क्या इस जलधारा को कोई बंदिनी बना सकता है? उन्मुक्तता तो इसका स्वयंसिद्ध अधिकार है. क्यों बंधे यह धारा? सड़ने के लिए, या सूख जाने के लिए ?. . . निबंध धारा के उन्मुक्त आवेग से झूमती अनीता नाचने लगती है. अंगों की थिरकन के साथ उसका मन झूमता है, मन के साथ प्राण. इस देह, मन और प्राण को बेहोशी की एक लय में गूंथ देने के लिए वह पीती है, नाचती है, पीती है. . . होश खो देती है. . . और होश आने पर स्वयं को सोचता हुआ पाती है. . . क्या है यह होश खो देना, यह होश खो देना क्या है?

होश. . .! घुप अंधेरे में जुगनू से बिखर जाते हैं. अनीता इन जुगनुओं के पीछे दौड़ने लगती है. . . जुगनू चमकते हैं, बुझ जाते हैं. . . अनीता की पकड़ से छूट-छूट जाते हैं. . . अंधेरे में इन जुगनुओं को छोड़ कर और कुछ दिखाई भी तो नहीं देता. . . ! कैसा है यह अंधेरा. . . न चांद, न सूरज. . . सिर्फ जुगनू. . . जुगनू! अनीता पलकें झपकाती है. आंखें खोलती बंद करती है, सिर को झटक देती है. . . ये जुगनू हैं, या केवल जुगनुओं के-से वे अहसास, जो सोते-जागते उसके चारों ओर चमकते - बुझते होते हैं और कहां है अंधेरा? धत्! अंधेरा थोड़े ही है, यह तो केवल डिसकोथिक का स्वप्निल माहौल है, जहां अंधेरों में रोशनी की तलाश होती है. . . तलाश रोशनी की. . . ! लेकिन क्या है यह रोशनी ? घुप अंधेरे में फिर जुगनू चमकने -बुझने लगते हैं.

अपनी सुंदर, स्वस्थ, तरुण देह को जीन्स और स्लीवलेस टॉप में कस कर अनीता हाई हील सैंडिल के स्ट्रेप कसने झुकती है, फिर तन कर खड़ी हो जाती है परफेक्ट! ड्रेसिंग टेबल का दर्पण उससे कहता है. स्लीवलेस में उन्मुक्त बांहें, लो-कट में उन्मुक्त यौवन, हाई हील पर एक नाजुक अंदाज में सधे तरुण देह के सारे कोण. . . परफेक्ट ! क्यों छिपाये अनीता इन मोहक उभारों को? क्यों रोके इन बंकिम कटाक्षों को? क्यों दबाये उस मादक मुसकान को ? रूप. . . यौवन. . . प्रकृति की देन है. एक खूबसूरत जिस्म अल्लामियां की कारीगरी का एक खूबसूरत नमूना होता है. इस देन, इस नमूने को सही-गलत, पाप-पुण्य से जोड़ना महज बेवकूफी है. अब आप ही बताइए, पेट भर खाना, नींद भर सोना, इनमें सही-गलत या पाप-पुण्य कहां आता है? फिर मन भर कर जीने में ही क्या बुराई है— केवल इस देह की हो कर जीने में, जो आज है, कल नहीं. आई कीप नो इनहिबिशन्स. . . ; अनीता 'परफैक्ट' कहते दर्पण को चूम लेती है. अपने प्रतिबिंब को अनीता ने बार-बार चूमा है. . . कुछ कहना चाहते प्रतिबिंब को अनीता ने चुंबनों से खामोश कर दिया है. कभी-कभी यह प्रतिबिंब विद्रोह पर उतर आता है. . . कुछ कहने के लिए इस प्रतिबिंब के ओठ फड़कने लगते हैं. . .वे क्षण अनीता के लिए परेशानी के होते हैं. . .लेकिन अनीता कमजोर नहीं है. . .एक. . . दो. . .तीन. . . वह प्रतिबिंब के इतने चुंबन लेती है कि प्रतिबिंब को खामोश होना ही पड़ता है. . . येस, रिमेंबर ! आई कीप नो इनहिबिशन्स! अनीता प्रतिबिंब से जीत जाती है. . . और दर्पण में केवल उसके कोण और उभार प्रतिबिंबित होते रह जाते हैं. क्या इन कोणों और उभारों की दुनिया में जिया नहीं जा सकता. . . ? क्यों नहीं जिया जा सकता? जी तो रही है अनीता. जीने की एक मिसाल यह भी तो हो सकती है !

अनबॉर्न टुमारो ऐंड डेड येस्टरडे व्हाई फ्रेट एबाउट देम इफ टुडे बी स्वीट. . . बीत गये कल और आनेवाले कल की चिंता क्यों, यदि आज मधुर है. . . अनीता सिर्फ आज में जीती है.

आज. . . अक्तूबर के एक रविवार का एक सुहाना सबेरा अनीता को जगाता है. अनीता आंखें खोलती है. . . रिस्टवाच देखती है. . . नौ बजे हैं. सिर्फ नौ? वह ग्यारह तक भी सो सकती है. . . आज का प्रोग्राम तो लंच के बाद शुरू होगा. लेकिन आज जाने क्यों और सोने को जी नहीं चाहता. अनीता बेड पर उठ कर बैठ जाती है. अंगड़ाई लेती है. रेशमी नाइटी में लिपटे अपने खूबसूरत जिस्म को एक भरपूर नजर से देखती है. . . अनीता क्या है? एक सुंदर चेहरा, एक खूबसूरत जिस्म. इस सुंदर चेहरे, इस खूबसूरत जिस्म में जी लेना ही तो जिंदगी है अनीता के लिए! जिंदगी का कोई और अर्थ अनीता की समझ में नहीं आता, वह समझना भी नहीं चाहती. हैंग ओवर-सा है. . . रात कुछ ज्यादा पी ली थी न. . . माथा भारी है. . . कनपटियों में दर्द है. . . फ्रेश नहीं लग रहा. . . ठीक हो जायेगा. . . सिगरेट और कॉफी से बिल्कुल ठीक हो जायेगी अनीता.

—आया. . . काफी लाओ, ब्लैक काफी. . . नो मिल्क, नो शुगर. अनीता आवाज देती है.

——लाई, मिस साब! आया की आवाज आती है.

आजकल अनीता डायटिंग कर रही है. पिछले महीने अनीता के शरीर का वजन तीन पौंड बढ़ गया, तो मेंटल टार्चर हो गया है उसे, यह तराशा हुआ बदन तराशा हुआ ही रहना चाहिए. अनीता तो और वजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक रखने के लिए खाना छोड़ देती है. यह नानी क्यों रोज ही एकादशी करती रहती हैं, यानी कि उपवास! नानी से पूछो, तो पलकें झपका कर कहेंगी— परलोक सुधारना है, बेटी! परलोक! माई फुट! सामने खड़ी जिंदगी में इसलिए रोओ कि मृत्यु के बाद हंस सको. . . हाउ फुलिश ! अनीता को अधिकतर नानी एक फुलिश के अतिरिक्त कुछ नहीं लगतीं.

लाइटर से सिगरेट जलाती अनीता खिड़की पर खड़ी हो जाती है. बाहर धूप बिखरी है. . .गुनगुनी रेशमी धूप. . . यह गुनगुनी, रेशमी धूप जैसे जिंदगी का अहसास है. क्या होती है जिंदगी? एक मधुर ऊष्मा ही न! अनबॉर्न टुमारो एंड डेड येस्टरडे व्हाई फ्रेट एबाउट दैम इफ टुडे बी स्वीट. . . अनीता का जीवन-दर्शन बिल्कुल साफ है—— हथेलियों में भरे पानी जैसा, जिसके आर-पार देखा जा सकता है. . . जिसे जब चाहा गिराया जा सकता है. . . जब चाहा भरा जा सकता है. ताजा हवा का एक झोंका आता है. अनीता के मुख को वह हवा का झोंका जैसे हथेलियों में भर कर चूम जाता है. अनीता आंखें मूंद लेती है. उसका जी चाहता है, सिगरेट फेंक दे और इस हवा के झोंके से लिपट जाये. लेकिन वह सिगरेट नहीं फेंकती. . . गुनगुनी धूप और हवा के ये झोंके अपनी जगह हैं, सिगरेट अपनी जगह.

• संयत भारद्वाज

आया कॉफी लाती है. गुड मार्निंग, मिस साब! आया दांत निकाल कर मुसकराती है. . .एक नकली मुसकान. ऐसे गुड मार्निंग कहना अनीता ने ही सिखाया है उसे. अनीता उसे आया कह कर बुलाती है, ग्रेनी तो उसे बुलाती है—— 'अरे रमेसुरी ऽ ऽ ! धत्तेरी की! 'रमेसुरी' कह कर बुलाओ, तो सारी लिपस्टिक ही बिगड़ जाये. 'आया' कितना सोफिस्टिकेटेड लगता है! ममी भी तो 'आया' कहती हैं. ग्रेनी. . . ममी. . . अनीता. . .

अनीता कॉफी पी रही है. नानी आ कर दरवाजे पर खड़ी हो जाती हैं.——उठ गयी री अनीता, अभी तो सिर्फ नौ ही बजे हैं. नानी के व्यंग में अनीता के लिए कोई धार नहीं है, अनीता को परवाह ही नहीं है.

——हाय! गुडमार्निंग, ग्रेनी! कल सोऊंगी देर तक, आज तुम्हारी खातिर जल्दी उठ गयी. अनीता हंसती है— चलो, ग्रेनी, आज धूप में बैठ कर तुमसे कुछ गप मारी जाये. आज मुझे कुछ फुरसत है. अनीता को आज फेस-पैक लगाना है, नाखून ठीक करने हैं. पूरा एक घंटा लगेगा इसमें. यह एक घंटा नानी के ही साथ सही.

सफेद साड़ी में नानी और गुलाबी नॉयलान की नाइटी में अनीता बेंत की कुर्सियों पर लॉन में जा बैठती हैं. अनीता के फेस-पैक के लेप में से सिर्फ अनीता की आंखें चमकती हैं, बाकी सारा चेहरा उस लेप से ढंक गया है. खासा कष्टसाध्य होता है यह सब. नानी अक्सर कहती हैं— ये तू अपने को ले कर इतनी परेशान क्यों रहती है री? वैसे ही इतनी सुंदर है, और हो के क्या करेगी? अब नानी क्या समझेंगी, ब्यूटी के मामले में अनीता किसीसे हार नहीं सकती. 'द बेस्ट लुकिंग गर्ल' का खिताब उसे ही मिलना चाहिए, मिलते रहना चाहिए.

अनीता नाखून तराश रही है— हां; तो ग्रेनी, सुनाओ कोई किस्सा अपने बैलगाड़ी के जमाने वाला. . . अनीता को जोर से हंसी आ जाती है.

——कितनी बार तुझसे कहा कि मुझे नानी कहा कर. . .ये ग्रेनी-वेनी मुझे अच्छा नहीं लगता! नानी अपनी कई बार की कही आपत्ति को फिर दुहराती हैं.

——अच्छा नानीजी! सुनाइए कोई कहानी अपनी और नानाजी की! अनीता और हंसती है.

——तू चाहे जितना हंस अनीता, लेकिन तू समझ नहीं सकेगी कि हमारा जमाना क्या था, हम क्या थे! नानी की माला फेरती उंगलियां रुक गयी हैं, आंखों में एक भराव उमड़ आया है.

नाखून तराशती अनीता भी रुकती है. नानी की आंखों को देखती है. इस दृष्टि के सामने उसकी हंसी बौनी होने लगती है. . . नानी कहने लगती हैं— तेरे नाना, हीरा आदमी थे, हीरा ! पहली रात जब वे मेरे पास आये, तो डपट कर बोले–एक गिलास पानी दो! मैं कांप गयी. पानी देने लगी, तो गिलास हाथ से छूट गया. तेरे नाना ने झपट कर धरा एक थप्पड़. रोने लगी मैं, तो कलेजे से लगा लिया, आज भी याद आता है, तो. . . ! नानी की आंखों में आंसू से कुछ चमकने लगते हैं. अनीता चाहती है कि 'हनीमून' के इस दुर्लभ प्रकरण पर ठहाका लगा कर हंसे, लेकिन नानी की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आंखों में चमकते उन आंसुओं-से कुछ से उसके ठहाके हारने लगते हैं. . .

—नाना तुम्हें पीटते थे, तो तुम्हें बुरा नहीं लगता था, नानी? पूछती अनीता सोचती होती है कि वह नानी की जगह होती, तो थप्पड़ का जवाब मुक्के से देती. आखिर क्या हक है मर्द को औरत को पीटने का? औरत क्या मर्द से कम इनसान है?

—बुरा. . . नानी का स्वर आर्द्र हो आता है—अपना आदमी मारे, चाहे काटे, अपना आदमी अपना होता है न! तेरे नाना को दूसरी औरतों के पास जाने की आदत थी. मुझे बहुत बुरा लगता था. इस बात पर मैंने बड़ा झगड़ा किया. बहुत रोयी-पीटी. लेकिन अनीता उनके नाम का सिंदूर लगाते मेरा मन शांत हो जाता था. वे मेरे हों, न हों, मैं तो उनकी ही हूं. सोच कर मन को शांति मिल जाती थी. . . भगवान की मूरत के साथ मेरे मन में तेरे नाना की भी मूरत सदा रही आयी. . . आज भी जब उनको याद करती हूं, तो मन में दिया-सा जल उठता है!

अनीता को भी लगता है, जैसे नानी की बुझी आंखों में दिये जल उठे हों. अनीता इन दियों से आंख नहीं मिला पाती. दूसरी तरफ देखती-सोचती होती है, ईम इट! क्या होते हैं ये दिये? यहां तो सिर्फ शोले भड़कते हैं. . . बुझ जाते हैं

—ओ नानी, तुम भी क्या जेट एज में बैलगाड़ियों की बातें करती हो. मालूम है, आवाज से भी तेज सुपर-सोनिक प्लेन बन गये हैं. इनसान चांद पर पहुंच गया है! अनीता के नाखून संवर गये हैं. उन पर पालिश लगाती अनीता सोच रही है. . . इन खूबसूरत नाखूनों वाली उंगलियों को चूम कर संजय कहेगा, हाउ लवली! तो अनीता का सारा श्रम सार्थक हो जायेगा. श्रम ही नहीं, जिंदगी सार्थक लगने लगती है अनीता को, जब उसकी कमर को कस कर कोई उसके कानों में कहता है—ओह, सो क्यूट यू आर!

—आदमी चाहे चांद पर पहुंचे, चाहे सूरज को पकड़ ले, रहने के लिए तो उसे धरती ही चाहिए न! सच बोल, अनीता, इस सारी दौड़ में तेरा जी नहीं घबराता? नानी कई बार अनीता से यह प्रश्न पूछ चुकी हैं. अनीता इसका कोई उत्तर नहीं देती. शायद इसका कोई उत्तर उसके पास है भी नहीं.

—चल हटा, तू सुनेगी थोड़े ही! लेकिन आजकल तू ये काली-काली काफी क्यों पीने लगी है? अरी, काली हो जायेगी ठीक से खायेगी-पियेगी नहीं तो!

—तुमसे ज्यादा गोरी हूं, नानी! अनीता अपना हाथ नानी के हाथ से सटा देती है. अनीता का चिकना गोरा हाथ नानी के झुर्री पड़े उजले हाथों के पार्श्व में कांप-सा जाता है. अनीता इस कंपन को झुठलाने के प्रयास में एक ठहाका लगाती है.

नानी अनीता के हाथ को सहलाने लगती हैं—जानती है, तेरे नाना मेरे रंग के लिए क्या कहते थे? कहते थे—चांदनी लग जायेगी, मैला बदन हो जायेगा. . . ! नानी की आंखों में वे दिये जल उठते हैं. नानी हंस पड़ती हैं. पोपले मुख की इस दंतविहीन हंसी को देखती अनीता को ध्यान आता है, संजय ने अनीता से कहा था—ठीक किसी टूथपेस्ट के एडवरटिजमेंट जैसी हंसी है तुम्हारी! क्यों नहीं मॉडेल बन जातीं! खूब चलोगी! अनीता को जाने क्यों लगता है, नानी की दंतविहीन हंसी के सामने उसकी विज्ञापन वाली हंसी फीकी-सी है. . . और, संजय ने उसकी हंसी नहीं सराही है. . . केवल टूथपेस्ट के विज्ञापन जैसी उसकी दंतपंक्ति सराही है. लो, इसीलिए तो अनीता नानी के साथ नहीं बैठती. . . इतनी कमजोर निरीह, नानी के सामने अनीता खामखाह हारने लगती है. . . हारने कहां लगती है. . . वह तो यूं ही जरा-सा. . . अनीता कंधे उचकाती है. अनीता का जी तो चाहता है, गुनगुनी धूप-सी ही मधुर ऊष्मा वाली नानी की गोद में मुंह छिपा ले. . . कुछ क्षण उस मधुर ऊष्मा से एक हो आये. . . लेकिन देर हो जायेगी. . . अभी उसे तैयार भी तो होना है. . . अनीता बाथरूम में दौड़ जाती है. सेंटीमेंटल होने के लिए वक्त ही कहां है! कितने कसे होते हैं अनिता के शेड्यूल भी. अब देखो, नहा-धो कर ड्रेसअप होते, लंच लेते, एक बज जायेगा और ठीक एक दस पर संजय उसे लेने आ जायेगा. शावर के नीचे गुनगुनाती अनीता नानी को बिल्कुल भूल जाती है. उसकी आंखों में संजय आ खड़ा होता है. . . हैंडसम, स्मार्ट, फास्ट संजय!

★ ★

लंच के समय ममी से भेंट होती है. बाकी सारा समय तो अनीता की डॉक्टर ममी चश्मा चढ़ाये, स्टेथसकोप लटकाये, प्रेसक्रिपशंस लिखती होती हैं, या इंजेक्शंस लगाती होती हैं. हां, घर में इधर-उधर आते-जाते अनीता ममी के सामने पड़ती भी है, तो न ममी अनिता को रोकती हैं, न अनीता ममी को टोकती है.

मेज लग गयी है. अनीता और ममी ने अपने-अपने नैपकिन खोल लिये हैं.

—आज का दिन अच्छा है! ममी कहती हैं.

—हां, वेरी प्लेजेंट! अनीता कहती है. कांटे-छुरी से तौल-तौल कर खाना खाते अनीता कनखियों से ममी को देखती है. अनीता और ममी का संबंध भी तो बिल्कुल नपा-तुला है—इन कांटे-छुरी से तौल-तौल कर खाने जैसा. नानी के पोपले मुख पर अब भी भाव आते-जाते हैं. ममी का चेहरा तो काठ बना रहता है. अनीता नानी और ममी की हंसी की तुलना करने लगती है. नानी की हंसी पोपली है. ममी हैज गॉट ब्यूटिफुल सेट ऑफ टीथ. ममी के दांत बिल्कुल अनीता जैसे हैं, लेकिन हंसी. . . ? ममी हंसती हैं, तो लगता है, कोई पत्थर की मूर्ति हंस रही है, एक पथरीली मुसकान! जब-जब ममी मुसकराती हैं, अनीता जमने लगती है. ममी की हंसी या ममी की मुसकान जैसे बर्फीली सर्द हवा है, जो एक ठिठुरन अनीता के गिर्द छोड़ जाती है. नानी की हंसी पोपली होने पर भी गर्म तो होती है.

अनीता को अपने डैडी की कोई याद नहीं. पता नहीं, कब, कैसे, कहां डैडी छूट गये. पूरा होश आने पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनीता ने ममी से डैडी के बारे में पूछा था. उत्तर देती ममी की वे आंखें अनीता को आज भी याद हैं---न उन आंखों में कोई दिये जले, न कोई राख उड़ी. बस, एक अथाह रेगिस्तान उन आंखों में फैल गया था, जहां दूर-दूर तक कुछ भी नहीं होता. . .

---ही हैड अफेअर्स विद अदर वीमेन ऐंड आइ कुडंट टॉलरेट इट. मैं नहीं सह सकी दूसरी औरतों से उनके संबंध को. . . ! ममी ने कहा था. नानी ने नाना की जिस चोट को सह लिया था, ममी ने उस चोट के खिलाफ विद्रोह कर दिया था. और अनीता. . . अनीता जस्ट डजंट केअर! अनीता परवाह ही नहीं करती. वैसे तो आजकल संजय और अनीता खास 'डेट' हैं, लेकिन अगर वे साथी बदलते हैं, तो इसमें हर्ज क्या है? अनीता सहज होना चाहती है, सहज रहना चाहती है-- उस हवा की तरह, जिसके झोंके उड़ते हैं, बस उड़ते रहते हैं. अब हवा को रोका जाये, तो दम घुटने लगेगा न! हवा के झोंकों वाली इस फिलॉसफी को अपने आपके निकट बार-बार दुहराते अनीता ममी की उन आंखों को नहीं भूल पाती, जिनमें एक अथाह रेगिस्तान फैल गया है. . . कैसे जीती हैं ममी इस रेगिस्तान में? क्या इस रेगिस्तान में फिर फूल नहीं खिलाये जा सकते थे? क्यों ममी ने अपने आपको ऐसे वेस्ट किया? ममी ने लव मैरिज की थी? प्रेम किया, वह तो ठीक, लेकिन शादी क्यों कर ली? अनीता तो सिर्फ प्यार करेगी. . . सिर्फ प्यार. . . ! अनीता जियेगी नदी की निर्बंध धारा की तरह. . . हवा के उन्मुक्त झोंके की तरह!

नानी आ खड़ी होती हैं-- कुसुम, मैं फिर कहती हूं, इस छोकरी को समझा! ये सब ठीक नहीं है, जो ये रात गये आती है. जाने कहां-कहां घूमती है, जाने किस-किस के साथ. . . ! कुसुम. . . !

---आ तो जाती हूं न! देर से सही ! बात काटती अनीता सीधे नानी की आंखों में देखती है.

ममी तटस्थ बनी खाना खा रही हैं-- रहने दो, मां, अनीता बच्ची नहीं, अपना भला-बुरा समझती है. ममी किसीकी ओर नहीं देखतीं. उनकी आंखें प्लेट पर निबद्ध हैं. अनिता को लगता है, अच्छा है, ममी आंखें नहीं उठातीं, नहीं तो उस बिल्कुल रीती दृष्टि को झेलना कठिन हो जाता. नानी की ऊष्मा से तो लड़ा जा सकता है-- पुराना सही, इसमें जिंदगी का अहसास तो है. लेकिन ममी की बर्फीली ठिठुरन को छूना कठिन हो जाता है. . . कितनी भी आधुनिक हो यह ठिठुरन.

★ ★

सहसा कार का हॉर्न बजता है, बार-बार बजता है. अनीता उछल कर खड़ी हो जाती है-- सो ममी, सो ग्रेनी, बाय!

---अरी, कब तक आयेगी? बता कर जा! नानी चीखती ह.

---पता नहीं ! कहती अनीता दौड़ जाती है.

दरवाजे तक तेजी से बढ़ कर नानी खड़ी रह जाती हैं-- सुना कुसुम ! पता नहीं ! चीखती नानी और तटस्थ ममी के बीच अनीता का वह 'पता नहीं' फ... राता रह जाता है. नानी को लगता है, उनकी अनीता का सारा अस्तित्व इस 'पता नहीं' में भटक रहा है... अनीता भी दौड़ रही है, एक अंतहीन दौड़. . . रेगिस्तान में मरीचिका के पीछे दौड़ते पागल मृग-सी. . . लेकिन कौन समझाये अनीता को?. . . नानी तुमको या ममी तुमको, तुम दोनों को ही क्या मिला है अपने ढंगों से, जो मुझे अपने ढंग से जीने से रोकती हो. . . अनीता कहती है.

---हाय अनीता!

---हाय संजय!

उत्तेजना से कांपती अनीता संजय से सट कर बैठ जाती है. कार दौड़ने लगती है. . .पचास. . . साठ. . . सत्तर. . .

---तुम इतना फास्ट ड्राइव क्यों करते हो? अनीता ने संजय के कंधे पर सिर टेक दिया है. दौड़ती कार और उत्तेजना से कांपती अनीता जैसे एक लय में गुंथ गयी हैं.

---फास्ट. . . ? इसलिए कि आज जिंदगी इतनी फास्ट हो गयी है कि अगर हम दौड़ कर उसे न पकड़ लें, तो वह हमें पीछे छोड़ देगी. और पीछे छोड़ दिया जाना मैं बरदाश्त नहीं कर सकता. . . आई जस्ट कांट टॉलरेट इट.

अनीता कनखियों से संजय को देखती है. लाल चौड़े कॉलर की शर्ट, चौड़े बेल्ट से कसा नीला बैल-बॉटम पेंट, कंधों तक फैल आये बाल, साइडलॉक्स, ओंठों पर विदेशी धुन, आंखों में आयातित भाव, जैसे ये भाव भी भीतर के नहीं, बाहर के हों. वह संजय को अच्छी तरह जानती है, फिर भी संजय उसे अजनबी लगने लगता है-- इतना कि वह एक अनजान भय से कांपने लगती है. यह भय उसकी उत्तेजना में गुंथा होता है... और भय और उत्तेजना के झटके खाती अनीता संजय के पास-दूर होती रहती है. संजय का यह चेहरा भी तो कितना बदलता रहता है! कल का संजय आज नहीं रहता, आज का कल नहीं रहेगा. दूर से देखने पर यह बदलना अच्छा लग सकता है, किंतु पास आ कर यदि इसे झेलना पड़े, तो झटके ही झटके. . . ! अनीता भय और उत्तेजना से कांपती रहती है.

आज बहुत हैंडसम लग रहे हो ! अ परफेक्ट बांड!

---ऐंड यू अ परफेक्ट मॉड! संजय अनीता की ग्रीवा पर एक चुंबन ले लेता है. अनीता के भय और उत्तेजना में यह चुंबन भी गुंथ जाता है. 'अ परफेक्ट मॉड'. . . अनीता को याद आता है--

कॉलेज में किसी लड़के ने किसी लड़की को छेड़ दिया था. बात इतनी बढ़ गयी थी कि टीचर्स को ऐक्शन लेना पड़ा. कुछ टीचर्स की राय थी कि लड़के-लड़कियों के पहनावे पर प्रतिबंध लगना चाहिए. ऐसी घटनाओं के लिए उत्तेजक पहनावे दोषी हैं. लेकिन इसके पहले कि कोई नियम बनाया जाता, अनीता के ग्रुप ने बिहार बोल दिया-- जी नहीं, यह हमारी पर्सनल लिबर्टी का सवाल है ! हम कॉलेज आते हैं पढ़ने के साथ कुछ अन्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय बिताने के लिए, योगसाधना के लिए नहीं. हम जो चाहे पहनेंगे, जैसे चाहे रहेंगे, जैसे चाहे जि.. यें...गे अनीता लीड कर रही थी.

और टीचर्स तो मैदान छोड़ कर भाग खड़े हुए, केवल डॉक्टर नाथ, प्रिंसिपल, खड़े रह गये थे. आधुनिक मॉड कपड़ों के झुंड में पुराने फैशन का काला सूट पहने डॉक्टर नाथ का चेहरा संजीदा हो आया था. बायीं आंख दबा कर अनीता ने ऐलान किया था—— कल तुम सब लेटेस्ट कपड़ों में आओगे और चाय हम डॉक्टर नाथ के साथ पियेंगे! टु हैल विद प्यूरिटन्स!

—डाउन विद कंजरवेटिव्स! वे चीखे थे. उन चीजों में डॉक्टर नाथ की आवाज दब कर रह गयी थी.

अनीता से आज भी कोई पूछे कि उसकी तमन्ना क्या है, तो वह कहेगी—— टु बी अ परफेक्ट मॉड! और यह मॉड लेटेस्ट इन फैशन होना ही तो है—— कपड़ों में, विचारों में, जिंदगी में!

सत्तर की स्पीड से कार दौड़ रही है. संजय से सटी बैठी अनीता देखती है, सुबह की कोमल, कच्ची धूप अब निखर कर पारे जैसी हो गयी है...

—इस धूप को देख रहे हो, संजय?

—हां, यह बिल्कुल तुम्हारे जैसी है... चमकदार, गर्म, ब्यूटीफुल!

—लेकिन जानते हो, इस धूप को बांहों में भरा जा सकता है, बांधा नहीं जा सकता! बिल्कुल आजाद है यह धूप! अच्छा, अगर मैं धूप हूं, तो तुम क्या हो?

—मैं संजय हूं, संजय माथुर. संजय हंसता है. अनीता भी हंस पड़ती है. संजय की गूंजती हंसी और अनीता की खनकती हंसी टकरा गयी है....

—न, बताओ ना! क्या हो तुम? अनीता उस हंसी की टकराहट से उबरना चाहती है.

—मैं...? अच्छा, तो मैं हूं आकाश! ये नीला-फैला आसमान...जो होता है, नहीं होता... संजय सहसा उदास हो जाता है. पल भर पहले की वह हंसी अनीता को झूठ-सी लगी थी, यह उदासी सच-सी लगती है. नहीं, यह सच नहीं है...बिलकुल नहीं. अगर वह हंसी सच नहीं है, तो यह उदासी भी सच नहीं है... फिर सच क्या है? कुछ भी हो, लेट मी नॉट बादर! अनीता अपने आप को रोक देती है. संजय ने भी शहर से दूर, एकांत में, पेड़ों के झुरमुट में कार रोक दी है. संजय की बांह का सहारा ले कर इस निबिड़ एकांत में संजय को छूने, संजय में डूबने के क्षणों में अनीता को याद आता है——

पिछले मास अनीता की 'डेट' मनीष था. देखने वाले कहते थे—— दे आर इन लव! डिसकोथिक के भीतर, डिसकोथिक के बाहर मनीष और अनीता साथ देखे जाते थे. फ्लू के कारण अनीता एक सप्ताह बाहर नहीं निकली, तो मनीष को दीपा के साथ देखा जाने लगा.

—यू चीट! अनीता चीखी थी.

—यू बिच! मनीष भी उतने ही जोर से चीखा था. अनीता तीन कदम पीछे हटी, फिर चार कदम बढ़ कर एक घूंसा मनीष की नाक पर जड़ दिया. मनीष की हीरे की अंगूठी का पत्थर मनीष की नाक को घायल कर गया. मनीष की नाक से खून बहने लगा था. साथियों ने मनीष को और साथिनों ने अनीता को पकड़ लिया था. एक दूसरे को जलती निगाहों से देखते वे हांफ रहे थे.

——इट्स आल कैजुअल, इसे दिल पर मत लो! संजय ने हांफती अनीता की बांह थाम ली थी. दूसरे दिन संजय की बांह में बांह डाले अनीता सहज थी.

पेड़ों के झुरमुट से छनती धूप, उस एकांत में उजाले-अंधेरे का इंद्रजाल-सा रच रही है. अनीता की आंखों में यह इंद्रजाल प्रतिबिंबित हो उठता है... इंद्रजाल संजय की आंखों में भी है. उनके ओठ निकट आते हैं... उनके शरीर और निकट... इंद्रजाल में डूबे कुछ क्षण सरक जाते हैं...शोले भड़कते हैं... बुझ जाते हैं. अपने आप को समेटती अनीता किसी समर्पण की तृप्ति ढूंढती होती है. अपने आप को संभालता संजय किसी स्वीकार के सुख को तलाशता होता है... और...किसी अवसाद को झुठलाते वे बार-बार सोचते होते हैं, वह असीम आनंद इतना सीमित क्यों है...? □ □ □

न्यू रीडर्स क्वार्टर नं. १९, उस्मानिया युनिवर्सिटी, हैदराबाद–७ (आं. प्र.)

अन्नपूर्णा

यशस्वी बुद्ध के जीवन-काल में श्रावस्ती नगरी में भयानक अकाल पड़ा. जनता की क्षुधा शांति के लिए उन्होंने प्रभावशाली लोगों का आह्वान किया. नगर के रत्नाकर सेठ ने दंडवत प्रणाम करते हुए कहा—— मैं तो समुद्र की एक बूंद हूं और यह विशाल नगरी एक समुद्र. अतः मेरी सामर्थ्य का अनुमान आप सहज ही लगा सकते हैं. सुन कर भगवान बुद्ध ने सेनापति जयसेन की ओर देखा. जयसेन ने कहा—— प्रजा की रक्षा के लिए मैं अपने लहू की अंतिम बूंद तक बहा देने को तैयार हूं पर मेरे घर में इतना अनाज नहीं कि मैं उसकी क्षुधा शांत कर सकूं.

धर्मपाल ने ठंडी सांस भरते हुए कहा—— मुझ जैसा भाग्यहीन तो अपने सूखे खेतों का राज्य-कर चुकाने में ही अपने को असमर्थ पाता है.

धर्मपाल का यह उत्तर सुन कर भगवान बुद्ध निराशा के अंधेरे में डूबने-उतराने लगे.

—भगवान, यह तुच्छ पामर सेविका आपको इस निराशा से उबारेगी. प्रजा के इस आर्त्तनाद में मुझे अपनी संतानों का क्रंदन नजर आ रहा है. क्षुधित जनता का दायित्व मैं अपने ऊपर लेती हूं. शिष्य अनाथपिंडक की सुपुत्री सुप्रिया के इन शब्दों से बुद्ध को अंधेरे में आशा की किरण-सी दिखाई दी.

और सचमुच ही भगवान बुद्ध के आशीर्वाद से समस्त नगरी का उद्धार हो गया. □ □ □

(प्रस्तुतीकरण : रेखा सिंह)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

कृतियां

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक कहानी संग्रह

'कई सूरजों के बीच'

लेखक : इब्राहीम शरीफ; प्रकाशक: नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली; १२५ पृष्ठ; मूल्य : ५-००

इब्राहीम शरीफ की छोटी, सहज, साधारण और चुभती हुई कहानियां कहानी की बुनावट के बारे में चंद बुनियादी सवाल खड़े करती हैं. इन कथाओं के रचना-लोक के सर्वेक्षण से पता चलता है कि इनमें सनसनीखेज, विस्मय बोधक, विराट्, आदर्शवादी, आडंबरपूर्ण तथा दरियादिल कथासूत्रों को कोई स्थान नहीं मिला है. समकालीन जीवन की विषमता-विसंगति से अविच्छिन्न रूप में जुड़ी होने के कारण आज की कहानी मामूली आदमी के मामूली जीवन की मामूली घटनाओं-स्थितियों के बारे में पैने, विद्रूप और व्यंग्य भरे कथा-संदर्भ प्रस्तुत करती है. इन कथा-संदर्भों से परिचित होने के कारण पाठक के मन में संवेदनात्मक प्रतिक्रिया जन्म लेती है. ये मामूली घटनाएं और मामूली सवाल पाठक को अपने अनुभव के हिस्से लगते हैं. मामूलीपन अपनी रचनात्मक सहजता-साधारणता में अभिव्यक्त हो कर विशिष्ट बन जाता है.

साधारण व्यक्ति में सनसनीखेज रहस्यात्मकता और अश्रु-मीगी आदर्शवादिता का आरोपण करना सामयिक जीवन-पद्धति से अनभिज्ञता जाहिर करना है. इसलिए इब्राहीम की कथाएं साधारण जन के छोटे-छोटे अनुभवों को उनके संत्रास के साथ प्रकट करती हैं, तथा इस संत्रास के व्यंग्य-विद्रूप को एक कला-संयमितता के साथ पाठक के सामने अनावृत कर देती हैं.

[illegible] व्यवस्था और जड़ परंपराओं के खिलाफ है. फ्लैप पर ठीक ही कहा गया है : 'कहानियां जो अंधेरे में साधारण आदमी को घेरे खड़ी हुई तमाम भयानक छायाओं को उद्घाटित करती हैं, और हर तरह का जोखिम उठा कर उन पर रोशनी के टुकड़े फेंकती हैं.' आदमी के मन की भयानक त्रासदी को उद्घाटित करें न करें, पर शरीफ अभिव्यक्ति का पूरा खतरा उठाते हैं, इसमें संदेह नहीं. इन कहानियों में चर्चित देश, जुलूस, बेकारी, मर्यादाहीन लोग, क्लब-लाइफ, डाक्टर, नसबंदी, अफसर, कमचारी, कथाहीन नारियां, तथा लक्ष्यहीन बौद्धिक लोग यथार्थवादी परिवेश रचते हैं.

इन कहानियों के पात्र खंडित-विघटित होते हुए भी संघर्ष की ललक रखते हैं—'पूर्वाभास' का लंगड़ा संपन्न लोगों का ट्रैफिक जाम कर देता है. 'सड़क मेरी भी है . . . . मेरी अलग दौड़ है. . . . सब की गाड़ियों की दौड़ के बराबर मैं क्यों अपनी दौड़ बढ़ाऊं?' और यह विकलांग वाहन वाले संभ्रांत लोगों द्वारा वाहन से कुचल दिया जाता है. '**दिग्भ्रमित**' का कथा-नायक लंबे राजनीतिक जुलूसों के कारण अपना मार्ग तय नहीं कर पाता और स्टेशन नहीं पहुंच पाता. उसके जीवन की एक महत्वपूर्ण यात्रा रद्द हो जाती है. '**पुरजे**' में एक ओर लकवाग्रस्त मां है, और दूसरी ओर डाक्टर की फीस. फीस के अभाव में उपचार नहीं हो पाता. पढ़े-लिखे बेकार भाई-बहन फीस का प्रबंध नहीं कर पाते. ऐसी व्यवस्था के प्रति घृणा क्यों न हो! यही कारण है कि लोग [illegible] और "मर्यादाहीन" [illegible] जाते हैं. शिक्षित युवकों को [illegible] नकली इंटरव्यू में अस्वीकृत [illegible] जायेगा तो वे निश्चय ही [illegible] भंजक बन जायेंगे. हृदय में [illegible] लिये लोग डायबिटीज से [illegible] ग्रस्त मरणासन्न मां से [illegible] के अभाव में मिल [illegible] पाते! लड़कियों से [illegible] नहीं, खिलवाड़ किया जाता [illegible] तंकम जैसी लड़कियां 'कथाहीन' रह जाती हैं. जिस्म बेचने [illegible] नौकरी मिलती है, या तीस [illegible] मासिक वेतन पा कर एक [illegible] करते प्रेस-मालिक से मार [illegible] अपमानित होना पड़ता है. [illegible] की लड़की को बाप के घर [illegible] सुरक्षा नहीं, चाचा उसे [illegible] देखते ही दबोच लेता है, [illegible] धोखा दे जाता है, और [illegible] व्यक्ति शादी के प्रश्न पर चुप [illegible] है. तंकम की आंखों में [illegible] होगी तो क्या होगा? [illegible] स्थितियों से व्यक्ति के मन में [illegible] की कुंठा बैठ जाती है. 'बौद्धिक [illegible]' कुंठित और लक्ष्यहीन हो जाता [illegible]

इब्राहीम शरीफ ने [illegible] जीवन में विघटन के विविध [illegible] को समझा है. परिवेश, [illegible] मर्यादा, मूल्यों और परंपरा की [illegible] जड़ता-भरी परिणतियों के [illegible] उनके मन में नफरत-भरा आक्रोश [illegible]

संग्रह की सबसे अच्छी [illegible] '**कथाहीन**' है, जिसमें [illegible] मानस का सच्चा विश्लेषण [illegible] अन्य अच्छी कथाएं हैं—'**पूर्वाभास**', '**पुरजे**', '**मर्यादाहीन**' और '[illegible]' '**इंतजार**' भी एक [illegible] कथा है.

☐ **रामदेव आचार्य**

इब्राहीम शरीफ

रामदेव आचार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्व. महेंद्रनाथ

साबिर दत्त

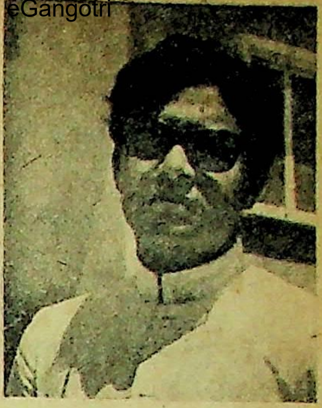

डॉ. राही मासूम रजा

एक विशेषांक

'महेंद्रनाथ यादगार नंबर'

संपादक : साबिर दत्त और सी. एल. काविश; मूल्य : २५ रुपये; प्राप्तिस्थान : अलवी बुक डिपो, मोहम्मद अली रोड, बंबई.

साबिर दत्त और सी.एल. काविश ने पांच सौ पन्नों का 'फन और शख्सियत' पत्रिका का यह यादगार नंबर निकाल कर कमाल कर दिया. वैसे महेंद्रनाथ जैसे साधारण आदमी पर ऐसा शानदार नंबर निकालना बड़ी ज्यादती की बात है. मीर, सौदा, अनीस, गालिब, सरशार, शरर, चकबस्त, प्रेमचंद, जोश मलीहाबादी--जी हां, मैं जोश को मरे हुओं ही में गिनता हूं--मजाज, मख्दूम और सज्जाद जहीर . . . किसी पर भी तो ऐसा नंबर नहीं निकला. इसीलिए जब यह नंबर देखा तो खयाल आया कि शायद ऐसे खूबसूरत और जीवित नंबर के लिए मरने वाले का साधारण होना जरूरी है, शायद साधारण लोगों ही के बारे में असाधारण और महत्वपूर्ण रचनाएं रची जा सकती हैं . . . मुख्तसर यह कि अल्लाह साबिर दत्त और काविश साहब को जिंदा रखे कि ये दोनों भी साधारण आदमी हैं.

मैंने 'महेंद्रनाथ यादगार नंबर' देखा तो मरने को जी चाहने लगा, पर किसी साबिर दत्त या सी. एल. काविश से मेरी ऐसी दोस्ती जो नहीं है! और ऐसे नंबर अच्छे संपादक नहीं, अच्छे दोस्त ही निकाल सकते हैं.

लगता है कि उपेंद्रनाथ अश्क को पूरा यकीन है कि उनपर ऐसा नंबर नहीं निकलेगा, तो उन्होंने इसी नंबर को अश्क यादगार नंबर मान लिया. और इसीलिए उन्होंने महेंद्रनाथ के बारे में कम और अपने बारे में ज्यादा लिखा. उनके लेख का शीर्षक है— **'काश, महेंद्र मेरा भाई होता'**. जोर महेंद्रनाथ पर नहीं, काश पर है. अफसोस इसका नहीं कि महेंद्रनाथ मर गये. अफसोस इसका है कि वह मेरे भाई न हो कर कृष्णजी के भाई क्यों निकले! दुख यह है कि भाई की मौत के मैदान में भी कृष्णचंदर बाजी मार ले गये. पता नहीं संपादकों ने इस लेख को प्रकाशित करना क्यों आवश्यक जाना. इस लेख ही की तरह मुझे कृष्णजी की जीवनी— **'वरक वरक खो गयी जिंदगी मेरी'**— के पन्ने भी इस यादगार नंबर में अच्छे नहीं लगे. यह तो सब जानते हैं कि महेंद्रनाथ कृष्णचंदर के छोटे भाई थे पर इसका मतलब यह नहीं कि उनकी अपनी कोई जिंदगी ही नहीं थी. लगता है मरने के बाद भी कृष्णजी महेंद्रनाथ पर धूप नहीं पड़ने देंगे. मैं महेंद्रनाथ के लिए उनके प्यार की इज्जत करता हूं पर यह कहना भी जरूरी समझता हूं कि पौधे को पनपने के लिए छांव के साथ-साथ धूप की जरूरत भी पड़ती है. कृष्णजी के प्यार की छांव में महेंद्रनाथ की जिंदगी ही नहीं पनपी तो मौत क्या पनपेगी!

इस यादगार नंबर का सबसे अच्छा लेख लिखा है सरला, महेंद्रनाथ की बहन, ने. अफसोस कि सरला पर वैसा ही लेख लिखने के लिए महेंद्रनाथ मौजूद नहीं हैं. अपने भाई पर यह लिखने के बाद वह खुद मर गयीं मानो वह केवल यही लेख लिखने के लिए जी रही थीं.

दूसरा लेख जो मुझे अच्छा लगा और जो साहित्यकारों को मरने पर उकसा सकता है, वह है सी. एल. काविश का. काविश साहब मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य के विरोधी हैं और महेंद्रनाथ इन्हीं दोनों के सिपाही. परंतु काविश ने महेंद्र की मौत को अपनी मौत की तरह महसूस किया. इसे कहते हैं थीसिस, ऐंटी-थीसिस और सिंथेसिस. काविश साहब मानें या न मानें, पर महेंद्रनाथ पर उनके लेख ने उन्हें लगभग मार्क्सवादी बना दिया है. यानी मरते-मरते भी महेंद्रनाथ एक काफिर को मुसलमान बना ही गये!

इस यादगार नंबर में हिंदुस्तान और पाकिस्तान के ८१ साहित्यकारों ने महेंद्रनाथ की लाश पर अपने शब्दों के फूल चढ़ाये हैं और यह कोई साधारण बात नहीं है. मैं तो यह सोच-सोच कर हैरान हो रहा हूं कि जिस आदमी की मौत में इतना दम है, उसकी जिंदगी कैसी शक्तिशाली रही होगी.

□ राही मासूम रजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुस्ताख़ियां

• प्रकाश पंडित

हो जाये कुछ प्रकाशकों के बारे में !

पाकिस्तान बनने के कुछ समय पूर्व उर्दू के प्रसिद्ध व्यंग्य लेखक और सेवक के हितैषी मित्र कन्हैयालाल कपूर एक बड़े ही तुर्रेबाज किस्म के प्रकाशक को ले कर संतनगर लाहौर स्थित सेवक के घर पधारे और उन प्रकाशन महोदय ने उस जमाने में जबकि सेवक की महीनेभर की कुल आमदनी अस्सी रुपये थी और सौ के सालम नोट के विषय में केवल सुना था—सवा दो सौ रुपये के करारे नोट सेवक को गिनवा कर एक अशटाम पर हस्ताक्षर करवा लिये कि सेवक की कहानियों का एक संग्रह 'कड़वे घूंट'—जो आज तक प्रकाशित नहीं हुआ और जिन्होंने बाद में सेवक को ऐसे-ऐसे कड़वे घूंट पिलाये कि सेवक को छठी के अलावा सातवीं और आठवीं का दूध भी याद आ गया —प्रकाशित करेंगे और उतने ही करारे नोट संग्रह के प्रकाशन के बाद प्रदान करेंगे.

कहानी -संग्रह के प्रकाशन की नौबत तो, जैसा कि कहा जा चुका है, आज तक नहीं आयी लेकिन पाकिस्तान बनने के तुरंत बाद जब दिल्ली में सेवक अचानक उन प्रकाशक महोदय के हत्थे चढ़ गया——जो उन दिनों फतेहपुरी, दिल्ली में एक होटल चलाते थे और कमर पर पिस्तौल लटकाते थे तो प्रकाशक महोदय ने फर्माया——निकाल वह सवा दो सौ रुपये.

——लेकिन वह तो 'कड़वे घूंट' की रायल्टी के थे. सेवक ने सहम कर कहा——आप अब भी उसे छाप सकते हैं.

——कैसे छाप सकते हैं, 'कड़वे घूंट' के लेखक के मुंह पर थप्पड़ मार कर बोले——मसौदा तो पाकिस्तान में रह गया है.

——तो इसमें सेवक का क्या कुसूर है? 'कड़वे घूंट' के लेखक ने थप्पड़ पड़ा अपना गाला सहलाते हुए कहा.

——कुसूर का बच्चा! इस बार उन्होंने कमर पर लटके पिस्तौल पर हाथ मार कर कहा——मसौदा रह गया है, अशटाम तो ले आया हूं.

और उस अशटाम और उस थप्पड़ से डर कर 'कड़वे घूंट' के लेखक ने बाद को——जब वह होटल बेच कर पुनः प्रकाशक बन गये और अमरीकी पुस्तकें छाप कर उन्होंने एक पोश कालोनी में अपना बंगला बनवा लिया तो उनके लिए एक पुस्तक का संपादन करके और एक पुस्तक का अनुवाद करके और उनके नाम से कुछ पुस्तक विक्रेताओं और उनकी किसी प्रेमिका के नाम प्रेम-पत्र लिख कर (नोट किया जाये कि आप शुरू से ही इस प्रकार के गैर-जरूरी कागजात पर केवल हस्ताक्षर करना या अंगूठा लगाना ही पसंद करते हैं) अपना कर्ज चुका दिया और सुर्खरू हो कर खुशी-खुशी उनके दफ्तर से जाने लगा. तो उन तुर्राबाज प्रकाशक महोदय ने तुर्रे को और भी लहराते हुए रहस्योद्‌घाटन किया कि राइटर समझ के छोड़ दिया था वर्ना लाहौर में पहली नजर में ही मैं तुम्हारी बीवी पर आशिक हो गया था.

आपसे मिलिए, आप हैं– इंडियन अकादमी के मालिक जनाब सुरेंद्रनाथ साहनी! जिनका चित्र सेवक के पास नहीं है और जो किसीसे भी यह पंक्तियां सुनने के बाद अनिवार्य रूप से अपने तुर्रे और पिस्तौल के साथ सेवक के गले में बहियां डालने के लि... उसे कहीं भी घर पकड़ेंगे!

जनाब मोहम्मद यूसु... जाम...

बड़े ही व्यापारिक सूझ... के मालिक थे. पाकिस्तान के... प्रकाशक खालिद साहब ने (... कभी दिल्ली में हाली पब्लि... हाउस के हिस्सेदार थे और कि... ट्रकों में लाद कर पाकिस्तान ... गये थे, जब साहिर लुधियान... को पाकिस्तान से हिंदुस्तान ... कर दिया और प्रकाश पंडित ... होने की बजाय एक ट्रक ... शरणार्थियों के ट्रकों और बिस्त... पर बैठ कर प्रकृति के दृश्य दे... हुए पहले अमृतसर और ... दिल्ली पहुंचे तो जनाब यूसु... साहब की दूरदर्शी दृष्टि ने ता... लिया कि आदमी दोनों काम के... हैं. और अपने पैसे से (जिस... बारे में लोगों का कहना है कि... उनकी बजाय वह किसी शील... बहन का पैसा था और यूसु... साहब उस पैसे और शीला बहन ... अपना ही माल समझते थे) ए... बड़ा जोरदार अदबी रिसाला 'शा... राह' जारी कर दिया कि दोनों का... करो. कमाओ और खाओ और... सामर्थ्यानुसार हमें भी खिलाओ.

साहिर लुधियानवी तो ... कुछ उन्हें खाना-पीना था, ... पी कर बंबई सिधारे. पीछे ... गये प्रकाश पंडित जिन्हें खाने-पी... या वेतन की मद में कभी दस रु... से अधिक एक साथ न मिले.

घर में फाका था. प्रकाश पंडित उर्दू के सबसे बड़े रिसाले 'शाहराह' के दफ्तर में खाली पेट बैठे बीड़ी पी रहे थे और ... के प्रसिद्ध लेखकों के साथ साहि... की सार्थकता पर बड़ी गंभीर... से वार्ता कर रहे थे कि जना... यूसुफ साहब अपने बगलबच्चे...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाली नोटों से भरे बगली बैग के साथ पधारे.

—अरे प्रकाश साहब! उन्होंने आते ही ललकारा—आप बीड़ी पी रहे हैं, कमाल है.

—इसमें मेरा कोई कमाल नहीं है यूसुफ साहब! प्रकाश पंडित ने स्वीकार किया—कमाल तो मुंशीजी (चपरासी) का है जो किसी तरह बीड़ी का बंडल उधार ले आये हैं.

—हद हो गयी. उन्होंने दफ्तर में मौजूद सात-आठ लेखकों की ओर गौरव से और प्रकाश पंडित की ओर घृणा से देखते हुए और अपने बगलबच्चे में से एक रुपये का नोट निकाल कर मुंशीजी को थमाते हुए कहा—जाओ, फौरन एक पैकेट कैप्स्टेन का ले कर आओ—प्रकाश साहब कैप्स्टेन के ही सिगरेट पीने के आदी हैं.

कैप्स्टेन का पैकेट आ गया. स्वयं यूसुफ साहब ने उसे खोलने का कष्ट किया. फिर एक-एक सिगरेट सब लेखकों को और एक प्रकाश पंडित को इनायत फर्माया और एक स्वयं सुलगा कर उन्होंने मुंशीजी को हुक्म दिया—पैकेट के पैसे प्रकाश साहब के हिसाब में लिखवा देना. और अपना बगलबच्चा बगल में दबाये सिगरेट का धुआं उड़ाते सीढ़ियां उतर गये ताकि साहित्य की सार्थकता में अधिक विघ्न न पड़े.

बदल हसन जामयी

यह साहब भी जामयी थे अर्थात उस जामिया मिलिया के स्नातक जिसकी नींव शिक्षा विशेषज्ञ जनाब डाक्टर जाकिर हुसैन साहब ने रखी थी. आप बड़े ही मुखलिस इंसान थे. लेकिन जितने मुखलिस थे उससे कहीं ज्यादा मुफलिस थे. कभी बहुत अच्छे दिन देखे थे इसलिए उन देखे हुए दिनों के कारण कभी अनदेखे दिनों का अनुमान न कर सके.

आशावादी इतने थे कि हजारों के कर्ज के बावजूद उन्हें प्रतिक्षण यह आशा रहती थी कि अभी अगले ही क्षण कुछ ऐसा घटेगा कि न केवल हजारों का कर्ज अदा हो जायेगा बल्कि लाखों में खेलने लगेंगे.

कोई भी छोटा या बड़ा शायर या अदीब उनकी दुकान हाली पब्लिशिंग हाउस, उर्दू बाजार, दिल्ली में चला जाता तो वह उसे चाय पिलाने, कबाब या कुल्फी (जिसका सही उच्चारण कुफली है) खिलाने से बाज न आते और इसका प्रबंध वह इस प्रकार करते कि अदीब या शायर के दुकान में दाखिल होते ही वह दुकान के मुलाजिम महमूद के कान में कोई फूंक मार देते और महमूद मियां तुरंत चौकड़ियां भरते साथ की दुकान से कोई भारी भरकम किताब ले कर कि ग्राहक को दिखानी है, उससे अगली दुकान पर उसे पचास प्रतिशत कमीशन पर बेच देते और एक ट्रे में शाहजहां के समय से उबल रही बब्बन के होटल की चाय या जामा मस्जिद के उत्तरी दरवाजे पर भुन रहे कबाब या पूर्वी दरवाजे पर खुल रही कुफलियां सजा कर ले आते.

बदल साहब का निवासस्थान दुकान के ऊपर था. जहां से दुकान खुलते ही उनकी बीवी छींका लटका देती थी —जिसमें नीचे से कभी एक अदद लकड़ी, कभी पाव भर दाल, कभी छटांक डेढ़ छटांक वनस्पति घी और कभी दो-चार आने के सिक्के पड़ जाते थे.

प्रकाश पंडित से उनका वास्ता तब पड़ा जब 'शाहराह' के मालिक यूसुफ साहब ने प्रकाशन का धंधा सीमित करके पहले नदियों-तालाबों में से और फिर कीचड़ में से मछलियां पकड़ने का धंधा अपना लिया और प्रकाश पंडित ने 'शाहराह' के दफ्तर के बगल के एक कमरे में (वह कमरा जनाब बदल हसन साहब का था और कभी 'शाहराह' के दफ्तर के तमाम कमरे भी बदल साहब के थे; जिन्हें एक दिन उन्होंने यूसुफ साहब को उर्दू की खिदमत करने के एवज निहारी खिलाते हुए सौंप दिये थे और जिन्हें यूसुफ साहब के देहांत के बाद उनके साहबजादे ने मुस्लिम लीग के हाथ पगड़ी पर उठा दिया है और तरक्की पसंद रिसाले 'शाहराह' के बोर्ड की बजाय जहां आजकल मुस्लिम लीग का झंडा फहराता है, बदल साहब के साथ मिल कर उर्दू का मायानाज रिसाला 'फनकार' निकाला—एक ऐसा रिसाला जिसके लिए अदीबों और शायरों ने अपनी रचनाओं का पारिश्रमिक लेने की बजाय अपनी रचनाओं के साथ सौ-सौ रुपये भिजवाये कि ऐसा रिसाला कभी बंद नहीं होना चाहिए.

रिसाला जारी रहा और अपनी रचनाओं के अलावा सौ-सौ रुपये देने वाले अदीबों और शायरों की लेखकीय प्रतियां उनके पास पहुंचने की बजाय पैक हो कर और रजिस्ट्री के लेबल लग कर बदल साहब के शयन कक्ष में पहुंचती रहीं.

—आप यह क्या गजब कर रहे हैं बदल साहब! पता चलने पर एक दिन प्रकाश पंडित ने बौखला-कर उनसे कहा—न आप मुझे दमड़ी देते हैं, न उन अदीबों के पास पर्चा भेजते हैं जिन्होंने चंदे के तौर पर सौ-सौ रुपये भेजे थे.

बहुत लज्जित हुए फर्माया—दो घंटे के भीतर-भीतर न केवल सब लोगों को पर्चे पोस्ट हो जायेंगे बल्कि आपका चार माह का वेतन भी आपको एक मुश्त मिल जायेगा. अभी आप ऊपर दफ्तर में जा कर इतमीनान से काम कीजिए—मैं चाय भिजवाता हूं.

और जब प्रकाश पंडित ऊपर दफ्तर में इतमीनान से काम करने और चाय पीने के दो घंटे बाद नीचे उतरे तो मालूम हुआ, बदल साहब पान में अधिक तंबाकू खा कर गश खा गये हैं.

उन्हें वास्तविक गशी की हालत में देख कर प्रकाश पंडित ने रिक्शा किया. दरीबांकला में जा कर अपनी अंगूठी बेची. आ कर डाक्टर गरेवाल को उसकी फीस और बदल साहब के बीवी-बच्चों को तसल्ली दी. दवाएं मंगवायीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फेमिना का २६ सितंबर १९७५ विशेषांक

बालरोग और उनके इलाज

दस वर्ष से कम उम्र के बच्चों की बीमारियाँ : इन्हें कैसे रोका जाये, इनसे कैसे बचा जाये

पहली मर्तबा आपके बच्चों के लगातार शारीरिक–मानसिक विकास के लिए प्रमुख बाल रोग विशेषज्ञों की आयोजनाएँ.

विदेशी चार्टों को देखकर क्षुब्ध न होइए. भारतीय बच्चों की आदर्श लंबाई और वजन के उपयुक्त चार्ट पहली बार, फेमिना पेश कर रही है. रोग प्रतिरोध समय-दर-समय प्रतिरोधात्मक कदम उठा कर कई बड़ी भयंकर बीमारियों को रोका जा सकता... इनके समय और विषय की विस्तृत सूची.

सांस की बीमारियां बार–बार जुकाम लगने से भी सांस और ब्रांकिटिस बीमारी हो सकती है. उन्हें रोकने के... कई एक पग उठाये जा सकते हैं. इसके अतिरिक्त दमे के बारे में कुछ महत्वपूर्ण सूचनाएं.

पेट की बीमारियां इनसे निर्जलीकरण जैसी बीमारियां हो सकती हैं. तुरंत उपाय करने के सुझाव.

क्या आपकी बच्ची बलात्कार का शिकार हो सकती है? इन संभावनाओं के खिलाफ कैसे तैयार रहें...

जन्मजात खामियां : अंधे, बहरे या अन्य रोगों से ग्रस्त नवजात शिशुओं की जिंदगी और अपनी जिंदगी... आसान व प्रसन्न बनाने के लिए क्या-क्या किया जा सकता है?

असामान्य रोग गर्दन तोड़ बुखार (मैनिंजाइटिस), वृक्क रोग, वातकारी हृदय. अपनी चपेट में ले लेते हैं. वक्त पर किये गये उपाय कारगर सिद्ध हो सकते हैं.

बच्चों में मैलिग्नेंट ट्यूमर, लक्षण और खोजबीन • बच्चों में त्वचा एलर्जी. • आंखों की देखरेख, क्या भेंगेपन... आपरेशन के जरिये इलाज संभव है? • दांतों की देख-रेख, आर्थोडॉन्टिक्स कितनी जरूरी, प्रभावशाली और... मानसिक गतिरोध और उसका पुनर्स्थापन बच्चों की भावनात्मक समस्याएं और उनके निदान चोरी, बिस्तर गीला करना, अंगूठा चूसना, पढ़ने में पिछड़ापन व अन्य खामियां भावनात्मक तनाव के लक्षण हो सकते हैं. बच्चों के मार्गदर्शक अस्पताल और स्कूल शारीरिक रूप से अपूर्ण आपके बच्चों की भलाई के लिए इनका ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल कैसे हो सकता है? व • किशोर-किशोरियों के लिए फेशन. • प्रेमी-प्रेमिका का घर से भागना–माता पिता और बच्चों के विचार — मामलों के संदर्भ में. • 'हर रोज की नायिकाएं' क्रम की एक और कड़ी.

ARMS-BC/F-45-7014HN

टाइम्स ऑफ इंडिया प्रकाशन **femina** हर दो हफ्तों में नयी उम्मीदें, नयी उमंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें पिलवायीं और जब बदल साहब पूरी तरह होश में आ गये तो पहले शब्द जो उनके मुंह से निकले, वे ये थे—महमूद! क्या अभी तक तुमने प्रकाश साहब के घर एक हजार रुपया नहीं पहुंचाया?

हाय, कहां गये वे लोग! जो कम-से-कम इतनी प्रिय बात तो कर सकते थे और हाय, कहां हैं वह मैसर्स आत्माराम एंड संज के पुरी साहब, जो इसी प्रकार की बात लेखकों से अपने लिए कहलवाने के तमन्नाई हैं.

नियमानुसार फाकामस्ती चल रही थी कि पुरी साहब के लिए भाषण तैयार करने वाले हंसराज रहबर साहब सेवक को उनके पास ले गये. फर्माया—हमारी पुस्तकों का सूचीपत्र तैयार कर दो—बड़ेवाला. जिसमें हर पुस्तक के साथ समीक्षाओं की कुछ पंक्तियां भी हों. समीक्षाएं न मिलें तो स्वयं लिखो. इस कामं पर पूरे दो महीने लगे और सिद्ध कर दिया कि आज तक ऐसा प्रकाशक न कभी पैदा हुआ है, न भविष्य में पैदा होने की संभावना है.

सिद्ध बिल्कुल ठीक किया था. क्योंकि ऐसा प्रकाशक सचमुच न कभी पैदा हुआ था, न आइंदा होने की संभावना है क्योंकि दो महीने सिरतोड़ परिश्रम के बाद जब चार सौ रुपये पारिश्रमिक की बात आयी तो उन्होंने अपने एकाउंटेंट को बुला कर कहा—प्रकाशजी को तुरंत चार सौ रुपये देने हैं. गल्ले में तो शायद नहीं होंगे.

—जी, बिलकुल नहीं हैं.

—कोई बात नहीं, पुरी साहब ने फर्माया —प्रकाशजी! आप पंद्रह दिन के बाद आ कर पैसे ले जाइए.

पंद्रह दिन के बाद मालूम हुआ कि पैसे उस दिन भी नहीं थे जो दिये जाते अन्यथा तुरंत दे दिये जाते.

पंद्रह दिन के वक्फे की अगली तारीख को पहुंचने पर मालूम हुआ कि एकाउंटेंट साहब को पुरी साहब का ऐसा कोई आदेश नहीं है कि प्रकाश पंडित नाम या नस्ल के किसी जीव-जंतु को पहचाना जाये.

अगले दिन अपने आपको पहचनवाने के सिलसिले में आत्माराम एंड संज की आत्मा -पुरी साहब से मिलने की चिट भेजी तो मालूम हुआ कुछ लेखकों के साथ रुपये -पैसे की बातचीत चल रही है, इसलिए आज भी पैसे नहीं मिल सकते.

—कभी मिल भी सकते हैं? फाकाजदा प्रकाश पंडित ने तंग आ कर एकाउंटेंट महोदय से पूछा.

—देखिए, एकाउंटेंट महोदय ने समझाया—अब तक आप पुरी साहब के वादों पर आते और जाते रहे हैं. अब मैं आपसे वादा कर रहा हूं कि आपको अवश्य पैसे मिलेंगे लेकिन आज से ठीक डेढ़ महीने बाद-यानी आप अगले महीने की बीस तारीख को शाम के सात बजे तशरीफ ले आइए.

अगले महीने की बीस तारीख को सेवक कश्मीरी गेट से मीलों दूर जामिया मिलिया ओखला में गया हुआ था कि छह बजे अपना कामधंधा छोड़ कर और जेब में पैसे न होने के बावजूद टैक्सी ले कर भागम-भाग आत्माराम एंड संज की दूकान पर पहुंचा कि जाते ही पैसे मिल जायेंगे.

—ओह, तो आप आ गये.

—जी हां. क्या आपको इस प्रकार का कोई खदशा नहीं था?

—था तो, एकाउंटेंट साहब बोले—लेकिन सोच रहा था कि न आयें तो अच्छा हो, क्योंकि पैसे आज भी नहीं हैं.

—आज तो पैसे तुम्हारा बाप भी देगा. सेवक ने ललकार कर कहा—आज मैं पैसे लिये बिना नहीं टलूंगा.

—कैसे लेंगे? एकाउंटेंट साहब भी डपट कर बोले—जबकि पैसे हैं ही नहीं.

—ऐसे लूंगा. सेवक ने काउंटर की ओर बढ़ती हुई और एक पुस्तक खरीद कर दस का नोट बढ़ाती हुई एक महिला के हाथ से वह नोट झपट कर काउंटर मैन से कहा—बाकी के पैसे इन्हें दे दीजिए.

—यह क्या कर रहे हैं आप? एकाउंटेंट महोदय अपने स्थान से घूम कर दौड़े आये और सेवक को अलग लेजा कर और अपनी नौकरी तथा शहर की शांति भंग होने का वास्ता और चार सौ रुपये नकद दे कर कहा—भगवान के लिए आप यहां से जायें.

और सेवक भगवान को चार सौ बार धन्यवाद देते हुए वहां से चला गया. लेकिन बाद को मालूम हुआ कि प्रकाश पंडित जब पैसे लेने आत्माराम एंड संज की दुकान पर गये थे तो शराब के नशे में बुरी तरह धुत होने के कारण दंगा करने के मूड में थे और पुरी साहब और उनका अमला दंगे-फसाद में विश्वास नहीं रखता. □□□

एक लघुकथा

दो विद्वान

● **खलील जिब्रान**

बात पुराने जमाने की है. किसी नगर में दो विद्वान रहते थे. उनके विचार एक दूसरे से नहीं मिलते थे. वे एक दूसरे की हंसी उड़ाते थे क्योंकि एक भगवान को मानता था और दूसरा नास्तिक था !

एक दिन बाजार में, अपने शिष्यों की मौजूदगी में, उनका वाद-विवाद छिड़ गया. घंटों वाद-विवाद चलता रहा. परंतु वे किसी नतीजे पर न पहुंच पाये !

उसी शाम, नास्तिक मंदिर गया और अपने पिछले पापों की मुआफी के लिए गिड़गड़ाने लगा !

ठीक उसी समय, दूसरे विद्वान ने, जो भगवान में विश्वास रखता था, अपनी धार्मिक पुस्तकें आग में झोंक दीं, क्योंकि वह नास्तिक बन चुका था ! □□□

(अनुवाद: केदारनाथ कोमल)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समानांतर

▫ सुकीर्ति गुप्ता

सतीश नीचे से मोटर साइकिल का हार्न बजा रहे थे—शायद कुछ भूल गये थे. स्टोव का स्विच ऑफ कर शीघ्र बारजे पर आयी. जल्दी में चौखट से अंगूठा उलझ जाने के कारण ठोकर लगने से चोट लग गयी. अनुराधा ने चोट को ध्यान नहीं दिया—उन्हें आफिस की देरी हो रही है. रूमाल भूल गये हैं. देवू को दे कर जल्दी से भेजा, नहीं तो हॉर्न उसकी माथे की नसों को झकझोर देता. सतीश के आफिस चले जाने से उसे बड़ी राहत महसूस हो रही थी. जनवरी का महीना, रसोई में धूप धीरे-धीरे पैरों को छूते बढ़ती जा रही थी, अब कमर तक हो गयी थी. सामने वृक्षों की शाखाओं के हिलने से उसे लगता कि धूप की लहरें उससे अठखेलियां कर रही हों. अनुराधा की इच्छा हो रही थी कि चुपचाप वह रसोई में ही पसर कर सो जाये और वह चटाई बिछा कर लेट गयी. गुनगुनी धूप की गरमाहट उसे पहले भी अच्छी लगती रही है. विक्टोरिया के मैदान में बैठ कर कितनी बार महिम के कंधे पर सिर रख धूप को पिया है. कितने सुंदर ढंग से जीने के बहाने गढ़े हैं और युनिवर्सिटी की क्लासों से कट कर सीधे वे मैदान में चले आते थे. 'सर' की तीखी आंखों की परवाह न कर के भी—क्लास में प्राय: एक दूसरे को देख कर मुसकराते और चिट के सहारे ही कितने वायदे हो जाते.

अचानक अनु की तंद्रा टूटती है. नीचे एक कार आ कर खड़ी होती है. उत्सुकतावश वह जंगले से झांकती है—एक सूटधारी युवक था, वही रोज दोपहर में नीलम के फ्लैट में आने वाला. उसके आने से अनु की भी बोरियत काफी टूट जाती है. उनके कमरे से आते बातों के टुकड़े वह जोड़ती, उन पर कल्पना का ताना-बाना बुनती. खट्-पट् की आवाज, सिसकारी की आवाज, प्यालों की टकराहट, सबका अपना अलग अर्थ होता. अच्छा शगल रहता. कभी उसकी इच्छा होती तो दरवाजों की सूराखों से झांक भी लेती!

नीलम को भी परवाह न थी कि जरा पर्दों से दरवाजे को पूरा ढंक तो दे. कितनी मीठी बात करती है. कान्वेन्ट का लहजा उसकी बातों में है. कितनी स्मार्ट है पर आंखें कितनी खोई-खोई रहती हैं, जैसे उनमें हमेशा ही कोई सपना तैरता रहता है. जब भी उसके घर में कोई अच्छी डिश बनती या उसके मनपसंद की मिठाई आती वह जरूर उसके लिए लाती. नीलम अनु से बड़ा स्नेह करती. उसे अन्य पड़ोसियों की तरह वहां ईर्ष्या-मिश्रित उपेक्षा नहीं दिखाई देती. अनु और नीलम की आयु में विशेष अंतर न था.

अनु को अभी बहुत काम करने थे. किसी तर[...] उसने नीलम के कमरे से अपने ध्यान को हटा लिया औ[...] अपनी आवाज तेज कर देवू से काम करवाने लगी.

—देवू, रसोई साफ कर...

—अरे, सुनता नहीं है, जरा मैं हटी नहीं कि [...] में सोने लगता है...रात भर क्या करता है—रात [...] नौ बजे से ही तो ऊंघने लगता है!

रसोई घर की खट्-खट् पट्-पट् आवाज घर में गूंज[...] लगती है. नल से लगातार पानी गिरने की आवा[...] होती है.

—कितनी बार कहा, काम करते समय इत[...] आवाज मत किया कर...धीरे-धीरे काम कर.

कहती अनुराधा बाथरूम में चली गयी. सिटकि[...] बंद कर ली. शॉवर से पानी झरने की आवाज हल्के[...] हल्के गूंज उठी. नहाते समय अपने पूरे नग्न शरीर [...] देखना उसे बड़ा अच्छा लगता है. पहले बाथरूम [...] शीशा न था—जिद्द करके उसने लगवाया कि दांत [...] करते या मुंह धोते बिना शीशे के उसे असुविधा हो[...] है. शॉवर की बूंदें मोती की तरह उसके चिकने शरी[...] से फिसल रही थीं. गोलाई की ऊंचाई पर बूंदें ठह[...] जातीं-चमकतीं, फिर धीरे से फिसल जातीं. विवाह [...] शुरू के दिनों में सतीश उसके शरीर की प्रशंसा करते [...] न थकता. कभी कहता—अनु, तुम्हारा शरीर तो ऐ[...] लगता है जैसे किसी कलाकार ने अपनी कला से तरा[...] दिया हो, छूते भय लगता है, खराब न हो जाये.

कभी कहता—अनु, जानती हो तुम्हारा नग्न शरी[...] देख कर मुझे अजंता के चित्र याद आ जाते हैं, जिन[...] सौंदर्य सिर्फ आंखों से पिया जा सकता है, हाथ छूते [...] ही नहीं—इच्छा करती है घंटों तुमको इसी तरह देखत[...] रहूं. और अनु आंख मूंद कर यह प्रशंसा पीती रह[...] वह महिम को भूलती जा रही थी क्योंकि उसकी बातों [...] में इतनी निर्भीक मांग न थी—कैशोर्य की भावुक[...] और अल्हड़ प्रेम ही था. पर सौंदर्य की आराधना इत[...]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल्दी चुक जायेगी—उसका मन मसोस उठता. अब वह भी एक साधारण स्त्री की ही तरह रह गयी है जो कि सिर्फ उपभोग की, वासना की पूर्ति मात्र है. अनु ने बांहों को एक-दो बार ऊपर नीचे किया—कमर में बल देखने के लिए एक-दो बार बांये-दांये झुकी. पास के कमरे से खिलखिलाहट का स्वर सुनाई दिया. अनु के भीगते शरीर में भी रोमांच हो आया. वह एक गीत हलके स्वर में गाने लगी.

उसे पता था कि बाथरूम के दरवाजे को पार कर वह आवाज जहां तक पहुंचाना चाह रही है, वहां अवश्य पहुंच रही होगी. अपने स्वर के मिठास पर भी उसे आत्म-विश्वास था—स्वर किसीको भी मदहोश कर सकता था. नीलम बड़ी प्यारी लड़की है. एक दिन बड़े भोले-भाले ढंग से कहती है—जानती हो अनु, सोमेश को तुम्हारे गीत बड़े अच्छे लगते हैं. जिस दिन तुम्हारा गीत उसे सुनाई नहीं देता है उसे अच्छा नहीं लगता है—कभी-कभी तो मैं छेड़ती हूं—तुम मेरे लिए नहीं, अनु के गीतों के लिए आते हो.

शंका से अनु ने उसकी ओर देखा था पर उनमें कभी भी ईर्ष्या के डोरे नहीं दिखाई दिये—वह आश्वस्त हुई.

—तुम मिलोगी? नीलम ने कहा.

अनु थरथरा गयी, पर स्वयं को संयत करते बोली—अभी नहीं, फिर कभी तेरे मित्र से अवश्य मिलूंगी.

पर कुछ दिनों बाद पता लगा कि नीलम के कई मित्र हैं जिनके आने के अलग-अलग समय हैं. उसके इस काम में उसकी विधवा मां और एक विश्वासी नौकर सहायता देता है. यदि कभी भूले-भटके कोई दूसरे के रहते आ जाता है तो नौकर सचेत कर जाता है.

सतीश को पता नहीं था. नहीं तो इतनी बड़ी पगड़ी दे कर वह फ्लैट किराये पर कभी नहीं लेता. अब तो रहने के लिए विवश था. लेकिन उसको नीलम से मिलना-जुलना बिलकुल पसंद न था. पूरे दिन की बोरियत से बचने के लिए कभी-कभी दोपहर को वह नीलम से भेंट करती. पर इसका ध्यान रखती कि सतीश को पता न चले.

* *

बारजे पर आ कर अनु ने अपने लंबे केश छितरा दिये. उसे हंसी आ गयी—महिम को उसके केश बड़े प्यारे लगते थे. प्रायः वह उन्हें ही चूम उठता था. और अधिक आगे बढ़ने का साहस नहीं था और न दोनों को एकांत ही प्राप्त था. जिस दिन पहली बार उसने ओठों को चूमा था, कितना कुछ घट गया था. दोनों तीन दिन तक आपस में बोले नहीं थे, एक दूसरे की ओर नजर नहीं उठा पाये थे. अचानक कुछ आवाजें लहरा जाती हैं—घुटती आवाजें. . .

—उफ् धीरे, सोम, तुम तो मेरे ओठों को काट देते हो—

—सच? . . इच्छा होती है—इनको पीता ही रहूं.

—फिर वही हरकत—एक मीठी झिड़की.

—तो क्या करूं? ये चांद-सी गोलाई देख कर मचल जाता हूं—ओह डार्लिंग!

—आओ देखो रेकार्ड चढ़ाती हूं—आओ डांस करें!

हलकी-हलकी संगीत की ध्वनि वातावरण में तैरने लगती है. अनु के पैर हिलने लगते हैं. सहसा ध्यान आता है कि सामने दूकान वाला उसे बड़ी देर से घूर रहा है. वह कमरे का पर्दा सरका कर जल्दी से भीतर चली जाती है. उसके कमरे तक संगीत लहरा रहा था. वह भी नाचना चाह रही थी. अनायास ही उसके पैर थिरकने लगते हैं. उसे लगता है वह महिम का हाथ पकड़ कर नाच रही है. उसकी कमर पर महिम का हाथ थरथरा रहा है. वह उसके सीने में मुंह छिपा लेती है. महिम हौले से अपने में समेट कर छोड़ देता है. वे मुस-कराते हुए एक दूसरे को देखते संयत हो उठते हैं—धीरे-धीरे खाने की मेज की ओर चले जाते हैं—और सच, अनु को भी भूख लग गयी. उधर का संगीत शांत हो गया था—किसी प्रकार की आवाज नहीं आ रही थी—ज्वार-भाटे के बाद की शांति. रसोई में देवू गुनगुनी धूप में मस्त सो रहा था. अनु उसके इस सुख को देख कर गुनगुना उठी—कुछ भी फिकर नहीं. मुझे जरा देरी देख कर खाना और प्लेट तो खुद मेज पर सजा देता—कैसे इसे इतनी मस्त नींद आती है और एक हम हैं—

अकेले मेज पर बैठ कर खाना-खाने में उसे बड़ा कष्ट होता. पहले तो कई बार इसी कारण वह सतीश से झगड़ भी चुकी है. गरम रोटियां देने के बाद जब वह मेज पर आ कर बैठती तब तक सतीश खा कर, हाथ धो कर अपने कमरे में चले जाते. उसके हाथों में अखबार होता. वह खीज उठती, आंखों में आंसू लिये कौर चबाती. उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

जल्द आराम पाने के लिए तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन लीजिए

तेज़ असर—एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जिस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। इसी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

विश्वसनीय—एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। इसी लिए एनासिन पर लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

एनासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और फ़्लू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा

A/2/8-74

Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd.

वेताल की हत्या

ग्लूमा राजा ने अपनी प्रजा से जो सोना इकट्ठा किया
पर समुद्री डाकू सरदार स्ट्रेंगॉल की नजर थी. जिस
राजा सोना ले जा रहा था, उस पर स्ट्रेंगॉल ने हमला
दिया. संयोग की बात, महाबली वेताल भी उसी नाव
और राजा को यह सलाह दे रहा था कि उसे अपनी
जनता के प्रति दयालु होना चाहिए. उधर स्ट्रेंगॉल
खून का भी प्यासा था. घमासान लड़ाई हुई और
सारे आदमी बंदी बना लिये गये. वेताल के हाथ
भी उस कोठरी में डाल दिया गया, जिसमें बारूद
अब स्ट्रेंगॉल ने सारी नाव पर पेट्रोल छिड़क दिया.
में एक जलती मशाल ली और नाव को जलाने चल पड़ा
कहा-कुछ ही क्षणों में भीषण विस्फोट नाव का नामो
तक मिटा देगा और उसके साथ मेरा सबसे बड़ा दुश्मन
भी खत्म हो जायेगा. पर वेताल का क्या हुआ? क्या
वेताल उस विस्फोट की भेंट चढ़ गया? वेताल की
हर्षक कहानी १ सितम्बर १९७५ के इंद्रजाल कॉमिक्स में

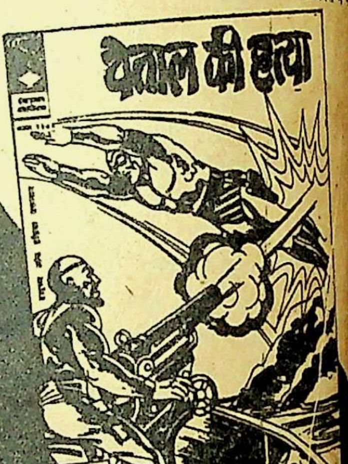

इंद्रजाल कॉमिक्स

१ सितम्बर १९

टाइम्स आफ इंडिया प्रकाशन

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता खाना-खाना भी दुनिया में कितना कठिन है! अनेक भाई-बहनों के बीच कभी अकेलेपन का अहसास ही नहीं होता था. कालेज से लौट कर आती तो मां मेज पर साथ बैठ कर उसकी कालेज की सारी उलटी-सीधी बातें सुनती और वह खूश हो कर कितना खाती——खाना भी कितना मधुर लगता. सामने बैठा देवू खा रहा है——उससे ही अनु बातें कर एकांत तोड़ने की चेष्टा करती है. उसकी सौतेली मां है——जो अच्छा व्यवहार नहीं करती है——इसी भय से वह घर जाने का नाम भी नहीं लेता. अनु के पास ही हमेशा रहना चाहता है. उसे देख कर अनु को लगता कि छोटेपन से ही देवू को शायद एकाकी और उदास रहने की आदत पड़ गयी है. खाना-खा लेने पर देवू अपनी रोज की आदत के अनुसार बचे चावल के दानों को थोड़ा-थोड़ा कर दरवाजे के पास छितरा देता है. गौरैया चहचहाती-फुदकती खाती. देवू उन्हें देख मुसकराता. उसने अलग-अलग कुछ के नाम रख छोड़े थे. मानो वे ही रोज उसके पास आती हों. अनु भी कभी-कभी उसके खेल में सहयोग देती.

महिम की एक बड़ी प्यारी आदत थी. खाते समय जो चीज अनु को पसंद होती, उसकी प्लेट में यह कह कर डाल देता कि उसकी इच्छा नहीं है या उसे भूख नहीं है. उससे बदला लेने के लिए कभी-कभी अनु अपने हिस्से की पूरी मीठी डिश उसके आगे सरका देती कि उसे मीठा पसंद नहीं है. वह जानती है महिम मीठे का बहुत प्रेमी है. इस मान-मनुहार में खाना कितना मीठा हो जाता. . .और अब. . .कभी भूले से कोई सतीश की प्रिय वस्तु, उसकी थाली में अपनी थाली से डाल भी दे तो सतीश आंखें तरेर कर बालेंगे. ——मुझे यह बचकानी आदत पसंद नहीं!

अनु का सारा उत्साह ठंडा हो जाता. वह अलग इकाई बनी अपने में सिमटी हुई खाती. सतीश को भी खाते समय कोई-न-कोई पत्रिका देखना अच्छा लगता. उस समय अनु को यह अकेलापन ही अधिक मात करता. अब उसे बाद में ही खाना अधिक अच्छा लगता.

सतीश से वह भी कभी सजह नहीं हो पाती. एक अव्यक्त दूरी उन लोगों के बीच बनी ही रहती. सतीश स्वयं को हमेशा एक बड़प्पन के घेरे में बांधे रहता. विद्वत्ता के विषय में दर्शन से ले कर खाना बनाने तक. संगीत में भी स्वयं को अत्यंत कुशल मान कर अनु से उसके कुछ तथ्यों को ले कर उलझ पड़ता——यद्यपि कभी कभी तर्क आधारहीन होते पर कभी हार न मानता. यही उसका एक अनोखा ढंग था, अनु पर रोब डालने का. अच्छी नौकरी न पाने की कुंठा सतीश को सालती थी. उसे लगता अनु उसकी उपेक्षा करती है——पर अनु इस कुंठा को जितना ही दूर करने की चेष्टा करती, उतना ही वे दोनों उलझते चले जाते. अनु भी अब ऊब गयी है, अब उस ओर ध्यान ही नहीं देती है.

महिम यदि युद्ध में अपने अखबार का फोटोग्राफर हो कर न जाता तो आज यह स्थिति न होती. दोनों ही एक दूसरे के अभिन्न थे. पर बाद में उसका कुछ भी पता नहीं चला. अगर आज भी अचानक आ जाये तो——अनु निश्वास ले कर मेज से उठ गयी. ध्यान आया कि उसे बैंक जाना है, सतीश के कुछ कपड़ों में बटन टांकना है. पर इच्छा हो रही है कि एक छोटी-सी नींद लेती, पर छोटी-छोटी इच्छाओं को दबाने में ही कुछ भूलने कैसा सुख मिलता है. . .और वह तैयार होने लगती है.

* *

बैंक से लौटते समय सीढ़ी पर सोमेश मिलता है. सीटी बजाता उतर रहा था. अनु को देख चुप हो गया. हलके से नमस्कार हुई. सीढ़ी संकरी होने के कारण कितना बचने पर भी सोमेश की कोहनी छू जाती है. अनु को लगता है कि सोमेश ने जानबूझ कर ही उसे कोहनी छुआ दी है. व्यंग्य की रेखा मुख पर उभर आयी. सोमेश आते-जाते प्रायः उसके बारजे की ओर देखता है——नीलम से भी कभी-कभी छोटे-मोटे तोहफे भिजवाने की चेष्टा कर चुका है. अनु के न चाहने पर भी यह भावना जैसे अनजाने ही उसे प्रिय थी कि शायद नीलम से ज्यादा उसमें आकर्षण है. स्त्रियों में हमेशा एक दूसरे के प्रति प्रतिद्वंद्विता की भावना होती है. क्या उसमें भी है? अनु कुछ निश्चित नहीं कर पायी.

नीलम के कमरे में झांक कर देखा. अभी भी वह अस्त-व्यस्त अवस्था में पड़ी हुई थी. अनु को देखते वह उठ कर बैठ गयी. कमरे की हलकी रोशनी में बिखरी लटों में घिरी नीलम उसे बड़ी प्यारी लग रही थी. नीलम मानों उसके मन के भावों को समझ कर मुसकरा उठी. अनु के मन में न जाने कितने प्रश्न उमड़ रहे थे. वह नीलम को एक सीमा तक कुरेदना चाह रही थी.

——तुम्हें सोमेश बहुत प्यार करते हैं न?

——हां. . .एक ओर देखते हुए नीलम फिर कहती है—— शायद. . .शायद शब्द अनु को चुभ जाता है.

——क्यों? अब भी तुम्हें उन पर विश्वास नहीं है. फिर तुमने स्वयं को इस सीमा तक क्यों दिया, अनु कहती है.

बालोंको ब्रश से संवारती नीलम कहती है——विश्वास-अविश्वास का प्रश्न नहीं उठता. मैं शादी नहीं करूंगी.

अनु चौंक पड़ी——क्यों?

नीलम सहसा उठ कर खड़ी हो गयी. उसके शरीर पर सिर्फ एक झीना नाइट गाउन था जो सिर्फ आवरण का बहाना मात्र था. अनु ने सिहर कर आंखें नीची कर लीं.

——अनु. . . नीलम उसके पास बैठ गयी, उसका हाथ अपने में लेती बोली——तुम क्यों पूछ रही हो? मैं किसीको कुछ भी बताना नहीं चाहती. सोमेश को भी एक दिन पता चल जायेगा——मैं सिर्फ उसीकी प्रतीक्षा कर रही हूं——अनु, मुझे अपने से भी कितना लड़ना पड़ता है. डर लगता है कि मैं उससे प्रेम न करने लगूं. इसीलिए मैंने अपने पास बहुत-से बहाने जोड़ रखे हैं. विजय, नाहर——सबसे संबंध रखना माने किसी से भी प्रेम न करना.

नीलम उदास खिलखिलाहट बिखेरती है. अनु को लगता है नीलम अभी चीख कर रो पड़ेगी. कितना कुछ भरा है इस लड़की में. उसके प्रति मन में संवेदना उभ-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रती है. उसके हाथ को स्नेह भरा स्पर्श देती बोलती है—मेरे ऊपर विश्वास रखो नीलम, मुझसे कहने में यदि तुम्हारा दुःख कुछ कम हो तो कह दो.

कुछ देर कमरे में एकदम स्तब्धता रही.—मेरी नानी वेश्या थी पर अपनी लड़की को उस कारा से निकालना चाहती थी. मां का परिचय घोष बाबू से बहुत दिनों से था. उनका छोटा-सा व्यापार भी था. वे मां से शादी कर अलग रहना चाहते थे. नानी भी उनके स्वभाव और ईमानदारी पर ऐसी रीझ गयी कि मां का विवाह उनके साथ बड़े सादे ढंग से कर दिया. मेरा जन्म विवाह से सात माह बाद हुआ. बस मैं ही सारे दुःखों की जड़ हूं, पिता का व्यवहार मां से बदल गया. यद्यपि मां का उनसे संबंध विवाह से पूर्व भी था. पर उन्हें संदेह था कि मैं उनकी संतान नहीं हूं. उन्होंने मुझे कभी भी पिता का प्यार नहीं दिया. घर में सारी सुविधाओं का प्रबंध था पर मैं उपेक्षित थी. पिता की उदासीनता के कारण मां रोती पर पिता को ऐसा लगता कि मां ने उनके साथ धोखा किया—उनकी ईमानदारी को ठेस पहुंचायी है. बड़ी होने पर घर की तनावपूर्ण स्थिति से उबरने के लिए मैंने दूसरा रास्ता निकाला. प्रेम पाने की अदम्य इच्छा से मैंने दूसरों का सहारा लिया और पंद्रहवें वर्ष में ही मैं गर्भिणी हो गयी. पिता कहे जाने वाले की उदासीनता उस दिन तोड़ कर मैं बहुत प्रसन्न हुई. क्रोध में आ कर उन्होंने मुझे बहुत पीटा. मां ने चोट पर हल्दी लगाते न जाने कितने उपाय बताये जिनसे मैं शीघ्र बरी हो जाऊं पर इस सारे माहौल से इतनी ऊब गयी थी कि एक सहारा मिलते ही मैं रोशन के साथ बंबई भाग गयी. रोशन के साथ भी मैंने वही सपने देखे थे जो कि कोई भी लड़की युवावस्था की दहलीज पर देखती है. बस आगे नहीं कह कर नीलम बिस्तरे पर औंधे मुंह गिर पड़ी.

—और आगे और भी भयानक है. मां ने खोजबीन के बाद मुझे अत्यंत दयनीय हालत में पाया. पिता मर चुके थे. और पंगु बच्चे को जनकर कभी न मां बनने की सूचना मुझे डाक्टर से मिल गयी. तुम्हें आश्चर्य हो रहा है कि मैं मां हूं—पर मुझे उस बच्चे से कुछ भी लगाव नहीं है. सिर्फ इतना ही संबंध है कि हर माह कुछ रुपये भेज देती हूं—अनु बोलो न, मैं क्या करूं? सोमेश अगले माह ही शादी करना चाहता है पर मैं . . . लगता है सोमेश एक दिन उसी तरह चला जायेगा . . . पर मुझे अकेलेपन से ही डर लगता है.

नीलम काफी रो रही थी. अनु का मन सहानुभूति से भर उठा. उसके पास बैठ कर उसका सिर धीरे-धीरे सहलाने लगी. सहानुभूतिपूर्ण स्पर्श पा कर नीलम का बांध जैसे टूट गया हो. अनु को समय का ध्यान नहीं रहा—स्कूटर की आवाज सुन कर उसकी तंद्रा टूटी—फिर आऊंगी, कह कर अनु शीघ्र चली गयी.

अनु को कमरे से निकलते सतीश ने देख लिया. क्रोध से मुंह तमतमा आया.

—फिर गयी थीं—सतीश का स्वर कठोर था.

—उसकी तबियत ठीक न थी, न चाहते हुए भी अनु बोल पड़ी.

—डाक्टर बुलाया जा सकता है, अपनी इज्जत का ध्यान नहीं, सतीश ने कहा.

—उसका दोष क्या है? मन लगाने जरा चली जाती हूं, अनु फिर बिफर पड़ी.

सतीश का स्वर ऊंचा हो गया—इसमें और वेश्या में क्या अंतर है—जो बिना प्रेम के शरीर बेचती है.

—जरा धीरे बोलो, कहती अनु रसोई घर में चली गयी. उसके कानों में 'जो बिना प्रेम के शरीर बेचती है' वाक्य हथौड़े के समान प्रहार कर रहे थे. चाय बनाते करते समय उसका मन उसके संपूर्ण अस्तित्व को अपने घेरे में घेर रहा था. उसके प्रश्नों के तानेबाने में वह उलझी हुई थी. सतीश तैयार हो कर मेज के पास बैठे थे. हाथ में रोज की तरह अखबार था. अनु ने चाय-नाश्ता ला कर रख दिया. चाय भी प्याले में बना कर अनु ने सतीश के सामने रख दी.

अनु कविता की पुस्तक निकाल कर पढ़ने लगी. आंखें महिम की लिखी पंक्ति पर अटक गयीं—'आई लव यू—अनु'. इन पंक्तियों में उसे इतना आकर्षण लगता कि देखते ही बहुत समय गुजार देती है. इस वाक्य को लिखने की उसकी बड़ी आदत थी. जहां कहीं वे दोनों बैठते महिम बातें करते हुए यह वाक्य चुपके से लिख देता—भले ही धूल से, बालू से, चाय से ही क्यों न लिखना पड़े.

रोज की दिनचर्या में अनु बहुत कुछ भूल जाना चाहती है. सतीश खा कर बैठक में चले गये. कोई मित्र आ गये हैं. काफी भिजवा कर अनु एक-एक कौर चबाती बैठक से आती आवाजें सुन रही है. चर्चा का विषय कितनी जल्दी बदल जाता है, राजनीति, साहित्य, आधुनिक चित्रकला. देवू भी दूर बैठा खा रहा है. वह पूछती है—क्यों रे—इस हफ्ते सिनेमा नहीं गया?

—नहीं बीबी जी, देवू ने दबे स्वर में कहा.

—तुझे कौन-सी ऐक्ट्रेस पसंद है, अनु ने शैतानी से पूछा.

देवू ने शरमा कर आंखें नीची कर लीं.

अनु रसोई का काम खतम कर बैडरूम में आयी. अभी तक सतीश की आवाज आ रही थी. उन लोगों की बातें खतम नहीं हुई थीं. बारजे पर खड़ी हुई—उसने देखा, नीलम खूब सजधज कर विजय के साथ बाहर जा रही है. कार में बैठ कर, अनु को देख कर हाथ हिला कर टाटा किया.

रेडियो खोल कर, एक पत्रिका ले कर अनु लेट गयी. संगीत की मधुर ध्वनि सुनते कब सो गयी उसे ध्यान नहीं रहा. रात्रि में सतीश की बलिष्ठ भुजाओं के कसाव से अनु की आंखें खुलती हैं—उसकी चीख भी सतीश पी लेता है. सतीश के अस्फुट स्वरों में उसे वही पिछला वाक्य पीछा करता लगता है. 'वेश्या . . . जो प्रेम से शरीर नहीं देती. सुविधा के लिए ही सब कुछ स्वीकारती है. . . नहीं . . . नहीं . . . वह वेश्या नहीं है. अनु को लगता है कि अंधेरे में वह बंदी है और उसे बहुत यातना दी जा रही है . . . □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

चौथा समांतर लेखक सम्मेलन : एक रिपोर्ट (२)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत २७, २८, २९, और ३० जनवरी को मद्रास तथा कालीकट में समांतर लेखकों का चौथा सम्मेलन हुआ, जिसमें हिंदी के अलावा डोगरी, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलुगु तथा मलयालम के लेखकों ने भी भाग लिया. मद्रास में हुई गोष्ठी का विवरण आप पिछले अंक में पढ़ चुके हैं.

रात साढ़े आठ की गाड़ी से सभी के टिकट कालीकट के लिए बुक्ड थे. सम्मेलन का स्थान कालीकट विश्वविद्यालय का गेस्ट हाउस था. वहां की सारी व्यवस्था कालीकट विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष डॉ. मलिक मोहम्मद ने की थी.

यद्यपि विश्वविद्यालय कालीकट में था, तथापि सब लोगों को एक स्टेशन पहले ही 'फरोक' पर उतर जाना था, क्योंकि वहां से विश्वविद्यालय पास पड़ता था.

महिलाओं के सोने का प्रबंध करने के बाद ट्रेन में ही गोष्ठी जुटी. प्रकाशन की समस्याओं को ले कर बातचीत चली और लोग इतने उत्साहित नजर आये कि लगा, सम्मेलन समाप्त होने के बाद तुरंत ही समांतर प्रकाशन का सिलसिला शुरू हो जायेगा.

इस सिलसिले में इब्राहीम शरीफ को यह काम सौंपा गया कि वह केरल में लेखकों के सहयोगी प्रकाशन की रूपरेखा का अध्ययन करें और उसी आधार पर समांतर प्रकाशन की रूपरेखा तैयार करें. गोष्ठी लगभग रात भर ही चलती रही.

* *

जिस स्थान पर कालीकट विश्वविद्यालय स्थित है, वह शहर से खासा बाहर एक रमणीक स्थान है. चारों ओर नारियल और काजू के पेड़, ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी रास्ते और खुले मैदान, दूर-दूर तक कोई बस्ती नहीं. वहां पहुंचने पर लोगों को आई. आई. टी. बंबई में हुए पहले समांतर सम्मेलन की याद हो आयी. कोई एक बजे लोग विश्वविद्यालय के गेस्टहाउस में पहुंच गये थे. थोड़ी ही देर में लोगों का सामान यथास्थान अलग-अलग कमरों में पहुंचा दिया गया. शाम चार बजे विश्वविद्यालय के ऑडिटोरियम में सम्मेलन का उद्घाटन होना था.

लोग जल्दी-जल्दी नहा-धो कर तैयार हुए और भोजन करके विश्वविद्यालय के ऑडिटोरियम की ओर चल दिये. वहां खासी भीड़ थी. महिलाएं भी काफी संख्या में उपस्थित थीं. डॉ. मलिक मोहम्मद ने विश्वविद्यालय की ओर से उपस्थित लेखकों का स्वागत किया. कालीकट में समांतर कहानी सम्मेलन को उन्होंने उत्तर और दक्षिण के साहित्यिक धरातल पर एक अपूर्व संगम की संज्ञा दी. उन्होंने कहा कि यह भावना कि हिंदी दूसरी भाषाओं को दबाना चाहती है, गलत है. हिंदी किसी प्रांत या देश के किसी भू-भाग की भाषा न हो कर पूरे भारत की भाषा है. दरअसल हिंदी ही समस्त देश की सांस्कृतिक प्रगति का प्रतीक है और इस रूप में सारे देश को एकता के सूत्र में बांध सकती है.

इसके बाद कालीकट विश्वविद्यालय के प्रो-वाइसचांसलर ने अपना उद्घाटन भाषण दिया. वह मलयालम में बोले.

तब वहां उपस्थित समांतर लेखकों की ओर से कामतानाथ ने समांतर कहानी पर अपने विचार व्यक्त किये. मुख्य विषय पर बोलने से पहले उन्होंने इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त की कि समांतर का यह चौथा सम्मेलन एक अहिंदी भाषी प्रदेश, केरल, में हो रहा है. उन्होंने कालीकट विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष डॉ. मलिक मोहम्मद के प्रति सभी उपस्थित लेखकों की ओर से आभार प्रकट किया, जिनके सहृदय प्रयास से यह सम्मेलन कालीकट में होना संभव हो सका.

प्रेमचंद, यशपाल तथा अन्य प्रगतिशीलों से ले कर मनुष्य की आंतरिक पीड़ा की बात करने वाले जैनेंद्र और अज्ञेय और तब 'नयी कहानी,' अकहानी आदि का संक्षिप्त ब्योरा प्रस्तुत करते हुए कामतानाथ ने कहा कि समांतर न तो कोई आंदोलन है और न ही कोई साहित्यिक गुटबंदी. समांतर एक प्रकार से वर्तमान हिंदी कहानी की वैचारिकता और उससे संबंधित अन्य प्रश्नों को ले कर लेखकों की सोच का एक नाम है. इसके पीछे हिंदी कहानी की पूरी परंपरा और इतिहास है, जिससे जुड़ने या कटने का प्रश्न नहीं, बल्कि उसे अध्ययन करने और समझने की आवश्यकता है. आज से कोई दसेक वर्ष पूर्व हिंदी के तब के कहानीकार अचानक अजनबी हो उठे थे. देश की वर्तमान आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक स्थिति से स्वयं को मानसिक रूप से काट कर उन्होंने कहानी को साहित्य की एक फैशनेबल विधा के रूप में खूबसूरत ड्राइंगरूमों और कहवाघरों में सजाना-बिठाना शुरू कर दिया था. उनकी कहानियों के पात्र तो अपने देश के थे, परंतु उनका दुख-दर्द, कार्य-कलाप आदि एक कृत्रिम बौद्धिक मुद्रा लिये हुए पूर्णतया अजनबी थे. उसी समय कुछ अन्य लोग कहानी को खूबसूरत स्त्रियों के अंगों-प्रत्यंगों के इर्द-गिर्द लपेटने-उघाड़ने की विलासिता पूर्ण क्रिया में व्यस्त थे. इस सारी स्थिति के बीच हिंदी के उस समय के कुछ युवा लेखकों ने कहानी को पुनः जन साधारण के निकट लाने का ही नहीं, बल्कि उसको जिंदगी के संघर्ष से जोड़ने का प्रयत्न किया. समांतर कहानी उसी का प्रतिफलन है. यह हर्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बात है कि आज सभी लोग स्वीकार करते हैं कि देश की वर्तमान स्थितियों में सच्चा साहित्य साधारण आदमी के अपनी जिंदगी की शर्तों को बेहतर बनाने के संघर्ष से अलग हट कर नहीं लिखा जा सकता, बल्कि कुछ लोग तो उससे बंदूक का काम लेने की बात करते हैं. समांतर साहित्यकार इस रोमांटिक विचारधारा से अलग जन-संघर्ष के लिए उचित मानसिकता तैयार करने की साहित्य की सही भूमिका में विश्वास करता है. और इसीलिए समांतर कहानीकार कहानी को उसकी मध्यवर्गीय मानसिकता से उबार कर सर्वहारा के निकट लाने की बात करता है.

* *

कामतानाथ के बाद इब्राहीम शरीफ माइक पर आये. हिंदी-अहिंदी भाषा के प्रश्न पर अपने विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि जिस तरह हिंदी केवल उत्तर भारत की भाषा न हो कर पूरे देश की भाषा है, उसी प्रकार मलयालम केवल केरल प्रदेश की भाषा न हो कर पूरे देश की भाषा है. किसी भी भाषा पर कभी भी कुछ खास लोगों या किसी खास प्रदेश का एकाधिकार नहीं हो सकता. भाषा महज अभिव्यक्ति का माध्यम है. वह वर्ग या वर्ण-भेद का हथियार नहीं होती. स्वयं अपना उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा कि वह आंध्र में जन्मे, दिल्ली में पढ़े और काफी समय तक केरल में हिंदी के प्राध्यापक रहे. परंतु वह जहां भी रहे, उन्होंने वहां की भाषा को अपनी मातृभाषा समझा. जहां तक लेखन का प्रश्न है, लिखना मात्र भाषा की जरूरत न हो कर अपने समय की सच्चाइयों को अभिव्यक्ति देने की कला होता है. कोई भी लेखक इस अभिव्यक्ति की सहजता के लिए किसी भी भाषा को चुन सकता है. समांतर कहानीकारों में ही कितने ऐसे हैं जिनकी मातृभाषा हिंदी नहीं है. आबिद सुरती, राम अरोड़ा, आशीष सिन्हा, दया पवार आदि इसके उदाहरण हैं. इनके अतिरिक्त यशपाल और नागर जी जैसे उदाहरण भी हिंदी में हैं. अतः अहिंदी भाषी हिंदी के लेखकों में यह भावना, कि उन्हें हिंदी लेखक के रूप में मान्यता नहीं मिलती, अनुचित है.

भाषा के प्रश्न पर ही अपनी बात आगे बढ़ाते हुए उन्होंने कहा कि अहिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी तथा हिंदी भाषी क्षेत्रों में अहिंदी भाषाओं का प्रचार वांछनीय है. इस संदर्भ में उन्होंने रवि वर्मा का नाम लिया, जो वहां उपस्थित भी थे. उन्होंने कहा कि पिछले तीन-चार दशकों से रवि वर्मा केरल में हिंदी के प्रचार का कार्य कर रहे हैं और यह उनके ही अथक प्रयत्नों का परिणाम है कि आज असंख्य लोग केरल, कर्नाटक और तमिलनाडु में हिंदी में लिखते हैं. वैसे बहुत अच्छी स्थिति यह होगी कि अहिंदी भाषी लोग हिंदी तथा हिंदी भाषी लोग किसी अन्य भाषा को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनायें. जिस दिन ऐसा होगा, उस दिन सही मायने में भाषा की छद्म दीवार टूटेगी और देश का साहित्य जन जीवन से जुड़ेगा.

* *

इसके बाद दलित साहित्य के प्रख्यात विचारक और लेखक दया पवार बोलने आये. अपने ... भाषण में उन्होंने मराठी ... रहे दलित साहित्य आंदोलन ... परिचय दिया. उन्होंने कहा ... आज समाज में केवल वर्ग-भेद ... नहीं, वर्ण-भेद भी है. देश के ... दलित इस वर्ण-भेद के ... शिकार होते चले आये हैं. ... के दलितों पर इस अत्याचार ... साथ-साथ पूंजीवादी शक्तियों ... उनका शोषण भी होता रहा ... इस मायने में, उन्होंने कहा, ... शोषण की कहानी आज के शोषण ... कहानी से अलग नहीं है. ... साहित्य इस शोषण के ... लड़ाई का एक माध्यम है. ... संघर्ष में हमारी आस्था ... और हमारी पूरी लड़ाई उस ... हाथ के खिलाफ है, जो ... हमारा शोषण करता रहता है.

समांतर साहित्य की ... करते हुए दया पवार ने कहा ... **दलित साहित्य समांतर साहित्य की एक धारा है और जिस प्रकार ... धारा कुछ दूर चल कर एक ... नदी में जा मिलती है, ... साहित्य उसी प्रकार आज समांतर साहित्य से मिल गया है!**

दया पवार के बाद ... पुष्कल ने 'समांतर वैचारिक ...' पर अपने विचार व्यक्त ... अपनी बात के शुरू में उन्होंने ... घटना का हवाला दिया ... कहा कि सुदूर उत्तर के गांव ... दक्षिण के गांव —दोनों में ... दूरी है, लेकिन मानवीय ... वेदना और संघर्ष में उत्तर ... दक्षिण के गावों में क्या अंतर ...

उन्होंने कहा कि जीवन ... समस्याएं सभी जगह एक हैं. ... इन्हीं जीवनगत समस्याओं ... हमारे सामने रखता है. वह ... के यथार्थ का चित्रण ही ... करता, बल्कि उसके ... यथार्थ के लिए जिम्मेदार ... की साजिश का भंडाफोड़ भी ... है और इस प्रकार वर्ग-संघर्ष ... तीव्र करता है. कहानी के ... समांतर कहानी आज यही ... कर रही है.

इसके बाद हिंदी तथा ...

डॉ. मलिक मोहम्मद : कालीकट वि. वि. हिंदी विभाग के अध्यक्ष और कालीकट में समांतर सम्मेलन के संयोजक

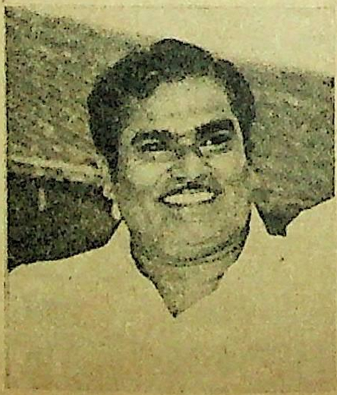

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

के विख्यात लेखक शौरिराजन ने अपने विचार रखे. उन्होंने कहा कि उनकी मातृभाषा तमिल है, परंतु अपनी रचनाशीलता के माध्यम से तथा एक जागरूक पाठक और लेखक होने के नाते वह स्वयं को जितना तमिल के निकट पाते हैं, उतना ही हिंदी के. अहिंदी प्रदेश, अहिंदी भाषा इत्यादि शब्दावली बेकार की बात लगती है. जब हमारी समस्याएं एक हैं, हमारी तकलीफें एक हैं और उनके लिए जिम्मेदार शक्तियां देश के विभिन्न भागों में अलग-अलग नहीं हैं, तब हिंदी या अन्य भाषाओं की बात कहां आती है! उन्होंने आगे कहा कि समांतर सिर्फ **हिंदी का न हो कर पूरे देश की भाषाओं और रचनाकारों का है**. उन रचनाकारों का जो वर्ग-संघर्ष में विश्वास करते हैं और उसे अपनी रचनाओं के माध्यम से तीव्र करना चाहते हैं.

* *

अंतिम वक्ता थे कमलेश्वर, जो इस सभा के अध्यक्ष भी थे. उन्होंने अपनी बात एक नये सूत्र से शुरू की. उन्होंने कहा कि इस देश के साथ कहीं कुछ गलत हो रहा है. दक्षिणपंथी ताकतों को बहुत छूट मिल गयी है. टैक्सी ड्राइवर हो या मजदूर, कुली हो या किसान, बाबू हो या टेक्नीशियन, सभी आज यह सोचने को विवश हैं कि इस गलती की शुरुआत कब और कहां से हुई. और इस सवाल से जूझता हुआ देश का सामान्य जन अपनी बहुमुखी तकलीफों को झेलता हुआ एक गलत और गलीज जिंदगी जीने के लिए मजबूर होता जा रहा है. बंबई में एक बार एक मामूली टैक्सी ड्राइवर से हुई अपनी बातचीत का हवाला देते हुए उन्होंने बताया कि वह टैक्सी ड्राइवर बरसों से उत्तर भारत में रह रहे अपने बीवी-बच्चों से मिलने नहीं जा सका, क्योंकि उसके पास इतना पैसा नहीं है कि वह इतनी लंबी यात्रा पर जा सके. अपना पेट काट कर जो भी वह बचाता है, उसे अपने घर मनीऑर्डर कर देता है. बंबई में बीवी-बच्चों को ला कर साथ रखने की उसकी सामर्थ्य नहीं है. इस पर जब उन्होंने उससे पूछा कि उसे अपना भविष्य कैसा लगता है तो पहले तो वह 'भविष्य' शब्द का अर्थ नहीं समझा. जब समझा तो बोला, भविष्य तो साहेब, घाटे का लगता है. 'घाटे का भविष्य' यानी अवमूल्यन वाला भविष्य—आज के जन साधारण की नियति की सही व्याख्या है. परंतु क्या हम कभी सोचते हैं कि इस 'घाटे के भविष्य' के लिए जिम्मेदार कौन है?....

इसके लिए जिम्मेदार है पूंजीवादी दक्षिणपंथी खेमों का बढ़ता हुआ आर्थिक शोषण! देश में जितना भी विकास हुआ है उसके खिलाफ स्वार्थवादी शक्तियों न शोषण के रास्त ईजाद कर लिये हैं और यह 'घाटे का भविष्य' उसी का परिणाम है.

इस स्थिति को सुधारने के लिए इस नागफांस को तोड़ना होगा. समांतर साहित्य इस कार्य के लिए पूरी तरह समर्पित ही नहीं, बल्कि दृढ़ संकल्प है.

लेखकों के बारे में साधारण मान्यताओं का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि अभी बहुत दिनों की बात नहीं, जब लेखक अजूबा समझा जाता था. वह बुझी आंखों वाला, नाजुक जिस्म का एक जीव हुआ करता था, जिसके कंधे पर एक चादर लटकती रहती थी और जो स्वप्निल दृष्टि से इस दुनिया को देखा करता था. प्रमचंद ने इस मान्यता को तोड़ा. शायद इसीलिए उन्हें कलम-घिस्सू (मुंशी) कहा गया. किंतु प्रेमचंद कहीं ज्यादा ईमानदार और सही लेखक थ, क्योंकि वह अपने परिवेश और उसमें जी रहे विशाल जन-समुदाय से जुड़े थे. 'नयी कहानी' ने प्रेमचंद की इस परंपरा को नये आयाम दिये. परंतु तभी हिंदी कहानी के इतिहास में एक नया दौर आया, जब कहानियां होटलों के कमरों में बंद होने लगीं. उनके पात्र, नायक और नायिकाएं, उन कमरों की दूधिया रोशनी में एक-दूसरे की बाहों में समा कर-एक दूसरे की धड़कनों के अजनबीपन को पहचानने की कोशिश में मुबतिला हो गये. कहानी के इस रूप से जन साधारण को न कुछ मिलना था, न मिला. वह इन कहानियों से बेखबर अपनी आर्थिक लड़ाइयों में जूझता रहा. आज समांतर कहानी उसकी इस लड़ाई से, जो 'घाटे के भविष्य' को एक बेहतर भविष्य में परिवर्तित करने की लड़ाई है, स्वयं को संबद्ध पाती है, बल्कि वह उनकी लड़ाई लड़ती है—साहित्य के माध्यम से. भाषा इस लड़ाई को आगे बढ़ाने में कहीं आड़े नहीं आती, बल्कि वह एक सेतु का काम करती है और तभी आज यहां हम सब हिंदी के ही लेखक नहीं, बल्कि तमिल, गुजराती, मराठी और डोगरी आदि के लेखक आप मलयालम भाषी लेखकों के बीच हैं, जो बड़ी खुशी बात है!

कोई पांच बजे गोष्ठी शुरू हुई थी. नौ बजने वाले थे. उसके बाद सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन था. सांस्कृतिक कार्यक्रम के कलाकारों को आये काफी समय हो चुका था. भीड़ भी घटने के बजाय बढ़ रही थी. यह शायद सांस्कृतिक कार्यक्रम देखने वालों की भीड़ थी. अतः यहीं पर सभा का समापन किया गया. **(क्रमशः)**

● व्यंग्य-विचार : कैलाश सेंगर

लेखनी प्रेरणालय
लेखन नगर

आ गया! आ गया!!
गोष्ठियों-सम्मेलनों का मौसम
३६% रिडक्शन सेल

हमारे यहां असफल लेखकों को जिजीविषा, संत्रास, कुण्ठा, शोषण आदि वाजिब दाम पर मिलेगा। कवियों की लेखनी के लिए पीर, टीस, चुभन, दर्द, व्यथा का जंबो स्टाक!

विशेष: 'धर्मयुग', 'सारिका', 'कादम्बिनी' के संपादकों की 'क्षमा-याचना सहित' वाली चार चिट्ठियां दिखाने पर एक कैक्टस का पौधा मुफ्त दिया जायेगा।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

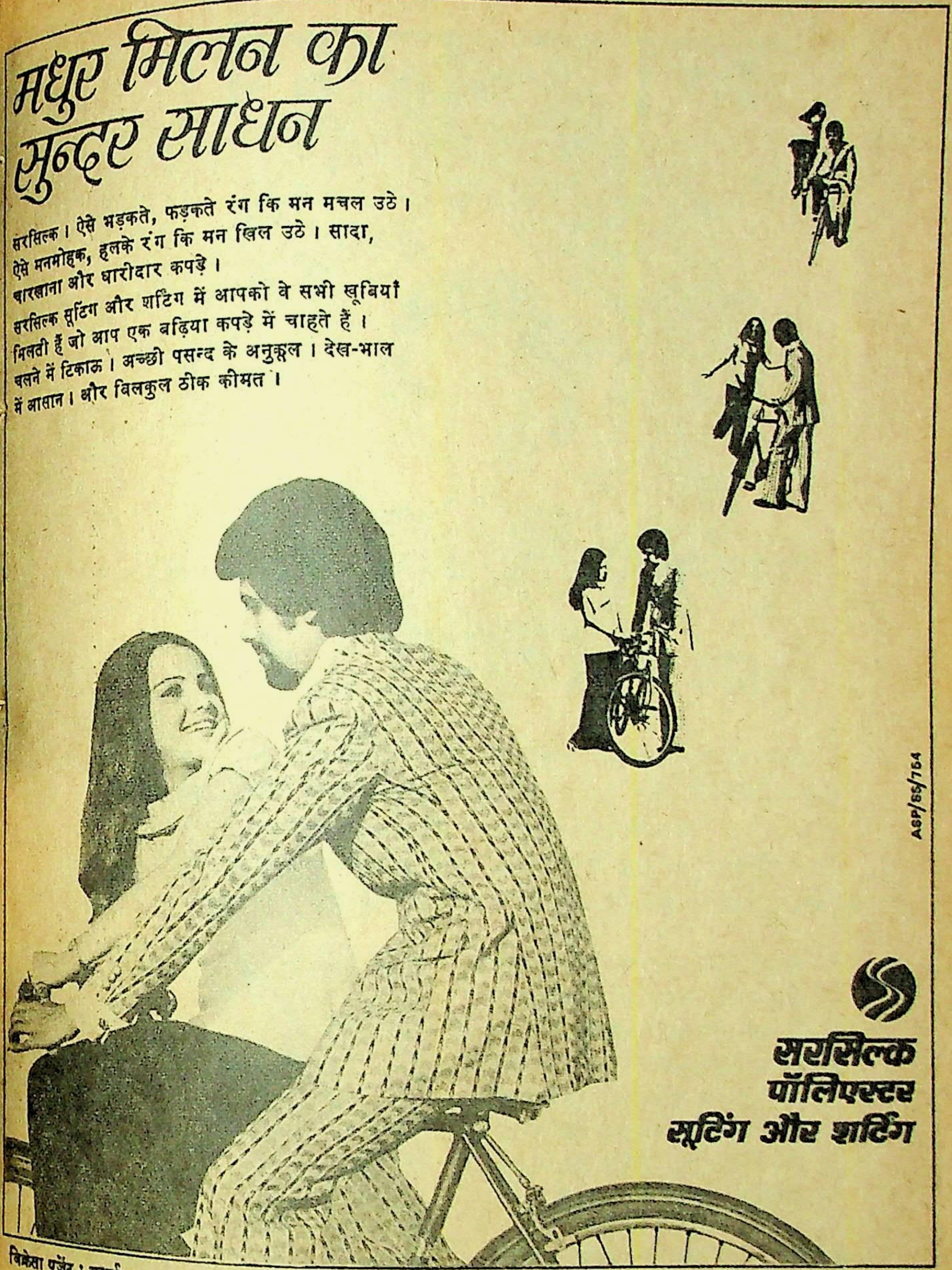

विक्रेता एजेंट : बम्बई : तुलसीदास कनोरिया एण्ड कम्पनी, पहली मंजिल, जाम्बुलवाडी (पूर्व), काल्बादेवी रोड, बम्बई। गुजरात और गोवा : डागा ब्रदर्स, १४१, मणि महल, काल्बादेवी रोड, बम्बई। मध्य प्रदेश, विदर्भ और मराठवाडा राठी एण्ड कम्पनी, १७, पाप्युलर होलसेल क्लाथमार्केट, गांधी बाग, नागपुर। दिल्ली और हरियाणा : बाम्बे ट्रेडिंग कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड, कटरा अशरफी, चाँदनी चौक, दिल्ली। राजस्थान : हरीश एण्ड कम्पनी, मेहता मार्केट, जोधपुर। पंजाब, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर : ओमेगा इंडस्टियल कारपोरेशन, कटरा आहलुवालिया, अमृतसर। उत्तर प्रदेश : कैमरोवाल ट्रेडिंग कारपोरेशन, विश्वंभर हाउस, २४/२६ प, कराची खाना, कानपुर। पश्चिम बंगाल : अश्विनी कुमार एण्ड कम्पनी, ४, इंडियन ऐक्सचेंज प्लेस, कलकत्ता। बिहार : ओरिएण्टल ऐन्टरप्राइजिज एण्ड एजन्सीज, इंडिया मशीनरी बिल्डिंग (दूसरी मंजिल), ऐग्जीबिशन रोड, पटना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरा मुस्कुराइये !

'खूबसूरती कैद करने की कला' कोई माधुरी से सीखे !

कौन नहीं चाहता किसी खूबसूरत पल को कैद करना...... किसी हसीन याद को शीशे में उतार लेना ? इसीलिए माधुरी में आपके लिए फिल्मी दुनिया के जाने माने फोटोग्राफर श्री प्रेम सागर द्वारा फोटोग्राफी पर एक विशेष स्तंभ होता है बिलकुल आसान भाषा में. घर बैठे फोटोग्राफी सीखिये और हँसते क्षणों को हमेशा के लिए कैद कर लीजिये.

माधुरी, सिने संसार की सबसे सुरुचिपूर्ण और सुलझे विचारों को सुलझे हुए ढंग से पेश करने वाली साहित्यिक पत्रिका होने के साथ-साथ सिने संसार का दर्पण और सितारों और दर्शकों के लिए मार्गदर्शक भी है. माधुरी में सितारों की ज़िंदगी के दिलचस्प पहलू, संगीत, फिल्म लेखन, संपादन, संकलन क्या नहीं है ।

★ आर्ट पेपर पर कलात्मक मुखपृष्ठ
★ अधिक सामग्री

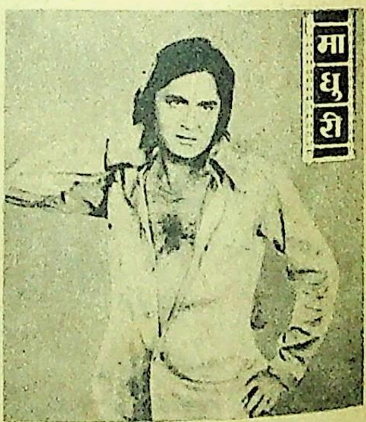

टाइम्स ऑफ इंडिया प्रकाशन

ARMS-BC/M-56-800-HN

फिल्म पत्रिकाओं की रानी माधुरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एयर-इंडिया प्रस्तुत करती हैं सप्ताह में पैंसठ उड़ानें—५ महाद्वीपों के लिए.

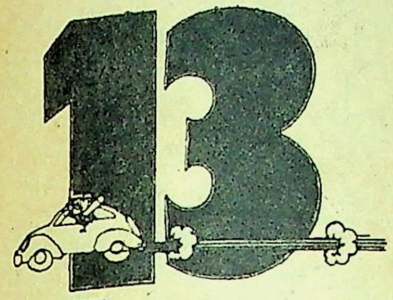

यूरोप

यूरोप के लिए सप्ताह में १३ उड़ानें

लंदन? नौ ७४७ विमानों को आपका इंतजार है. इनमें से तीन, शुक्रवार, शनिवार और मंगलवार को, तेज गतिवाले हैं. अन्य छह में आपको रोम, पेरिस या फ्रैंकफर्ट हो कर जाने की सुविधा मिलती है. इसके अलावा दो ७०७ विमान जिनेवा हो कर. मॉस्को? दो ७०७ विमान.

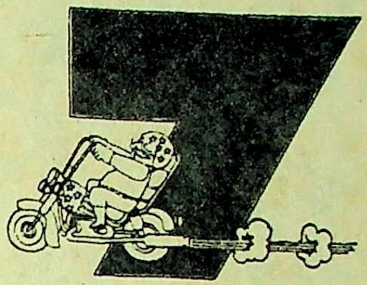

न्यू यॉर्क

न्यू यॉर्क के लिए सप्ताह में ७ उड़ानें

हर दिन ७४७ विमान की एक उड़ान. मध्य पूर्व और यूरोप होते हुए. हमारे विशेष एक्सकर्शन फ़ेयर के अन्तर्गत न्यू यॉर्क जा कर वापस लौटने का किराया आम तौर पर लगनेवाले एकतरफ़ा किराये से भी कम पड़ता है.

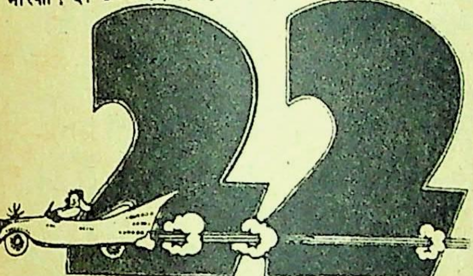

मध्य पूर्व

मध्य पूर्व के लिए सप्ताह में २२ उड़ानें

बेरूत? पाँच ७४७ विमान उड़ान भरने को तैयार. कुवैत? चार ७४७ तथा दो ७०७ विमानों में से आप मनपसंद चुनाव कर सकते हैं. दुबई के लिए चार ७०७ विमानों में से कोईसा भी चुनिए. बहरैन तथा मस्कत के लिए तीन उड़ानें तथा आबू धाबी, कैरो और तेहरान में से प्रत्येक के लिए दो उड़ानें. इसके अलावा अदन, दौहा या दहरान में से प्रत्येक के लिए एक ७०७ विमान.

साथ ही हर सप्ताह :

६ उड़ानें
जापान के लिए हौंग कौंग हो कर—
४ टोकियो के लिए
२ ओसाका के लिए. १० उड़ानें
दक्षिण पूर्व एशिया के लिए—
६ बैंकॉक के लिए और
४ सिंगापुर के लिए.
२ उड़ानें
ऑस्ट्रेलिया के लिए
३ उड़ानें
पूर्व अफ्रीका के लिए
२ उड़ानें
मॉरिशस के लिए.

एयर-इंडिया
आपकी मनपसंद एयरलाईन

AI. 9084

बेनेट कोलमन एंड कंपनी लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए श्रीकृष्ण गोविंद जोशी द्वारा टाइम्स आफ इंडिया प्रेस, बंबई में मुद्रित व प्रकाशित. पो बाक्स २१३, बंबई—१; दिल्ली आफिस : ७ बहादुरशाह जफर मार्ग, नयी दिल्ली—१; कलकत्ता आफिस : १३ १ और १३/२ गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट. लंदन आफिस : ३०-ए, [illegible] रोड, सडबरी, वेम्बले, मिडिलसेक्स, यू. के.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पंजीयत सं. एम. एच. दक्षिण बम्बई-२९९

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

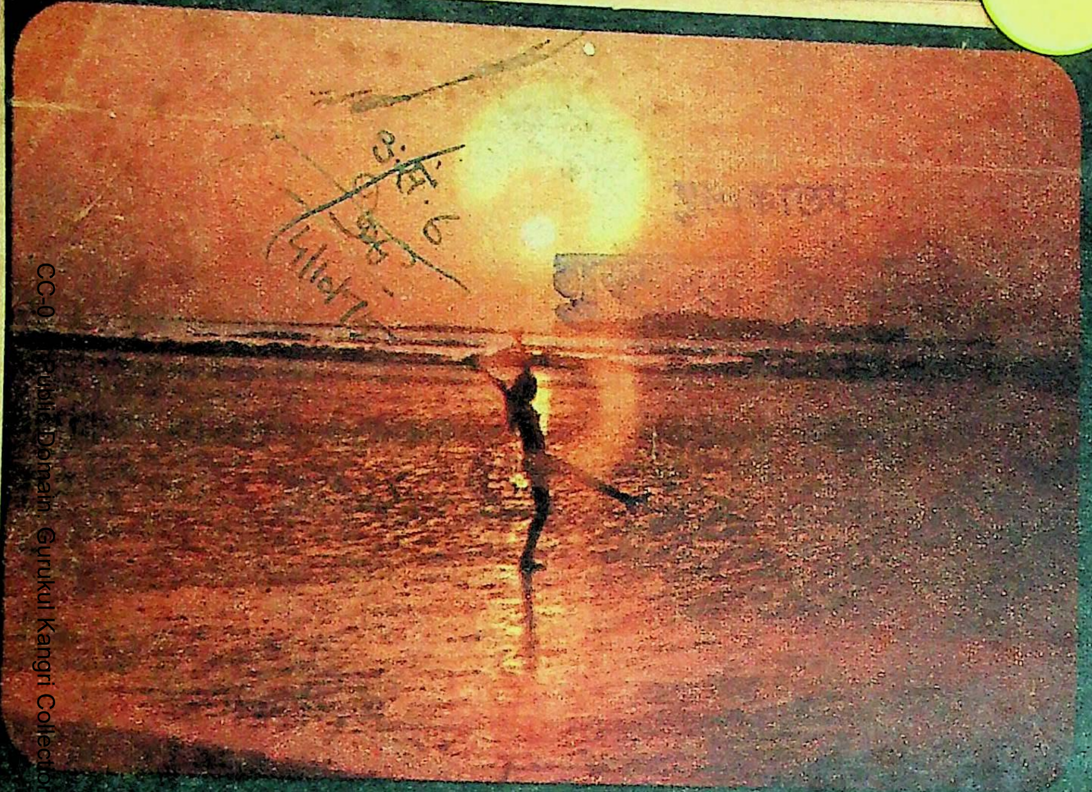

जी में आता है कभी कभी
साहिल हो समन्दर का -
तन्हाई हो
शाखों को छेड़ती हुई साँझ की धूप
साहिल पे उतर आई हो
और हम - दुनिया के एंजोफ़िक्र से दूर
कपड़ों की क़ैद से आज़ाद
चले जाए बहुत दूर जहाँ
मिलते हैं ज़मीनो आसमाँ
लहरों को छेड़ती हुई बादे शमीम
बदन से खेलती हुई बादे शमीम
लिपट जाए हमसे
उनके ख़यालों की तरह!

नवसारी शर्टिंग्स
अनोखा एहसास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar